

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182290

UNIVERSAL
LIBRARY

UP-67-11-1-68-5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No H 81 Accession No H 4078

Author ^{K 53 P}
कोहली, सीता राम

Title फलहतामा गुरु श्वाकसा जी का

This book should be returned on or before the date last marked below

फतहनामा
गुरु खालसा जी का

सम्पादक
प्रो० सीता राम कोहली
रिटायर्ड प्रिंसिपल
गवर्नमेंट कालेज, रोहतक

होशिआरपुर
विश्वेश्वरानन्द-वैदिक-संस्थान

१९५९

सर्वोधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण

२०१५ (1959)

मूल्य ₹.६०



Printed at
The V. V. R. Institute Press
and published for
The V. V. Research Institute
By
DEV DATTA Shastri, V.B.,
at Hoshiarpur (India)

प्रकाशक तथा मुद्रक—
देवदत्त शास्त्री विद्याभास्कर
विरवेक्षरानन्द वैदिक-शोध-संस्
प्रेस, साधु आश्रम,
होशियारपुर (भारत)

महाराजा रणजीतसिंह
(१३ नवम्बर १७८०-१७ जून १८३९)



[मैसर्स आत्माराम एण्ड सन्स, देहली के सौजन्य से]

प्रकाशकीय

प्रोफेसर सीताराम कोहली को पंजाब यूनीवर्सिटी ने सन् १९१५ में महाराजा रणजीतसिंह की सरकार के रिकार्डों (Records) को ठीक करने के लिए एलेक्जेंडरा रिसर्चस्कालर नियुक्त किया था। ये रिकार्ड खालसा राज्य के समाप्त होने पर अंग्रेजों ने अपने अधिकार में ले लिये थे और सन् ७० वर्ष के दीर्घ-काल तक ये देखे बिना ही पड़े रहे। श्री कोहली जी ने चार वर्ष के कठिन परिश्रम से इस बहुमूल्य ऐतिहासिक सामग्री को क्रम-बद्ध किया तथा प्रत्येक विभाग के पत्रों की टिप्पणसहित सूची तैयार की जो कि कुछ समय के बाद 'खालसा दरबार रिकार्डज़' के नाम से दो भागों में प्रकाशित हुई।

इन मौलिक अभिलेखों (पत्रों) का अध्ययन करके श्री कोहली जी ने हिन्दी भाषा में महाराजा रणजीतसिंह जी का जीवन तैयार किया, जिसका परिवर्तित तथा परिवर्धित दूसरा संस्करण हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहबाद ने गत वर्ष प्रकाशित किया है। इन्हीं लेख-पत्रों के आधार पर योग्य लेखक ने अन्वेषण करते हुए खालसा सेना-सम्बन्धी बहुत से लेख प्रकाशित कराये थे।

प्रस्तुत ग्रन्थ—'फतहनामा गुरु खालसा जी का' ऐतिहासिक दृष्टिकोण से महाराजा रणजीतसिंह के सरकारी लेख-पत्रों के समाप्त ही है। इस ग्रन्थ के रचयिता कवि गणेशदास महाराजा के दरबारी कवि थे। उन्होंने अखि-देखी, कानो-सुनी तथा स्वयं प्रमाणित की हुई घटनाओं का कविता का रूप दिया है। किन्हीं घटनाओं पर तो कवि को यह रचना अधिक ही प्रकाश डालती

है। कवि के इस काव्य से सामाजिक प्रेम तथा देश-भक्ति की जो धारा बहती दिख पड़ती है, उससे प्रतीत होता है कि कवि गणेशदास ने अपने पंजाबी वीर भाईयो की वीरता, जो कि उन्होंने पठानों के साथ तीनो युद्धों में दिखलाई थी, से प्रेरित होकर ही यह काव्य लिखा था। कवि का भाव यह था कि उन खालसा, राजपूत, ब्राह्मण तथा अन्य वीरों की शूरता लेखनी-बद्ध हो जाए, जिन्होंने इन युद्धों में भाग लिया था।

यह कविता एक राष्ट्रीय सम्पत्ति है, जिसको भावी पीढ़िया मान और गौरव की दृष्टि से देखेंगी। विद्वान् सम्पादक ने इसी भावना को सम्मुख रखते हुए पूर्ण मुद्रित गुरुमुखी सस्करण से हिन्दी रूपान्तर किया है कि हिन्दी ससार भी इससे लाभ उठा सके—इसी आशा से इसे प्रकाशित किया जाता है। आशा है, अपनी उत्कृष्टता से यह जनता के हृदय में अपना स्थान बना लेगा।

अधिष्ठाता,
विद्वेश्वरानन्द प्रकाशन,
साधु आश्रम, होशियारपुर।

समर्पण

अपनी धर्मपत्नी श्रीमती लीलावती बी. ए.

को

जिन्हें अपने विद्यार्थी-जीवन से ही सिख इतिहास से प्रेम
रहा है और जो मेरे जीवन में एक भारी सहारा हैं ।

श्रीता राम

विषय-सूची



विषय	पृष्ठ
प्रकाशकीय	तीन
निवेदन	नौ
मुख्य घटनाएँ	ग्यारह
फुट नोटों में दिए गए अक्षरों की व्याख्या	बारह
शुद्धि-पत्र	तेरह
मुख-बन्ध	१
भूमिका	१५
(अ) महाराजा रणजीतसिंह का संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त	१५
(आ) कवि गणेशदास और उनकी रचना	३०
मुलतान-युद्ध वचनारम्भ	४५
„ „ मूल-पाठ	५६
पेशावर-युद्ध-१ वचनारम्भ	१३६
„ „ „ मूलपाठ	१५१
पेशावर-युद्ध-२ वचनारम्भ	१६१
„ „ „ मूलपाठ	१६८

परिशिष्ट—

सूची नं. १-२	पंजाब सरकार का आय और व्यय	२२३-२२४
सूची नं. ३-४	सेना की संख्या तथा उनके वेतन	२२५-२२६
सूची नं. ५	फौजी अफसरों का संक्षिप्त परिचय	२२७
सूची नं. ६	यूरोपियन कर्मचारियों के नाम और वेतन	२३३
सूची नं. ७	पुस्तक-सूची-जिन का विवरण पाद-टिप्पणियों में दिया है	२४०

निवेदन

छः साल पहले मैंने इस 'फतेहनामा' का मूल पंजाबी संस्करण प्रकाशित किया था। उस समय की तरह आज भी भारतीय पाठकों की सेवा में इसका हिन्दी-संस्करण भेंट करते हुए मेरा उद्देश्य यही है कि कवि गणेशदास की यह राष्ट्रीय महत्त्व की गौरवशाली और प्रेरणादायी कृति अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाई जाय।

'फतेहनामा' की पंक्तियाँ देश-भक्ति और सामाजिक प्रेम की भावना से ओतप्रोत हैं, जिससे यह अनुमान होता है कि अपने देश पंजाब में एक स्वतन्त्र पंजाबी-राज्य स्थापित होते देख कर कवि गणेशदास को नई प्रेरणा मिली थी। यह स्वाभाविक ही था, क्योंकि गत ८०० वर्षों से पंजाब की भूमि पर कभी तुर्कों का, कभी मुगलों का तो कभी काबुल के अफगानों का आधिपत्य रहा था। इस दीर्घ-काल में पंजाबियों को एक बार भी स्वतन्त्रता के दर्शन नहीं हुए थे। खालसा सरदारों के प्रयत्नों से पंजाब का कुछ भाग, कुछ दिन ही पहले विदेशियों से स्वतन्त्र हुआ था, लेकिन अधिकांश भाग अभी भी अफगानों के अधिकार में था। दुर्भाग्य से अफगानों के हाथ से जिस इलाके को इन सरदारों ने छीन लिया था, उसे आपस में बांट कर उन्होंने अपनी सगठित शक्ति को ही क्षीण कर डाला था। यह बिल्कुल सम्भव था कि काबुल का कोई नरेश इस परिस्थिति का लाभ उठा कर खालसा को पुनः आ दवाता या अंग्रेज़, जो उस समय तक दिल्ली तक पहुँच गये थे, आगे पंजाब में भी घुस आते। इस खतरे का अनुभव करते हुए १६ वर्ष के पंजाबी सपूत खालसा रणजीतसिंह ने आगे बढ़ कर अपने पंजाबी वीरों में स्वतन्त्रता की भावना को पुनः जगाया, जिससे प्रेरित होकर वे पंजाब के शेष भाग को भी अफगानों के आधिपत्य से मुक्त करने के लिए कटिबद्ध हो गये और १५ वर्ष के स्वल्प-काल में ही वे इस महान् कार्य को पूरा करने में सफल भी

हुए। कसूर, मुलतान, मनकेरा, डेरा इसमाइल खॉ, पेशावर और काश्मीर की पठानी रियासते क्रमशः पराजित होती चली गई। शताब्दियों के बाद विजय, सफलता और शौर्य के इस अटूट क्रम ने समस्त पंजाबी जनता में नये प्राण फूक दिये, तथा उसकी आत्मा में नया उत्साह, उत्साह और आत्म-गौरव पैदा कर दिया। कवि गणेशदास की कृति में इन भावनाओं की प्रतिध्वनि ही सुनाई देती है।

कवि गणेशदास ने इन में से केवल तीन युद्धों का ही वर्णन किया है— मुलतान, पेशावर और खलीफा सैयद अहमद के उपद्रव से सम्बन्धित युद्धों का। यह वर्णन अत्यन्त सजीव और सविस्तर है। इन युद्धों में भाग लेने वाले अफसरो और सैनिकों में से जिसने भी विशेष शौर्य और वीरता का परिचय दिया था, उसके वीर-कृत्यों का उल्लेख कवि ने अत्यन्त मार्मिक ढंग से किया है। 'फतेहनामा' में यदि मिश्र दीवानचन्द, दीवान रामदयाल, सरदार हरीसिंह नलुवा, राजा सुचेतसिंह और जमादार खुशहालसिंह आदि सैनिक-अधिकारियों की प्रशंसा है, तो बाबा फूलासिंह, साधूसिंह निहग, डोगरा मिया लामसिंह, फतेहसिंह दत्त, हरदाससिंह बनिया और निधानसिंह पंज-हत्था भी अपनी अद्वितीय वीरता के कारण कवि की प्रशंसा के पात्र बने हैं। इन सभी योद्धाओं के नाम कवि गणेशदास ने अत्यन्त सजीव और मार्मिक शक्तियों में अंकित किये हैं, ताकि आने वाली पीढ़ियों इन पूर्वजों की शूरता पर गर्व कर सकें। इन सूरमाओं की बदौलत ही पंजाब को पुनः स्वतन्त्रता प्राप्त हुई थी। इन की गौरव-गाथा के राष्ट्रीय महत्त्व को ध्यान में रख कर ही मैंने कवि गणेशदास की इस कृति का हिन्दी-संस्करण तैयार किया है, ताकि केवल पंजाबी पाठकों तक ही इस रचना का प्रसार सीमित न रहे।

मॉडल टाउन

रोहतक

३०, दिसम्बर १९५८.

सीता राम कोहली

मुख्य घटनाएँ

घटना		वर्ष
दल खालसा की स्थापना	...	१७४८ ई०
घल्लू घारा	...	१७६२ ,,
खालसा राज्य की स्थापना	...	१७६४ ,,
रणजीतसिंह का जन्म	... १३ नवंबर,	१७८० ,,
लाहौर पर अधिकार	...	१७६६ ,,
सिक्का चलाना	...	१८०१ ,,
अमृतसर की विजय	...	१८०२ ,,
गुजरात की विजय	.	१८०७ ,,
कसूर रियासत पर अधिकार	.	१८०७ ,,
अंग्रेजों के साथ सतलुज नदी का संधि द्वारा सीमा नियत होना	.	२५ अप्रैल, १८०६ ,,
कांगड़ा दुर्ग पर अधिकार		१८०६ ,,
अटक के दुर्ग पर अधिकार	...	१८१३ ,,
खुशाब, साहीवाल, मिट्टा टिवाना और भंग रियासतों की विजय	.	१८१०-१६ ,,
मुलतान पर अधिकार	...	१८१८ ,,
काश्मीर पर अधिकार	...	१८१६ ,,
मनकेरा रियासत पर अधिकार	.	१८२१ ,,
पेशावर पर अधिकार	..	१८२३ ,,
बन्तूरा और इलार्ड की नियुक्ति	..	१८२२ ,,
सैयद अहमद का विद्रोह	...	१८२७-३१ ,,
लाहौर राज्य में पेशावर का सम्मिलित होना		१८३४ ,,
लहाख की विजय	...	१८३४-३५ ,,
रणजीतसिंह की मृत्यु	...	२७ जून, १८३६ ,,

फुट नोटों में दिये गये अक्षरों की व्याख्या

ख. द. रि.

खालसा दरबार रिकार्डज ! इस में महाराजा रणजीतसिंह तथा उसके उत्तराधिकारियों के शासन-काल के सब सरकारी दफतरों के लेख-पत्र सम्मिलित हैं। ये रिकार्डज राज्य समाप्त होने पर अंग्रेजों ने अपने अधिकार में ले लिये थे। विस्तार के लिए देखो सूची नं. ५।

ज. न.

जफरनामा रणजीतसिंह, दीवान अमरनाथ कृत। देखो सूची नं ५।

-सोहनलाल. द.

द. से भाव दफतर है, सोहनलाल ने अपनी पुस्तक के प्रत्येक भाग को 'दफतर' शब्द से संकेत कर रखा है, विस्तार के लिए सूची नं. ५ देखें।

ल. मि.

सर लैपल मिफन की पुस्तक 'पंजाब चीफ्स', लाहौर १८६५, से भाव है।

पं०

पंजाबी-भाषा के शब्द

फ.

फारसी भाषा के शब्द

फ्रां.

फ्रांसीसी भाषा के शब्द

अंग्र:

अंग्रेजी भाषा के शब्द।

शुद्धि-पत्र

[निम्नलिखित अशुद्धियों के अतिरिक्त फुटनोटों में कई एक स्थान पर परिशिष्ट नं. १ या सूची नं. १ लिखा मिलेगा उसे सूची नं. ५ पढ़िये]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४	फुटनोट १	१८१६ ई०	१८१८ ई०
८०	,, २	सूची नं. ३	सूची नं. ५
६७	दोहा ६२	दोनी	दीनो
११३	अन्तिम	अध्याय नं. २	अध्याय नं. ५
१२१	फुटनोट १	नं. २१ अध्याय २	नं. ३५
१३५	,, ,	जिलद पृष्ठ ६३	जिलद २ पृष्ठ ६३
१७६	,, ,	द. पृष्ठ २६८ तथा ३४३	द. २ पृष्ठ २६८-३४३
१८०	,, ३	चार चारी	चार यारी
२२३	पंक्ति २४	३,२१,३६,०३२ रु.	३,०१,३६,०३२ रु.
२२४	,, ११	६,६७,००० रु.	३,६६,००० रु.
२२४	,, २०	३३,७०,३०० रु.	४४,५०,३०० रु.

फतहनामा गुरु खालसा जी का

मुखबंध

[यह मुखबंध पंजाबी संस्करण के लिए माननीय भाई वीरसिंह जी ने लिख कर मेरा प्रोत्साहन किया था। उसी का शुद्ध हिन्दी अनुवाद यहां दिया गया है।]

इस पुस्तक का नाम है “फतहनामा गुरु खालसा जी का” इस के रचियता का नाम है श्री गणेशदास जी। यह ग्रंथ महाराजा रणजीतसिंह के समय का लिखा हुआ प्रमाणित होता है। कारण यह कि लेखक की वर्णन-शैली, और घटनाओं तथा स्थानों के नामों का व्योरा ऐसा है कि मानो लेखक उनके घटनाकाल में आप विद्यमान हैं और अपनी आंखों देखा वृत्तान्त लिख रहा है। पर इस के सम्पादक महोदय का अनुमान है कि यह फतहनामा सन् १८३१ ई० से पूर्व ही लिखा गया था। (देखिए इसी पुस्तक का पृष्ठ ३५)।

इस बात का कुछ पता नहीं कि श्री गणेशदास कौन थे, किस माता के सपुत्र थे और किस सुयोग्य पिता ने ऐसे लेखक को जन्म दिया था? उनके काव्य की जिसे वे “पिंगल” कह कर पुकारते हैं, वर्णन शैली ऐसी नपी-तुली है, मानो वे कोई यथार्थ इतिहास लिख रहे हैं। सौभाग्य की बात है कि इस पुस्तक की एक पाण्डुलिपि सुयोग्य हाथों में पड़ गई। इसी से आज यह हमें उपलब्ध हो रही है।

भूमिका पढ़ने से पता चलता है कि यह बहुमूल्य वस्तु सम्पादक महोदय के हाथों में पड़ जाने के बाद फिर लुप्त हो गई। परन्तु वह अपना एक ऐसा रूप छोड़ गई जो बीस-पच्चीस वर्ष पड़े रहने के पश्चात् शीतकाल में बर्फ के नीचे दबे हुए उस गेहूँ की भान्ति, जो वसन्त ऋतु के आगमन के साथ ही निसर उठता है, पंजाब के सपुत्रों के विद्या-उपवन में उग पड़ा है।

यह काव्य पुस्तक के रूप में केवल प्रकाशित ही नहीं हो रहा, बल्कि पूरी तरह प्रफुल्लित हो कर निकल रहा है। इससे इसकी सचाई को चार चान्द लग गए हैं। सत्य तो सदैव सत्य ही होता है। उसे कोई थोड़ा सत्य या अधिक सत्य क्या बनायगा। परन्तु कविता के आवरण में, चाहे वह आवरण तितली के पखों के समान ही पतला क्यों न हो, इसके ढक जाने के कारण इस के तत्व का मूल्य कम हो आंका जाता है। कारण यह कि छंदों में बंधी और अलंकारों से विभूषित रचना की कुछ आलोचक उतावलेपन में कथा, कहानी, उपन्यास अथवा काव्योक्ति इत्यादि का लेबल लगाकर पुस्तकालय की अलमारी में ही रख दिया करते हैं। सौभाग्य से गणेशदास जी की कृति इतिहास के एक ऐसे विद्वान् के हाथ आ गई है जिन्हें ऐतिहासिक ज्ञान में बड़ी प्रवीणता प्राप्त है, अर्थात् श्री सीताराम जी कोहली ने इस फतहनामे का सम्पादन किया है। तीस वर्ष हुए महाराजा रणजीतसिंह के राज्य के सरकारी हस्तलेख, जिन्हें अब ऐतिहासिक रिकार्ड कहना चाहिए, सरकार की ओर से आपको सपुर्द किए गए थे, ताकि वे उन्हें पढ़ कर और पूर्वापर संबंध मिला कर इनका ऐतिहासिक मूल्य आँके और घटनाएँ खोजें। इस महती सेवा को आपने भली भाँति निभाया था। इतना दीर्घकाल-व्यापी गम्भीर ऐतिहासिक अध्ययन और ज्ञान से संपन्न होने के कारण जब आप ने इस पुस्तक को अपने हाथों में लिया तो इस के साथ भी पूरा न्याय किया। आपने लंबा समय और भारी परिश्रम लगाकर पूरी साहित्यिक खोज की और इस पुस्तक का सम्पादन किया। संपादन ऐसी सुयोग्यता से किया है कि गणेश दास की रचना के लिए किसी और प्राक्कथन इत्यादि की आवश्यकता ही नहीं रह गई। फिर प्रिंसिपल जोधसिंह जी के इच्छा प्रकट करने पर मैंने ये कतिपय पंक्तियाँ लिखी और अपनी खुशी से लिखी है, ताकि इस सुन्दर कार्य की यथायोग्य प्रशंसा की जाय जिस का कि यह परिश्रम अधिकारी है।

गणेशदास जी ने अपनी रचना काव्य-छन्दों में की है जो कि किसी

किसी समय पर तोल में कम या अधिक हो जाते हैं, परन्तु छन्दों की रवानी, यदि ध्यान से पढ़ा जाय, तो चलती रहती है। आपने काव्य के कई रंग तथा कई छन्द प्रयोग किये हैं, परन्तु घटनाओं को सत्य-तुला से नीचे नहीं होने दिया।

उस समय गद्य लिखने का रिवाज कम था। अधिक तर विद्वत्ता कविता में लिखने पर ही समझी जाती थी। इसी लिये गणेशदास जी ने भी इसी पद्धति को अपनाया। घटनाओं की सत्यता को श्री कोहली जी ने लगभग प्रत्येक अवसर पर ऐतिहासिक प्रमाणों द्वारा सत्य सिद्ध कर दिखलाया है। आपने समकालीन और पहले के इतिहासकारों के लेखों के प्रमाण देकर सत्यता को पुष्ट किया है। इसी लिये गणेशदास जी की रचना बहुत मूल्यवान् हो गई है। इस में कई एक ऐसी घटनाओं और नामों का उल्लेख है, जो केवल इसी में मिलते हैं, क्योंकि इसके दूसरे लेख तथा घटनाएँ सच्ची प्रमाणित हुई हैं, इसलिए इन के भी सत्य होने का विश्वास होता है। इस प्रकार इतिहास को नई सामग्री मिल जाती है। फिर इस लेखक की सत्यता इस बात से भी प्रकट होती है कि यह लिख तो सिख-इतिहास रहा है और विरोधी पठानों के साथ टकरा रही है तो भी जहाँ कहीं पठानों ने शूरता दिखलाई है, या वे प्रशंसा के पात्र बने हैं वहाँ इस लेखक ने पक्षपात की कृपणता से काम नहीं लिया, वरन् हृदय की विशालता से विरोधियों के शौर्य की प्रशंसा भी की है। यहाँ तक कि जिस समय उसके मन ने चाहा है कि मरणासन्न विरोधी का वीरता के साथ निभाया हुआ उस का अपना कर्तव्य उसे स्वर्ग का अधिकारी बनाता है, तो उस समय कवि की काव्य-सरस्वती चमक उठती है और वह उसे स्वर्ग में भेजकर ही छोड़ता है। इसी प्रकार जब जब भी सिखों को हार और क्षति हुई है उसने उसे छिपाने का कभी यत्न नहीं किया।

कई बातें ऐसी हैं जो इस फतहनामे में नहीं मिलती हैं या कई घटनाओं पर इस से अधिक प्रकाश पड़ता है। उदाहरणार्थ—जहाँ सिख-धर्म ने दूसरे सुधार किए, वहाँ स्त्री जाति को उनकी निम्नस्थिति के गर्त से निकाल

ऊंचा उठाया है। इस फतहनामे से उसकी एक आध हुई-बीती की क्रियात्मक वानगी दीख पड़ती है।

सिख धर्म के प्रवर्तक श्री गुरु नानक देव जी ने अपने सुवचनों द्वारा स्त्री जाति को उसकी पतित अवस्था से उठा कर अपने जीवन-काल में ही, ऊंचा कर दिया था। उनके समय के पश्चात् स्त्रियां सिख समाज में सम्मानित होती रहीं और वे पुरुष की 'वामा' होने के स्थान में उसका दाहिना हाथ बन कर उसका साथ देती रही।

इतिहास, ऐतिह्य और गीतों में ऐसी घटनाएँ मिलती हैं जिन से पता चलता है कि सिख नारियाँ न केवल सामाजिक और धार्मिक कामों में ही, वरन् नीति-मण्डलों और कई बार तो युद्ध-क्षेत्रों में भी बराबर भाग लेती रही हैं। इस फतहनामे से एक और बात पर भी प्रकाश पड़ता है। वह यह कि महाराजा रणजीतसिंह की अपनी पटरानी ने सेना के साथ जाकर मुलतान युद्ध में भाग लिया था। जब महाराजा ने मुलतान पर चढ़ाई की तैयारी की और अपने युवराज खड्गसिंह को इस अभियान का नेतृत्व सौंपा तो उन्होंने बड़े बड़े योद्धाओं और युद्ध-विद्या-विशारद सरदारों को उसके साथ किया था। इतना होने पर भी महाराजा ने इस राजकुमार की माता रानी दातारकौर* को भी इस सेना के साथ भेजा था।

मुलतान पर चढ़ाई कोई सरल काम नहीं था। मुकाबले पर पठान दल बहुत शक्तिशाली था। मुजफ्फर खाँ भी एक अनुभवी तथा वीर योद्धा था। ऐसी भयानक लड़ाई में पटरानी का साथ जाना आज कल उदासीनता की दृष्टि से देखा जायगा, कदाचित् कई इसे मूढ़ता भी कहे, परन्तु महारानी का साथ जाना और महाराज का उसे भेजना दोनों कार्य ठीक थे। उसे

* यह देवी सरदार रणसिंह नकई की सुपुत्री और युवराज खड्गसिंह की माता होने के कारण पटरानी की पदवी रखती थी। कहते हैं, इस रानी का दूसरा नाम राजकौर भी था। इस वीर स्त्री को नक्के प्रान्त की होने के कारण "नकैण" भी पुकारते थे।

साथ भेजने का लाभ यह हुआ कि महारानी युद्ध में अपने पति की भांति पूरा भाग लेती रही। श्री गणेशदास जी रानी के इस प्रकार साथ जाने के विषय में लिखते हैं :—

और सो मात दितार कौर दातार बड़ी

सो भी सग सिधाए ।

मुलतान युद्ध अध्याय १, १४

यह रानी केवल दर्शनी हुई बदनकर ही साथ नहीं गई थी। वह समय समय पर संग्राम में भी भाग लेती थी। एक अवसर पर, जबकि लड़ाई का रंग हार की ओर रुख कर रहा था, रानी ने उच्चाधिकारियों को बुलाकर आदेश दिया था, जैसा कि गणेशदास जी लिखते हैं।

मुलतान युद्ध अध्याय ४—

कवित्त—पादशाह की राणी, तार कौर॥ मन जाणी,
 सो बुलाय कहे बाणी, बैठी सभा को लगाय के,
 शकरदास को बुलायो, सो भवानीदास आयो,
 दिलबाग सदवायो, कही बात समभाय के ।
 राधाराम, हरमुखराय, सरदारीमल्ल,
 सभे रल आए चल, बैठे छुव छायके ॥
 काहन सिंह हटू पास, कहे सुनो अरदास,
 तुम आज्ञा होय जास, करो सोई चित लायके ॥१०॥

कवित्त—पूछत प्रधान, कहे मन अनुमान,
 मारे किला जैसु तान, कहे ऐसा ही उपाय को ।

* यह केवल छन्दों की मात्रा की दृष्टि से लिखा है। यह रानी नकैण नाम से भी अभिहित होती थी। अमृतसर कसेरियों बाजार में इसकी एक निजी हवेली थी। यह रानी नकैण की हवेली कहलाती थी। जिसे अंग्रेजों ने पंजाब पर अधिकार करने के पश्चात् ईसाइयों को दे दिया था और उस में वर्षों तक मिशन स्कूल चलता रहा। अन्त में मिशनरी यह ऐतिहासिक स्थान नगर के व्यापारियों के पास बेच गए।

आगे मन्तरी, बखान, सुनो बीबी घर ध्यान,
 मारो तोपों बहुत जान, ढाए कन्ध करो राह को ।
 बरबण्ड सिंह* को बुलाय, कह्यो चढो तुम धाय,
 अतरसिंह† सो रिसाय मार तोपाहुँ चलाय को ।
 देवीसिंह मनुखाये तोपा ही चलाय भले,
 शिवप्रसाद‡ कह अज पाछेहुँ न जाय को ॥११॥

अपने बुलाये हुए दरबार में जो विचार और आदेश रानी ने दिये उन के अनुसार सेनाओं ने अगले दिन घोर युद्ध किया । परन्तु फिर भी पाँच पीछे ही पड़े, जैसा कि इस फतहनामे में लिखा गया है—

सिंह भये गरबार, प्रभु गर्व निवार,
 दियो तुरकों बलधार, भागे सिंह पाछे नीर है ॥१७॥

सिखों के इस पीछे हटने को देख रानी के विषय में गणेशदास जी लिखते हैं—

कवित्त—सुनी सार तारकौर, आय सिंह समै दौर,
 पठानन के कोरन× के आगे भागे आवते ।
 किहो पीनस मेंगावो, मै तो आप चढ धावो,
 जाय जुध सो मचावो, लडो कहों वाहि जावते ।
 फाजल बहादुर जाय, कहो ताहि समझाय,
 लडो चित लाय, पाछे टोर नही पावते ।
 लडो साभ्दने सो धाय, दिहो तुरकों नूँ हटाय,
 मार मार सो मचाय, लोक फिरे जस गावते ॥१८॥

* बरबण्ड सिंह निहग सिंहों के दल का एक प्रसिद्ध योद्धा था ।

† खालसा दरबार रिकार्ड भाग १, पृष्ठ ११

‡ शिवप्रसाद भी घुड़-तोपखाने का कुमेदान था । देखिए खालसा दरबार रिकार्ड भाग १, पृष्ठ ११

× कुमार अर्थात् पुत्र !!

कबित्त—माई करमों जे पूछत सु धाम का बिहार,
 कोई तामो ऐसे कहो, मोहि को सूझत न होर है,
 जब लौ सु हीला कर मार किला लित्रो नॉहि,
 तब लौ न शान्त आवै मेरे मन जोर है ।
 जाई वे बहादर न होवे इह कादर,
 सा इहो बात नादर जो चढे किले दौड़ है ।
 किये श्रीव नयन, सो नकैण* वैण कहै ऐसे,
 लडो मारो हारो नहीं, गुरु का सो जोर है ॥१६॥

इस प्रकार इस फतहनामे को प्रकट करके विद्वान् सकलन-कर्त्ता ने सिख स्त्रियों की वीरता की एक और घटना को प्रकाशित किया और उनकी वीरता की कीर्ति को अधिक प्रसिद्धि दी है ।

इस काव्य में वर्णित तीन युद्धों के इतिहास को सर्व साधारण के लिए लाभदायक बनाने में जो परिश्रम श्री कोहली जी ने किया है, वह इस प्रकार है—

(१) महाराजा रणजीत सिंह की जीवनी—

आरम्भ में श्री सीताराम जी ने महाराजा रणजीत सिंह की संक्षिप्त जीवनी दी है । यह जीवन-वृत्तान्त है तो संक्षिप्त, किन्तु ऐतिहासिक ज्ञान की बड़ी प्रवीणता के साथ इसे चित्रित किया गया है । महाराजा के मैदान में आने से पूर्व देश में जो गड़बड़ और अराजकता फैल रही थी, मानो वह उसकी पृष्ठभूमि है । उस के आगे महाराजा के बड़े बड़े कार्यों का चित्र खींचा है । इस संक्षिप्त वर्णन से महाराजा के जीवन के सम्बन्ध में वह जानकारी मिल जाती है कि जिस के बिना श्री गणेशदास जी के फतहनामे को पूरी तरह समझ पाना कठिन था । इस जीवनी में महाराजा के कार्यकलाप के अतिरिक्त उन के विशाल गुणों पर भी प्रकाश डाला गया । इतना ही नहीं,

* अभिप्राय महारानी दातारकौर से है ॥

साथ ही उन की सेनाओं, आय और शासन व्यवस्था तथा कुछ दूसरा व्योरा भी दिया गया है।

चाहे महाराजा के विशाल गुणों को बतलाते हुए ऐतिहासिक तुलना और घटनाओं की नयी तुली व्याख्या से काम लिया गया है तो भी पढ़ते पढ़ते महाराजा के सद्गुणों के प्रति श्रद्धा उमड़ पड़ती है और सत्कार तथा गर्व की भाव-तरंगें उठने लगती हैं।

(२)—

इस के उपरान्त भूमिका से इस पुस्तक का इतिहास और मूल्य प्रकट हो जाता है। सम्पादक इस परिणाम पर पहुँचे हैं—

“चाहे किसी भी दृष्टि से देखा जाए और किसी भी कसौटी पर परखा जाए, गणेशदास की यह रचना ऐतिहासिक दृष्टि से ठीक और मान्य सिद्ध होगी। मैं इस काव्य संग्रह को एक महावपूर्ण ऐतिहासिक मसौदा ही नहीं, वरन् एक राष्ट्रीय धाती भी मानता हूँ। सत्य तो यह कि कवि की इस रचना को पढ़ कर मेरी दृष्टि में गीतों और भावों की कृतियों का मूल्य बहुत बढ़ गया है।

गणेशदास जी की निष्पक्षता की साक्षी देते हुए श्री कोहली जी कहते हैं :—

“मुल्तान” के घेरे का वर्णन करते हुये गणेशदास बतलाता है कि अफगानी प्रतिरक्षक दस्तों ने बढ़ती हुई खालसा सेना का एक बार तो नाक में दम कर दिया। दुर्ग पर से चलने वाली तोपों की गरज ने खालसा सेना को पीछे हटने पर बाध्य कर दिया। आगे चलकर कवि लिखता है कि दो दूक लड़ाई के अन्तिम दौर में बूढ़ा नवाब मुज़फ्फर खाँ अपनी अफगानी शान और मर्यादा को स्थिर रखते हुए, स्वयं तलवार ले कर दुर्ग के द्वार पर अन्तिम आस तक लड़ता रहा।”

(आठ)

इसी प्रकार, पेशावर युद्ध में, टिब्बा टीरी की लड़ाई का वर्णन करते हुए कवि लिखता है कि पठानी कटक ने महाराजा रणजीत सिंह की शिक्षित पलटनों और घुड़-सवारों को दो बार पीछे हट जाने पर विवश कर दिया और खालसा सेना पर वह घड़ी ला दी कि महाराजा असहायभाव में वाहगुरु का ध्यान करते हुए प्रार्थना करने लगे थे । प्रार्थना स्वीकार हुई और युद्ध का पाँसा ही पलट गया । खालसा सेना की विजय हुई । यह जीत खालसे को बहुत महंगी पड़ी, क्योंकि बाबा फूलासिंह अकाली, सरदार गर्भा सिंह और गोरखा जरनैल बलभद्र जैसे अनुपम योद्धा इस लड़ाई में काम आये थे । उपर्युक्त घटनाओं के वर्णन में कवि ने विपत्तियों के गुणों को पूरी तरह दृष्टि में रखा है । इस से उसकी तटस्थता स्पष्ट दीख पड़ती है ।”

(३) मुलतान युद्ध-वचनारम्भ—

इस के उपरान्त मुलतान-युद्ध का वचनारम्भ है । यह वचनारम्भ मुलतान की चढ़ाई और विजय को ठीक ठीक समझने के लिये कुंजी का काम देता है । इस में अकबर के समय से लेकर मुलतान का सन्धिप्त वृत्तान्त दिया गया है । और इस के उपरान्त मुजफ्फरखा की चर्चा आरम्भ की है । इसे पराजित करके महाराजा ने मुलतान पर अधिकार किया था ।

तदुपरान्त लड़ाई की तैयारियों और महाराजा के उन प्रयत्नों का वर्णन है जो उन्होंने इसलिये किये थे कि लड़ाई न हो और मुजफ्फर खां चुपचाप मुलतान दे दे और गुजाबाद का इलाका लेकर सतुष्ट हो जाय । उस के न मानने पर इस लड़ाई का सन्धिप्त किन्तु पूरा पूरा ज्ञान करा देने वाला वृत्तान्त कोहली जी ने देकर पाठकों के लिए गणेशदास जी के काव्यमय साहित्य को समझना सरल कर दिया है ।

(४) मूल फतहनामा मुलतान युद्ध—

आगे अब गणेशदास जी की रचना के पहले भाग (मुलतान) युद्ध का मूल पाठ है । यह सारा भाग पाद-टिप्पणियों से अङ्कित है, इन से मूल

काव्य के कठिन शब्दों, जटिल प्रसंगों तथा घटनाओं का पूर्वापर समझने में सहायता मिलती है ।

इन टिप्पणियों में भौगोलिक जानकारी भी है और साहित्यिक समालोचना भी । पाठकों को इन टिप्पणियों का ध्यान से अध्ययन करना चाहिए ताकि वे गणेशदास के मूल पाठ का पूरा लाभ उठा सकें ।

(५) पेशावर युद्ध न. १—

दूसरा युद्ध, इस फतहनामे में पेशावर युद्ध नं० १ है । मुसलमान युद्ध की भांति यह भी वचनारम्भ से शुरू होता है । इस में भी वह ऐतिहासिक जानकारी है जिसके बिना पेशावर युद्ध का प्रसंग समझना कठिन होता । इस वचनारम्भ में काबुल, खैबर, इलाका यूसुफजई और पेशावर इत्यादि के प्रदेशों की तत्कालीन अवस्था, पारस्परिक सम्बन्ध, फूटो, लडाइया, सन्धियाँ और शत्रुताओं का व्योरा भी दिया गया है । फिर इस ओर से सरदार बुधविह संधावलिये की कमान में सेनाओं की चढाई और दूसरी सभी बातें बतलाई हैं । इन को देते हुए, यत्र-तत्र कवि के छन्दा द्वारा, उन पर प्रकाश डाला गया है ।

एक परम्परागत दन्त-कथा बहुत प्रसिद्ध है । उसके अनुसार इस घोर संग्राम में एक समय ऐसा भी आया जब खालसा सेना में हार के लक्षण देख पड़ने लगे । तब महाराजा रणजीतसिंह ने 'अरदास' (प्रार्थना) की । इस पर पाँसा पलट गया और पराजय विजय में बदल गई । कवि गणेशदास जी ने इस प्रार्थना के किये जाने और उसके स्वीकार होने की रीति को ऐतिहासिक घटना के रूप में इस प्रकार वर्णित किया है ।

“बिरद की लाज पछाण रिदै,
सिंह आरत जान कुराल होय आये,
सौहै तुरग सो नेजा लै हाथ,
जो तुरका नूँ मार के वेग मजाये ।” ॥१०६॥

इस से आगे का वृत्तान्त इस पुस्तक में ही पढ़ने योग्य है ।

कवि जी की रचना का काव्य-प्रवाह और साहित्यिक रंग इस अध्याय में और भी स्वाभाविक हो जाता है। खालसा जी की तैयारी अच्छी सविस्तर है। इस युद्ध में वीरता दिखलाने का सिखों का उत्साह और पराधीनता की बेड़ियां तोड़ने की उमंग भली भांति प्रकट की गई है। उधर पठानों का धर्म-योद्धा तथा हुतात्मा होने की प्रबल भावना भी सुचारु रूप से वर्णित है।

महाराजा ने जहां सिख दूनों के अतिरिक्त कुछ गोरखे, राजपूत भरती करके उनको युद्ध-विशारद बनाया। वहां ब्राह्मणों और द्रवियों को भी शूर बना कर सैनिक पदों पर नियुक्त किया था। इस युद्ध के वर्णन में एक बात और भी मज्जे की मिलती है। वह यह कि महाराज ने बनियों को भी योद्धा बना दिखलाया और सेना में भरती किया था। इस बात का उल्लेख मिलता है कि हरदाससिंह नामक एक बनिए को उच्च कोटि का बन्दूकची बना कर पठानों के मुकाबले में रण-भूमि में भेजा गया था।

इस युद्ध में सब से बड़ा बलिदान तथा वीरगति किंवदन्तियों में अकाली फूलासिंह जी की चली आ रही है। महाराजा के चरित्र-लेखक अन्य प्रवीण इतिहासकारों के इतिहासों में भी श्री फूलासिंह जी की वीरता और बलिदान की साख मिलती है। इस फतहनामे में भी अकाली जी के घोर युद्ध तथा वीरगति प्राप्त करने का सुन्दर वर्णन मिलता है।

गणेशदास जी बतलाते हैं कि फूलासिंह के वीर गति प्राप्त करने पर महाराजा ने बहुत शोक मनाया। कवि के शब्द हैं :—

फूलासिंह जब मारयो, सुनी सार सरकार,
ऐसो सिंह महाबली, विरला हम दरबार ॥१०२॥

अकाली जी को मार कर पठानों ने समझा कि अब हमारी विजय हो जायगी। परन्तु गणेशदास जी कहते हैं कि सरकार ने पुनः बड़े वेग से आक्रमण करवाए। उधर मुकाबले भी बड़े जोर से हुए। यहाँ तक कि सिहों

(ग्यारह)

के पाँच उखड़ने लग पड़े। घोर संग्राम होने के पश्चात् ही अन्त में विजय प्राप्त हुई।

यह विजय कैसे प्राप्त हुई। उसका मनोरंजक वर्णन इसी पुस्तक के पेशावर युद्ध नं० १ से पढ़ कर ही आनन्द आता है।

(६) पेशावर-युद्ध नं. २—

इसके आदि में भी पहले युद्ध की ही तरह वचनारम्भ है। इस में युद्ध का कारण तथा वृत्तान्त संक्षेप में दिया गया है। पाद-टिप्पणियाँ भी बड़ी सुन्दर हैं।

यह युद्ध बरेली के मीर अहमद, अथवा सैयद अहमद नामक एक धर्मान्ध ने सीमा प्रान्त में पठानों के साम्प्रदायिक भावों को उत्तेजित करके कराया था। यह लोगों को बहकाने के लिए अपने-आपको मैहदी कहता था। मुसलमान मैहदी को आने वाला इमाम मानते हैं।

यह युद्ध भी बहुत भयानक था। परन्तु अन्त में सैदों के स्थान पर खालसा जी की जीत हुई। इस युद्ध के वृत्तान्त का वास्तविक स्वाद गणेशदास जी की रचना और सम्पादक की दी टिप्पणियों को ध्यान-पूर्वक पढ़ने से ही मिलता है।

(७)—

इस पुस्तक के अन्त में तीन परिशिष्ट हैं।* पहले दो परिशिष्टों में महाराजा के अफसरों के नाम हैं। तीसरे में उन पुस्तकों के और पुस्तक-कर्त्ताओं के नाम हैं जिनके कोहली जी ने स्थान स्थान पर प्रमाण दिये हैं। इस से पाठकों को महाराजा के सम्बन्ध में और अधिक जानने के लिए ऐसी पुस्तकों का पता लग जाता है जिनकी जानकारी जनसाधारण को कम रहती है।

*इस संस्करण में सात परिशिष्ट या सूचीपत्र दिये गये हैं। देखें, भूमिका का अन्तिम अनुच्छेद।

(८) अन्तिम बात—

पेशावर युद्ध नं २, के अन्त के दोहे की पादटिप्पणी में योग्य सपादक सम्भावना प्रकट करता है कि तीसरे युद्ध में यद्यपि प्रायः सारा वृत्तान्त आ जाता है तो भी प्रतीत होता है कि इसका तीसरा ही अध्याय समाप्त हुआ है और अभी चौथा-पाँचवाँ आदि अध्याय शेष है । हो सकता है कि इस पाण्डुलिपि में जिसकी प्रतिलिपि आपने कराई है, यह कमी हो और कहीं दूसरी कोई पाण्डुलिपि अखण्ड हो, जिस में और भी कुछ अध्याय हैं और उन में दूसरे युद्धों का वृत्तान्त इसी खूबी के साथ लिखा हुआ हो, इसलिए इस पुस्तक के प्रत्येक पाठक का यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह प्रयत्न करे कि कहीं से इस फतहनामे की कोई और पाण्डुलिपि मिल जाय और वह श्री कोहली जी की भेट करदी जाय ताकि आप उस पाण्डुलिपि की सहायता से इस पाण्डुलिपि का सशोधन कर सके और यदि दूसरे युद्धों का वर्णन मिल जाय तो दूसरे संस्करण में वे वृत्तान्त भी जोड़ दिए जायें ।

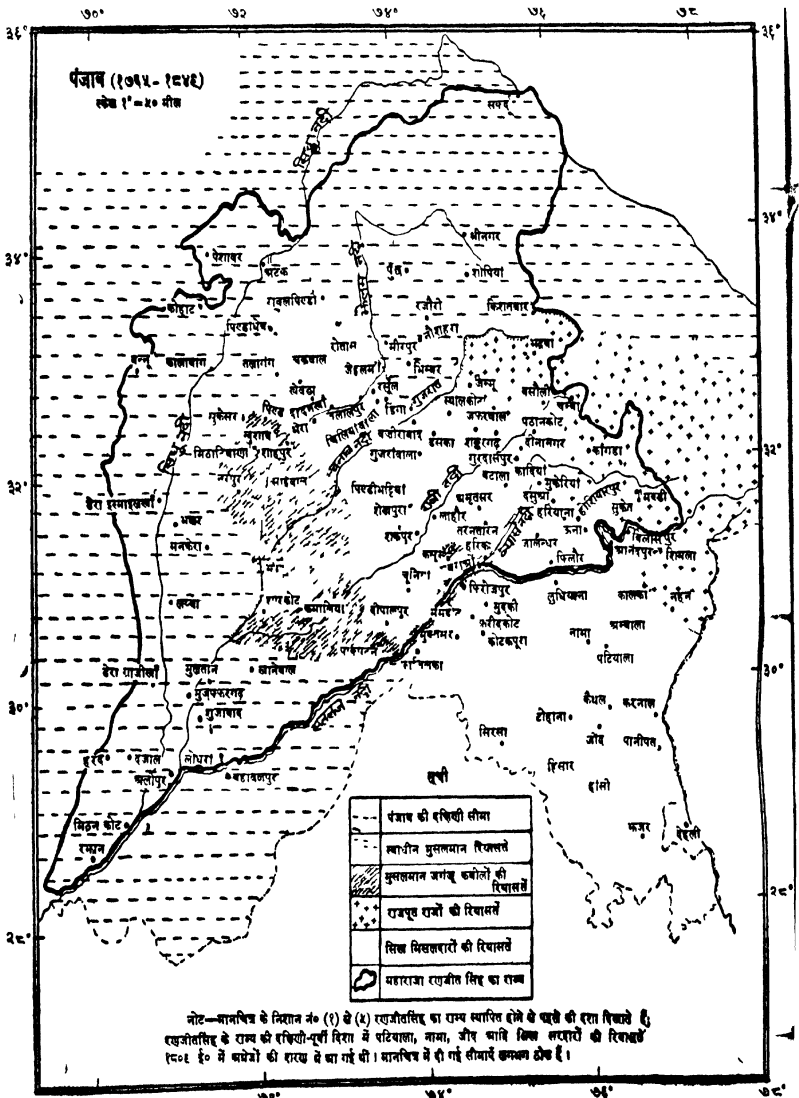
यह खोज इस लिए भी आवश्यक है कि यह जगनामा एक कहानी मात्र ही नहीं, यह अपने समय का और कवि की आँखों देखी-सुनी तथा स्वयं प्रमाणित की हुई घटनाओं का सविस्तर इतिहास है । इसकी वर्णन-शैली इतनी सुन्दर है कि यह वर्त्तमान और भविष्य की उन पीढ़ियों में राष्ट्रीय, स्वाभिमान, ज्ञान और 'वीर रस' भरने का काम देगा जो स्वतन्त्रता की देवी के मानो पार्श्व हैं ।

प्रत्येक भारतीय का यह कर्त्तव्य है कि वह भारत को प्राप्त हुई स्वतन्त्रता से प्यार करे । केवल शुभ कामना से ही नहीं, वरन् सब प्रकार के क्रियात्मक आचरण से भी । प्रत्येक भारतीय को इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है कि लगभग सहस्र वर्ष परतन्त्रता की दुर्दशा में बीता है । इस दुर्दशा में से भारत को निकालने और स्वतन्त्रता को लौटा लाने के लिए सिख योद्धाओं ने महाराजा के नेतृत्व में किस प्रकार अपने रक्त की नदियाँ बहाई थीं, और इसका श्रेय सदा ही महाराजा को रहेगा । दूसरी विचारणीय.

बात यह है कि वह मंहगे मूल्य में प्राप्त स्वतन्त्रता कैसे स्वार्थी देश-
घातकों ने मिट्टी के भाव खो दी। वही स्वतन्त्रता अब फिर लौटी है। वह
पंजाब के सिखों और हिन्दुओं के रक्त की भेट लेकर वापस आई है। इस
लिए यह भी सोचने की बात है कि भारतीयों के लिए यह स्वतन्त्रता अब
कितनी मूल्यवान् है और इस अमूल्य संपत्ति की रक्षा के लिए किस योग्यता
की आवश्यकता है। श्री गणेशदास जी द्वारा रचित और श्री सीताराम
कोहली जी द्वारा नये अलंकारों से सुशोभित इस रचना जैसी रचनाये देश में
राष्ट्रीय गौरव, मान और प्यार पैदा करती है। हमें विद्वान् संपादक जी का
कृतज्ञ होना चाहिए। आइए, अरदास (प्रार्थना) करें कि बाह्यगुरु इस प्रकार
के कार्य संपादक जी से अधिक से अधिक लेते रहे और उन्हें चिरंजीव करें।

देहरादून }
१५ दिसम्बर, १९५१ }

वीरसिंह



[मंत्री हिन्दुस्तानी एकादमी, इलाहाबाद के सौजन्य से]

भूमिका

(अ) महाराजा रणजीतसिंह का संक्षिप्त जीवन-वृत्तान्त

कवि गणेशदास ने अपनी रचना में जिन तीन युद्धों का वर्णन किया है, उनका सम्बन्ध महाराजा रणजीत सिंह की रियासत और उस के आस पास की पठान रियासतों के साथ है। इसलिये यह आवश्यक समझा गया है कि इस भूमिका के आरम्भ में महाराजा रणजीत सिंह के जीवन पर भी एक संक्षिप्त टिप्पणी दी जाय।

महाराजा के जन्म के समय देश-विभाजन—

महाराजा रणजीतसिंह १३ नवम्बर सन १७८० को पैदा हुए। इन के पिता का नाम सरदार महासिंह और दादा का नाम स. चढतसिंह था। उनकी मिसल शुकर चक्किया नाम से प्रसिद्ध थी। उनका केन्द्र स्थान गुजरावाला था। जिस समय रणजीतसिंह का जन्म हुआ, पंजाब की दशा बहुत खराब थी। जनता को किसी प्रकार की शान्ति प्राप्त न थी। आर्थिक और सामाजिक जीवन पिछले सौ वर्ष से अस्त व्यस्त हो रहा था। देश छोटे छोटे रजवाड़ों में बंटा हुआ था। जेहलम और यमुना नदी के बीच का मैदानी भाग अधिकतर सिक्खों के अधिकार में था। इस पर बारह बड़े-बड़े मिसलदार अर्थात् सरदार अपना अधिकार किये बैठे थे। उन के इलाकों में नीचे लिखे बड़े शहर और जिले थे, जैसा कि सरहिंद के सूबे में नाभा, पटियाला, जीन्द, कैथल, अम्बाला। दुआबा बिस्त जालन्धर के अन्तर्गत कपूरथला, फगवाड़ा, बगा, होशियारपुर और हरियाना। बारी ह्राब के अन्तर्गत लाहौर और

अमृतसर और दुआबा रचना में गुजरावाला, गुजरात, वजीराबाद और सियालकोट। दुआवा सिन्धसागर में रावलपिण्डी, धनी पोठोहार, पिंड दादनखा, जेहलम और रोहतास।

खालसा अधिकृत क्षेत्र के इर्द गिर्द मुसलमान रियासतों का घेरा—

लेकिन खालसा इलाकों के इर्द गिर्द दूसरे लोग भी राज्य करते थे। उनके साथ सटी हुई छोटी बड़ी मुसलमान स्वतंत्र रियासतें थीं, जैसा कि नवाब कुतबु-उ-द्दीन खान की रियासत कसूर, सज्जादा नशीन दीवान मुहम्मद यार की जागीर पाकपटन, नवाब मुहम्मद खान सियाल की रियासत भंग, नवाब मुहम्मद खां टिवाना की रियासत नूरपुर और मिठा टिवाना, नवाब जाफर खां बलोच की रियासत खुशाब, नवाब फतह खां बलोच की रियासत साहीवाल। इन मुसलमान रियासतों ने एक प्रकार से खालसा अधिकृत इलाकों के इर्द गिर्द घेरा डाल रखा था।

इन छोटे छोटे नवाबों के अतिरिक्त चार पांच बड़े स्वतंत्र पठान नवाब भी थे, जिन्होंने दूसरा बड़ा और सुदृढ़ घेरा डाल रखा था। ये थे काश्मीर-नाज़म, अटक नाज़म, नाज़मे पेशावर, नवाब रियासत मनकेरा और डेरा इसमाईलखां, नवाब “डेरा गाज़ीखान, नवाब मुलतान और नवाब रियासत बहावलपुर।

इसी प्रकार खालसा मिसलदारों के उत्तर में कांगड़ा की उपत्यका में राजा संसारचन्द कटोच और जम्मू में डोगर राजपूतों के राज्य थे। पूर्व में सन् १८०३ के लगभग अंग्रेज़ी राज्य भी यमुना नदी तक आ पहुँचा था। अंग्रेज़ों ने दिल्ली के बादशाह को अपनी रक्षा में ले रखा था।

खालसा अधिकृत प्रदेशों को डर—

यदि पंजाब के मान-चित्र को ध्यान पूर्वक देखा जाय तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सिक्खों के अधिकृत प्रदेश बत्तीस दिगंतों में जिह्वा की तरह अन्य असिक्ख इलाकों से घिरे हुए थे। खालसा शक्ति को जीवित रखने

के लिये यह आवश्यक था कि उन की अपनी बारह मिसलों में सघटन और मेल-मिलाप हो। नहीं तो भय था कि एक दिन या तो मुसलमान शक्तियाँ इकट्ठी हो कर उन का अन्त कर देगी या अगरेजों की बढ़ती हुई शक्ति उन को एक दिन दबा लेगी।

गगजीनमिह की दूरदर्शिता—

चाहे मुगल राज्य के पतन के समय सिक्ख मिसलदारों ने आपस में मेल और मिलाप होने के कारण बड़े बड़े प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था, तो भी अब ऐसा प्रतीत होता था कि राज-सत्ता प्राप्त कर लेने के पश्चात् उन का पहला उस्ताह ठंडा पड चुका था। आपस में सघटन और मित्रता के स्थान पर अब इन सरदारों में स्वार्थ और फूट जोरो पर थी। वे एक दूसरे की सहायता करने के स्थान में एक दूसरे को निर्बल करने का प्रयत्न किया करते थे। बस, महाराजा रणजीतसिंह ने जो स्वयं इन मिसलदारों में से एक थे, इस निराशाजनक, राजनीतिक और भौगोलिक अवस्था को भली भाँति देख लिया और समय की आवश्यकता को समझते हुए यह निश्चय कर लिया कि खालसा की शक्ति को बनाए रखने के लिए उसे इन मिसलों को अपने अधीन करके एक शक्तिशाली राज्य की नींव रखनी होगी, नहीं तो खालसा को अधिक देर तक जीना कठिन हो जायेगा। इस सारे सकल्प की पूर्ति के लिये उसे दूसरी गैर-सिक्ख शक्तियों से भी सामना करना होगा। सो इस इदसंकल्प प्राणी ने पच्चीस वर्ष के अल्प समय में पंजाब की बिखरी हुई शक्ति को एकत्रित करके देश में एक महान् शक्तिशाली राज्य की स्थापना कर दी। विजय ने प्रत्येक स्थान पर उसके चरण चूमे।

महाराजा रणजीतसिंह को पहले पहल जिन लोगों के साथ पाला पडा वे उस के अपने भाई-बन्धु सिक्ख मिसलदार ही थे। महाराजा ने अपनी बुद्धि और योग्यता से एक के साथ सम्बन्ध जोडा तो दूसरे के साथ मित्रता बढ़ाई और प्यार से अपना बना लिया। जहाँ कहीं इन साधनों से काम न

चला वहां उन्हो ने सैन्य शक्ति का प्रयोग कर के भी उस मिसलदार को अपने अधीन कर लिया और पश्चात् उसे अपने दरबार में किसी उच्च पद पर नियुक्त कर के उसे सदा के लिये अपना कृतज्ञ बना लिया ।

कन्हैया और नकई मिसल के सरदारों के साथ सम्बन्ध—

रणजीतसिंह का पहला विवाह कन्हैया मिसल के सरदार जयसिंह जी की पोती के साथ सन् १७६६ मे हुआ । और दूसरा विवाह सन् १७६८ में नकई मिसल के सरदार ज्ञानसिंह की बहिन के साथ । इस प्रकार तीन मिसलों शुकूरचक्किया, कन्हैया और नकई मे मेल-जोल हो गया । अब महाराजा रणजीतसिंह ने अपना ध्यान भगी मिसल की ओर दिया । उस समय भगी मिसल के सरदार सबसे अधिक शक्तिशाली समझे जाते थे । लाहौर, अमृतसर और गुजरात आदि बड़े-बड़े शहर इन्ही के अधिकार में थे । पर इस मिसल के तीन बड़े सरदार—मोहर सिंह, साहबसिंह और चेतसिंह—जिन्होंने लाहौर को राजधानी बना रखा था, शासन करने के अयोग्य थे । लाहौर की प्रजा उन से ऊब गई थी । उन्होने रणजीतसिंह को स्वागतम् कहा और रणजीतसिंह कन्हैया मिसल की सेना की सहायता से लाहौर पर एक ही दिन में अधिकार करने में सफल हो गया । ६ जुलाई १७६६ को भगी मिसल की जगह लाहौर पर शुकूरचक्किया मिसल का अधिकार हो गया । इसके तीन वर्ष पीछे अमृतसर पर भी महाराजा का अधिकार हो गया । सन् १८०७ में भगी मिसल के तीसरे बड़े नगर गुजरात पर भी महाराजा ने अधिकार कर लिया । इन्ही दिनों में रणजीतसिंह ने अन्य छोटे बड़े जमींदारों और सरदारों के इलाको को लाहौर के वर्धमान राज्य मे मिला लिया । इस प्रकार अकालगढ़, वज्जीराबाद, डसका, सियालकोट, पसरूर और चन्योट के इलाके महाराजा के हाथ में आ गए । द्वाबा बिस्त जालन्धर के अन्तर्गत फगवाड़ा का शहर चौधरी चूहड़ मल से छीन लिया गया, परन्तु महाराज ने इस द्वाबे पर अधिक हाथ न डाला । क्योंकि उन्होंने शीघ्र ही आहलुवालिया मिसल के सरदार फतहसिंह के साथ

पगडी बदल कर मित्रता कर ली और अपनी विजयों के लिए उसकी सेवा का सतत प्रयोग किया। उसकी सहायता से उन्होंने नवाब कुतुबु-द्दीन कसूर वाले का सारा प्रदेश अपने अधिकार में कर लिया।

सतलुज पार की रियासतों का अंग्रेजों के साथ सम्बन्ध—

जब महाराजा रणजीतसिंह ने सन् १८०६ में अपनी दृष्टि पटियाना, नाभा, और जीन्द पर डाली और सरहिन्द प्रान्त के मिसलदारों की सपत्ति और प्रदेश पर हाथ साफ करना आरम्भ किया तो इन सब के मन में भय उत्पन्न हो गया। वे अपने बचाव का उपाय सोचने के लिए समाना के स्थान पर इकट्ठे हुए। वे इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि अंगरेजों ने किस प्रकार अपना अधिकार धीरे-धीरे कलकत्ता से दिल्ली तक बढ़ा लिया है और दूसरी ओर रणजीतसिंह सतलुज नदी तक अपना अधिकार जमा चुका है। वे इन दो शक्तियों के बीच इस प्रकार घिर चुके थे कि उनके लिए किसी एक के साथ सम्बन्ध जोड़ना अनिवार्य हो गया था। इस घटना को मुन्शी सोहनलाल ने बड़े सुन्दर ढंग से लिखा है। वह कहते हैं कि यह बात इन सरदारों पर स्पष्ट हो चुकी थी कि चाहे वे अंगरेजों का साथ दे अथवा महाराजा रणजीतसिंह से सम्बन्ध स्थापित करें, उन्हें दोनों अवस्थाओं में अपनी स्वतन्त्रता से हाथ धोने पड़ेंगे। जहाँ रणजीतसिंह के साथ मिलना हैजा मोल लेना है वहाँ अंगरेजों के साथ सम्बन्ध जोड़ना ज्वर रोग के समान है। मृत्यु दोनों ओर निश्चित है। परन्तु वे समझ चुके थे कि अंगरेजों के साथ मिलने से वे कुछ देर अधिक जी सकेंगे। उन्होंने भली भाँति विचार कर निर्णय किया कि अंगरेजों के साथ सम्बन्ध जोड़ना ही उनके लिए लाभदायक रहेगा। अतः उन्होंने अपना प्रतिनिधि देहली भेजा। अंगरेज तो ऐसे सुअवसर की बाट ही जोह रहे थे। उन्होंने शीघ्र ही इन सरदारों को अपनी शरण में लेना स्वीकार कर लिया। महाराजा रणजीतसिंह को इसकी सूचना दे दी गई। करनल अखतरलोनी की कमान में सशस्त्र-सेना सरहिन्द प्रदेश में नियुक्त कर

दी गई। जिससे अंगरेजों के मनोभाव का पुरा-पुरा अनुभव रणजीतसिंह को हो सके।

अंगरेजों और महाराजा रणजीतसिंह में बात-चीत (सन १८०९)

महाराजा रणजीतसिंह को अभी पंजाब के मिसलदारों को अपने अधिकार में लाने के काम से पूरी तरह अवकाश नहीं मिला था कि अंगरेजों जैसे शक्तिशाली राज्य के साथ उसका सामना आन पड़ा। अब उसके सामने दो विकल्प थे—या तो वे अंगरेजों के साथ युद्ध करे या फिर माने कि सतलुज पार के सिक्ख सरदारों के साथ उसका कोई राजनीतिक संबंध नहीं होगा और उसके राज्य की पूर्वी सीमा सतलुज रहेगी। यद्यपि ऐसा करने से महाराजा की सब सिक्ख सरदारों की मिसलों को इकट्ठा करके एक महान् और शक्तिशाली सिक्ख राज्य स्थापित करने की तीव्र इच्छा पूरी नहीं हो सकती थी, तो भी महाराजा ने इसी में भलाई देखी कि अंगरेजों के साथ इस समय लड़ाई न छेड़ी जाए। २५ अप्रैल सन् १८०९ ई० को अंगरेजों के वकील मि० चार्ल्स मटकाफ के सामने एक सन्धि हुई। उसके अनुसार सतलुज पार की सभी सिक्ख रियासतों को अंगरेजों के अधीन माना गया। यह भी मान लिया गया कि उनका महाराजा रणजीतसिंह के साथ कोई राजनीतिक सम्बन्ध नहीं होगा और न ही महाराजा की सेना को सतलुज पार करके इस इलाके में हस्तक्षेप करने की अनुमति होगी। इसी तरह अंगरेजों ने भी वचन दिया कि सतलुज की बाईं ओर की सिक्ख अथवा दूसरी रियासतों से उनका कोई सम्बन्ध न होगा और न ही वे अपनी सेना सतलुज पार महाराजा रणजीतसिंह के इलाके में भेजेंगे। इस सघर्ष की समाप्ति के साथ रणजीतसिंह के जीवन की एक कठिन घाटी पार होगई।

महाराजा की अगली नीति पर सन्धि का प्रभाव—

भविष्य के लिए अंगरेजों और सिक्ख मिसलों की समस्याएँ सुलभ गईं। महाराजा रणजीतसिंह अब निश्चिन्त हो कर उन राजपूती रजवाड़ों, मुसलमान लडाके कबीलों, रईसों, जमींदारों तथा अन्य पठान अधिकारियों की ओर जिन्होंने उस के चारों ओर घेरा डाल रखा था, ध्यान देसकता था। अंगरेजों के साथ सीमाओं का निर्णय करने के पश्चात् महाराजा ने कांगड़ा की उपत्यका की ओर मुँह किया। वहाँ गोरखा सेनापति अमरसिंह थापा एक भारी सेना के साथ राजा ससारचन्द से लड़ रहा था। उसने कांगड़ा के दुर्ग को घेर रखा था। संसारचन्द ने महाराजा से सहायता मांगी। उसके बदले में महाराजा ने उससे कांगड़े का गढ़ मांगा। राजा ने यह स्वीकार कर लिया। तब गोरखा सेना के साथ खालसा दल का घोर युद्ध हुआ। पर विजय अन्त में सिक्खों के हाथ रही। महाराजा ने विजयी बन कर कांगड़ा में दरबार किया। उस में सभी पहाड़ी राजाओं को बुलाया गया। उन्होंने महाराजा को भेंट दी। इस दरबार में मण्डी, सुकेत, कुल्लू, जसरोटा, नूरपुर, कोटला, शाहपुर और कांगड़ा के राजे सम्मिलित हुए। यह सितम्बर सन् १८०६ की घटना है। इस के एक वर्ष बाद महाराजा रणजीतसिंह ने एक सेना-दल सरदार हुक्मसिंह चिमनी के अधीन जम्मू भेजा। जम्मू की सेना ने थोड़े से मुकाबले के बाद शस्त्र डाल दिए। केवल दो वर्ष में ही पहाड़ी रियासतों की समस्या सुलभ गई।

मुसलमान रियास्तों को धीरे धीरे जीतना—

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मुगल राज्य पजाब से लुप्त हो गया। उस के स्थान पर न तो काबुल के दुरानी राजा ही कोई राज्य स्थापित कर सके और न ही सिक्ख मिसलदारों के पास इतना बल अथवा साधन था कि वे कोई सबल राज्य स्थापित कर लेते। इस अशान्ति और संघर्ष के समय में कुछ मनचले वीरों ने छोटे छोटे गाँवों और कसबों को अपने अधीन कर लिया और उन्हें सुरक्षित करने के लिए

वहाँ गढ़ियां और फसीले बनवा लीं। उनके भीतर उन्होंने युद्ध-सामग्री भी एकत्रित कर ली। इसी प्रकार कई कबीलों ने अपने-अपने सरदारों के अधीन छोटे-छोटे रजवाड़े और राज्य स्थापित कर लिए, क्योंकि पंजाब में कोई ऐसी केन्द्रीय शक्ति नहीं थी जो उनको अपने अधीन रख सकती। महाराजा रणजीतसिंह के शक्ति पकड़ने तक पंजाब प्रदेश का यही हाल रहा।

अब महाराजा रणजीतसिंह ने उनको धीरे-धीरे जीतना आरम्भ कर दिया और अपनी पूरी शक्ति से उन का अन्त कर दिया। सन १८०७ में उन्होंने कसूर पर अधिकार करके कुतुबुद्दीन को ममदोट में जागीर दी। सन १८१० में फतहखां बलोच का राज्य साहीवाल जिस में १० पक्के दुर्ग और १५० गाँव थे महाराजा के अधिकार में आ गया। इसी वर्ष नवाब जाफरखां का इलाका 'खुशाब' खालसा राज्य में शामिल कर लिया गया इस के बाद सन १८१६ ई० में अंग के सियाल मुसलमानों की चार लाख रुपए वार्षिक आय वाली रियासत भी पंजाब सरकार में मिला ली गई। इसी वर्ष शाहपुर के टिवाने सरदार मलिक अहमदयार खां को भी अपनी रियासत से हाथ धोने पड़े। महाराजा ने उसे जागीरदारों में भरती कर के ६० टिवाने सवार नौकरी में रखने के लिए दस सहस्र रुपए वार्षिक की जागीर दी। इस प्रकार मुसलमानी शक्तियों के पहले घेरे को तोड़ने में महाराजा सफल हो गये। अब उन का अपना देश भी विशाल हो गया तथा उनके सैनिक साधन भी बढ़ गए। इससे वे दूसरे मुसलमानी घेरे को तोड़ने के लिए तैयार हो गए।

महाराजा रणजीतसिंह की विशाल दृष्टि—

निसर्ग ने महाराजा को अद्भुत विशाल दृष्टि प्रदान कर रखी थी। उन्होंने प्रारम्भ से ही अपने मस्तिष्क में एक चित्र खींच रखा था। उसके अनुसार वे अपने सकल्प की पूर्ति में जुटे हुए थे। वे भली भाँति जानते थे कि कौन पग किस समय उठाना उचित है। हम देख चुके हैं कि किस प्रकार पहले पहल उन्होंने सिक्ख मिसलदारों को अपने अधीन किया और पराजित सरदारों को आदर और सम्मान के साथ पद और

जीवन-निर्वाह के लिए जागीरे दी। उन्होंने उनकी योग्य सेनाओं को अपनी सेना में मिला लिया। इस प्रकार एक ओर तो उन्होंने सरदारों को सन्तुष्ट कर के अपना सहायक बना लिया और दूसरी ओर उन्हें बिना कठिनाई के अनुशासित सेनाएँ मिल गईं। इसके साथ ही इस सेना को हटा देने और इन लोगों को बेरोजगार बना देने से देश में अशान्ति फैलने का जो भय था वह भी जाता रहा। निठल्ले बैठने वाले सैनिक, जो लड़ाई से पूरी तरह परिचित थे, सारे समाज के लिए दुखदायी बन सकते थे। इस के बाद इसी खालसा सेना की सहायता से रणजीतसिंह मुसलमानों का दूसरा घेरा तोड़ने में सफल हो गये।

गगनी गिर्ग और अफगान शासक—

इस के पश्चात् महाराजा की उन अफगान शासकों से लड़ाई छिड़ गई, जो शक्ति, सेना तथा अन्य साधनों में पंजाबी मुसलमानों से बहुत बड़े-छोटे थे। परन्तु उन्होंने पाँच वर्ष के अल्प समय में ही इन पठानी रियासतों को एक एक करके समाप्त कर दिया। सन् १८१३ में सरदार जहाँदाद खाँ खैल ने एक अच्छी जागीर प्राप्त करके अटक का सुदृढ़ और विख्यात दुर्ग महाराजा को सौंप दिया। सन् १८१७ ई० में महाराजा ने पठान कबीलो को हरा कर हजारों के पहाड़ी प्रदेश को जीत लिया और सन् १८१८ में नवाब मुजफ्फर खाँ को हरा कर उसके मुलतान के राज्य को अपने लाहौर-राज्य में मिला लिया। इसके बाद सन् १८१९ में वजीर फतह खाँ के भाई जब्बार खाँ से काश्मीर का इलाका छीन कर महाराजा साहब ने उसे अपने अधीन कर लिया। सन् १८२१ में पठानों की तीसरी बड़ी रियास्त मनकेरा की भी यही गति हुई। इस रियासत के अधीन प्रदेश सिन्धु नदी के दोनों ओर फैले हुए थे। जब मनकेरा पर चढ़ाई हुई तब वहाँ के नवाब हाफिज अहमद खाँ ने दो दिन लड़ाई करने के बाद हथियार डाल दिए और जागीरदार बनना स्वीकार करके अपना सारा प्रदेश महाराजा को सौंप दिया। पंजाब में चौथी स्वतन्त्र रियासत पेशावर की थी। इसकी पीठ पर काबुल-नरेश की सैनिक शक्ति

भी थी। महाराजा रणजीतसिंह ने पेशावर पर पहली बार सन् १८१८ में धावा बोला। परन्तु उस समय महाराजा का उद्देश्य बारकजई सरदारों की सैनिक और आर्थिक शक्तियों का सर्वेक्षण करना था। निर्णायक आक्रमण महाराजा ने सन् १८२३ में किया। इस के दस वर्ष बाद अर्थात् सन् १८३४ में सिन्धु पार के समस्त प्रदेश को, जिस के अन्तर्गत पेशावर, डेरा इस्माईल खां और डेरा गाज़ीखां थे, महाराजा ने अपने राज्य में मिला लिया और पठानी राज्य के अन्तिम चिह्न को पंजाब के मानचित्र से मिटा दिया। सारांश यह कि उसने पहले और दूसरे घेरे की सभी मुसलमानी रियासतों को समाप्त कर दिया और उनके स्थान पर पंजाब में एक विशाल राज्य स्थापित किया।

सिक्खों और अफगानों में शत वर्षीय युद्ध—

यदि पंजाब के इतिहास को ध्यान से पढ़ा जाय तो पता लगता है कि सिक्खों और अफगानों में यह संघर्ष सौ साल तक चलता रहा। इस दीर्घ काल में युद्ध के कई पल्ल देखने में आते हैं। सन् १७४८ में अहमदशाह अब्दाली के प्रथम आक्रमण के साथ यह संघर्ष आरम्भ हुआ। अहमदशाह अब्दाली ने लगातार कई आक्रमण करके कुछ वर्षों में समस्त पंजाब और सरहिन्द को अपने अधिकार में कर लिया। इस प्रकार पंजाब अब दिल्ली के हाथों से निकल कर काबुल-नरेश के हाथों में चला गया। परन्तु खालसा के लिए दिल्ली के मुगलों और काबुल के पठानों में कोई अंतर न था उनके मन में तो स्वतन्त्रता की इच्छा उत्पन्न हो रही थी। अपने देश में अपना राज्य स्थापित करना चाहते थे। काल की माँग के अनुसार जातियों की दशा भी बदल जाया करती है और नेता भी उत्पन्न हो जाते हैं। सो सिक्खों में भी उसी समय ऐसे सयाने और नीतिज्ञ नेता उत्पन्न हो गए जिन्होंने अपनी दृढ़ता, साहस, वीरता और बुद्धिमत्ता से पंजाब की काया ही पलट दी। अनुभवी सरदार कपूरसिंह और उसके वनयुवक साथी सरदार जस्सासिंह आहलूवालिया ने सिक्खों के छोटे छोटे जत्थों को एक लकी में

पिरोने का निश्चय किया। पथ के संगठन को प्रबल बनाने के लिए एक सेना तैयार की गई। उसका नाम 'दल खालसा' रखा गया। इस का प्रतिष्ठान अमृतसर में वैसाखी के दिन अप्रैल १७४९ को किया गया। यही सिक्खों की प्रथम विधिवत् सेना थी, जो एक सेनानायक के अधीन रह कर कार्य करने लगी।

युद्ध का प्रथम भाग—

अब 'दल खालसा' और अफगानी सेना में एक लम्बा और देर तक चलने वाला युद्ध आरम्भ हो चुका था। इस युद्ध का सविस्तर वर्णन यहां व्यर्थ है। किन्तु फिर भी यह प्रकट कर देना आवश्यक प्रतीत होता है कि आरम्भ में पन्द्रह वर्ष तक अफगानों का ही पलड़ा भारी रहा। उनके पास नियमित और प्रशिक्षित सेना थी तथा युद्धोपयोगी शस्त्र और सब प्रकार की सुविधाये उन्हें उपलब्ध थीं। धन की भी कमी न थी। इसके विपरीत खालसा सेना का एक भी सिपाही सच्चे अर्थों में प्रशिक्षित सैनिक कहलाने का पात्र न था। परन्तु देश की परिस्थिति और समय की आवश्यकता ने खालसा सेना में जागृति उत्पन्न कर रखी थी। वे देश के लिए लड़ने-मरने पर तैयार हो गए। खालसा ने दरिद्रता, देश-निर्वासन और आपत्ति के विद्यालय में शिक्षा पाई थी। इन विपत्तियों को सहन करते करते वे कठोर बन चुके थे। उनके पास अधिक घोड़े और सामग्री खरीदने के लिए धन न था, न ही इसे किसी सरकार अथवा रियासत से किसी प्रकार की सहायता मिलती थी। इस लिए खालसा सेना ने अफगानों के साथ खुले मैदान में डट कर मुकाबला करना बुद्धिमत्ता न समझा।* ये लोग प्रायः शत्रु के आने के पहले ही जंगलों और पहाड़ों में

* इस समय खालसा सेना को अब्दाली की सेना से एकवार ही डट कर सामना करना पड़ा। इसमें खालसा को बहुत प्राण तथा संपत्ति की हानि उठानी पड़ी। इस घटना को सिक्ख इतिहास में अभी तक 'घल्लू घारा' के नाम से स्मरण किया जाता है। यह लड़ाई फरवरी सन् १७६२ में गुजरवाल और बरनाला के बीच हुई थी।

छिप जाते, सुअवसर पाकर फिर शत्रु पर दूट पड़ते, और लूट मार की सामग्री लेकर भाग जाते थे। पग पग पर उनके गुप्तचर शत्रु का पता लगाते फिरा करते थे। ये अवसर पाते ही शत्रु के पशुओं, खाद्य पदार्थों और कोष पर हाथ साफ करके सघन वनों में छिप जाते थे। कई वर्षों तक खालसा दल अफगानी सेना को इसी प्रकार तंग करता रहा।

युद्ध का दूसरा भाग—

सन् १७६५ से इस युद्ध के दूसरे भाग का आरम्भ हुआ। मार्च के महीने में अहमदशाह अब्दाली अपने छूटे आक्रमण के पश्चात् काबुल लौट गया। खालसा दल ने लाहौर पर धावा बोल दिया और अब्दाली के नियुक्त किये हुए दीवान काबुलीमल को भगा कर नगर और दुर्ग पर अधिकार कर लिया। खालसा के नाम का सिक्रा चलाया गया और एक स्वतन्त्र राज्य की नींव रख दी गई। जब अहमदशाह अब्दाली को इस की सूचना मिली तो उसने काबुल राज्य के कामों से अवकाश पाकर एक बार फिर पंजाब का रुख किया। ज्यों ज्यों अहमदशाह आगे बढ़ता आता, खालसा दल पीछे हटता जाता और अवसर पा कर उसकी सेना पर छापा मार देता। इस प्रकार अब्दाली अबाध गति से सतलुज नदी तक आ पहुँचा। खालसा की किसी सेना ने उसका सामना नहीं किया। वह अभी सोच ही रहा था कि क्या करे और क्या न करे कि उस की सेना का एक दल, जिसमें १२,००० अफगान सैनिक थे, बिना उस की आज्ञा के काबुल की ओर मुड़ चला। उन्हें दण्ड देने के लिए अब्दाली उन के पीछे गया। परन्तु रास्ते में ही खालसा के अल्पसंख्यक दलों ने उसे तंग करना आरम्भ कर दिया। असहाय अफगानी सरदार कठिनाइयाँ मेलता हुआ काबुल पहुँचा चाहे वह इस घटना के बाद छ वर्ष तक जीता रहा, पर उसने भारत की ओर फिर मुँह करने का साहस नहीं किया। इस प्रकार अब सिकख सरदारों के लिये मैदान खाली था। मुगल बादशाहों का दबदबा तो पंजाब से पहले ही उठ चुका था, उधर अब्दाली काबुल में शान्त बैठ चुका था। इस पन्द्रह

वर्ष के थोड़े से समय में ही खालसा ने यमुना से लेकर जेहलम तक का सारा मैदानी भाग जीत लिया । सरहिन्द में से रहे सहे मुसलमान हाकिमों को और पंजाब से अब्दाली के प्रतिनिधियों को निकाल कर बड़े बड़े नगरों पर सिक्खों ने अधिकार कर लिया । अब केवल काश्मीर, पेशावर, डेरा इस्माईलख़ां और मुलतान आदि में ही पठान राज्यपाल रह गए थे, क्योंकि इन राज्यपालों की शक्ति और प्रभाव बहुत अधिक था । यद्यपि अब्दाली के पुत्र तैमूर और पोते जमानशाह ने खालसा से पंजाब वापस लेने का प्रयत्न भी किया, परन्तु प्रत्येक बार उनको विफलता का मुँह देखना पड़ा ।

युद्ध का तीसरा भाग—

इस शत वर्षीय युद्ध का तीसरा भाग महाराजा रणजीतसिंह के समय में आरम्भ हुआ । यह पहले बतलाया जा चुका है कि महाराजा रणजीत सिंह ने अफगानों के अधीनस्थ सारे इलाक़े को उन से छीन कर पंजाब में उनकी सत्ता समाप्त कर दी थी । रणजीतसिंह की कमान में सिक्ख सेना ने वह स्थिति प्राप्त कर ली जो कि इस सौ वर्ष-व्यापी युद्ध के पहले भाग में पठान सेना को प्राप्त थी । इस के विपरीत अफगान सेना की वही स्थिति थी जो आरम्भ में सिक्ख सेना की थी ।

अब महाराजा रणजीत सिंह के पास प्रशिक्षित सेना थी । तोपखाने के साथ अन्य युद्ध सामग्री भी विद्यमान थी । काबुल का राज्य सन् १८१० ई० के पश्चात् दुर्बल ही होता चला गया । पठानों के अधीन भारत का जो भाग था वह भी काबुल के राज्य से सब प्रकार की सहायता की आशा छोड़ बैठा था । उन की अपनी शक्ति इतनी विशाल न थी कि वे महाराजा रणजीतसिंह का सामना कर सकते । परिणाम यह हुआ कि महाराजा ने मुलतान, काश्मीर, पेशावर, और मनक्वेरा को एक एक कर जीत लिया । इस प्रकार इस शताब्दि-युद्ध का निर्णाय सिक्खों के पक्ष में हुआ । कवि गणेशदास

की रचना में मुलतान तथा पेशावर पर विजय पाने के लिए जो लड़ाइयाँ हुई उनका बड़ा सुन्दर वर्णन है ।

महाराजा की सेना—

इस विचार को दृष्टि में रखकर कि प्रस्तुत रचना में कवि गणेशदास ने पंजाबी सैनिकों की वीरता, उनके रण-कौशल तथा उनकी युद्ध-नीति का विस्तार से वर्णन किया है, हम अपने पाठकों की जानकारी के लिए महाराजा रणजीतसिंह की सैनिक-व्यवस्था पर छोटी सी टिप्पणी देकर इस सन्धि जीवन को समाप्त करते हैं ।

महाराजा रणजीतसिंह अपने राज-कार्यों में सबसे अधिक अपना ध्यान सेना-विभाग पर दिया करते थे । वे अपने सैनिकों की योग्यता बढ़ाने के लिए पूरा ध्यान देते और वीरता दिखाने वाले सैनिकों का उत्साह और साहस बढ़ाने के भाव से उनको विशेष मान, इनाम और खिलअत दिया करते थे ।

(१) महाराजा की सेना का अधिकतर भाग वह था जिसे यूरोपीय सेनाओं के ढग पर संगठित और प्रशिक्षित किया गया था । इस सेना के प्रशिक्षण के लिए महाराजा ने बड़े बड़े वेतन (२५०० रु० मासिक) देकर यूरोपीय फौजी अफसर नियुक्त किए थे । इस सेना को यूरोपीय ढग की कवायद तथा यूरोपीय ढग की रण-विधि सिखलाई थी । इस सेना में पैदल पलटने, घुड़सवार रसाले तथा तोपखानों के दस्ते शामिल थे । महाराजा की मृत्यु के समय इस सेना की संख्या ३५,२१२ नफरी थी और उसका वार्षिक वेतन ४२,११,२६२ रुपए था । महाराजा के पास छोटी बड़ी सब मिलाकर ४७० तोपें थीं ।

(२) सेना का दूसरा भाग पुरानी घुड़सवार सेना का था । इसमें अधिकतर घुड़सवार सैनिक थे और इसका बहुत-सा भाग उन सैनिकों का

था जो किसी समय उन स्वाधीन सरदारों की नौकरी में थे जिन्हें, महाराजा रणजीतसिंह ने समय समय पर पराजित किया था। सरदारों को तो उन्होंने जागीरे देकर अपने दरबार में बराबर की पदवियों पर नियुक्त कर लिया और उनकी प्रशिक्षित और अनुभवी सेना को अपनी सेना में मिला लिया। आरंभ में इसी सेना की सहायता से उन्होंने पंजाब पर विजय प्राप्त की थी। इन सैनिकों के लड़ने का ढंग भी प्राचीन घुड़सवार सेना का ढंग था, जो महाराजा की उस सेना से भिन्न था, जिसे यूरोपीय ढंग से प्रशिक्षित किया गया था। रणजीतसिंह की मृत्यु के समय पुराने ढंग की इस सेना की संख्या ११००० नफरी के लगभग थी, इसपर वेतन रूप में लगभग २२,००,००० रु० प्रतिवर्ष खर्च होता था।

(३) रणजीतसिंह की सेना का तीसरा भाग वह था जिसका खालस सरकार के वेतन-विवरण के लेख-पत्रों में 'जागीरदारी सेना' के नाम से उल्लेख किया गया है। बड़े-बड़े सरदारों को महाराज ने जागीरे दे रखी थीं। और इन जागीरों के आधार पर उनको घुड़सवारों की एक निश्चित संख्या अपने पास रखनी पड़ती थी। उसका सारा खर्च (अस्त्र-शस्त्र आदि भी), उनको स्वयं जुटाना पड़ता था। इस घुड़सवार सेना के पास हलकी ऊटों पर लादने वाली तोपें (जम्बूरे) भी हुआ करती थीं।

महाराजा की मृत्यु के समय इस सेना की संख्या ३४०० नफरी के लगभग थी, जिसके वेतन आदि के लिए उसने १६,००,००० रु० वार्षिक की जागीर-लगा रखी थी।

कवि गणेशदास की इस रचना में स्थान-स्थान पर जागीरदारों तथा उनके सैनिकों का वर्णन मिलता है जैसे कि अशरी वाले, मजीठिए, सिंघावालिण, द्वाबिए सरदार आदि। यह सब जागीरदार सरदार थे।

(आ) कवि गणेशदास और उनकी रचना

फतहनामा लिखने की प्रथा—

मुगल सम्राटों के दरबार की यह प्रथा थी कि जब वे किसी घोर युद्ध में विजय प्राप्त करते तो उसकी घोषणा 'फतहनामा' द्वारा अपने साम्राज्य के प्रान्तों तथा दूसरे पड़ोसी राजाओं को भेजा करते थे। यह 'फतहनामा' किसी अच्छे विद्वान् और सुयोग्य पुरुषों से लिखवाया जाता था। परन्तु यह आवश्यक नहीं था कि इस प्रकार की विजय-घोषणा पद्य में ही हो। अतएव ऐसा प्रतीत होता है कि फतहनामा लिखाने की रीति महाराजा रणजीतसिंह ने भी चालू रखी। उसके समय के दो एक 'फतहनामे' फारसी भाषा में, किन्तु गद्य में मुझे देखने को मिले हैं। इन में से एक की रचना तो दीवान अमरनाथ ने की है। उनकी पुस्तक 'जफरनामा रणजीतसिंह' के पृष्ठ २३१-२६ पर मिलता है। यह फतेहनामा स. १८३४ ई० में पेशावर की अन्तिम विजय के उपलक्ष्य में लिखा गया था। उस समय महाराजा ने वहाँ के बारकज़ई पठान सरदारों को निःस्त्व कर सम्पूर्ण पेशावर प्रान्त को अपने राज्य में मिला लिया था।

मेरा अनुमान है कि कवि गणेशदास ने भी महाराजा की आज्ञा से प्रत्येक अवसर पर इन फतहनामों की रचना की होगी, और इन का शीर्षक देते समय 'फतहनामा' रणजीतसिंह के स्थान पर फतहनामा गुरु खालसा जी का रखा होगा। कारण यह कि स्वयं महाराजा ने अपनी सरकार को अपने नाम से सम्बद्ध न करते हुए, खालसा के नाम से सम्बद्ध करके इस को 'सरकार खालसा' का नाम दे रखा था।

फतहनामा गुरु खालसा जी का—

इस पुस्तक में बड़े सुन्दर, और सरल ढंग से श्रीगणेशदास ने कविता में केवल तीन लड़ाइयों का ही वर्णन किया है। ये लड़ाइयाँ

महाराजा रणजीतसिंह और पठान नवाबों की सेनाओं के मध्य में हुई थीं। तीनों युद्धों में जीत महाराजा की ही हुई। इनमें से एक लड़ाई मुलतान में स. १८१८ ई०, दूसरी टिब्बा टीरी में नौशहरा के समीप स. १८२३ ई० में, और तीसरी सैदेवाल (अकोडा) के स्थान पर स. १८२७ ई० में हुई थी।

कवि गणेशदास का परिचय और उनके जीवन-यापन का साधन—

जैसे ऊपर कहा गया है इस काव्य के रचयिता श्रीगणेशदासजी हैं। प्रत्येक अध्याय के अन्त में वह अपना नाम लिखते हैं। कवि ने इस से अधिक अपने विषय में कुछ नहीं लिखा और न ही उन की कोई दूसरी रचना मेरे देखने में आई है। गणेशदास पंजाब के किस प्रदेश के निवासी थे, यह निश्चयपूर्वक नहीं बताया जा सकता। हाँ उनकी तीनों काव्य रचनाओं से अनुमान लगाया जा सकता है कि वह पश्चिमी पंजाब के निवासी होंगे, क्योंकि कई स्थानों पर ऐसे शब्द मिलते हैं जो केवल भुग, शाहपुर तथा मुलतान के जिलों में ही बोले जाते हैं। चाहे उन की शब्दावली हिन्दी की ऐसी है, तो भी उस में पंजाबी-पन की छाप स्पष्ट दीख पड़ती है। कई संस्कृत तथा हिन्दी शब्दों को पंजाबी ढंग से लिखा गया है। उदाहरणार्थ 'अरि' के स्थान पर 'अर' लिखा है। कवि के विषय में इस काव्य के द्वारा जो कुछ अधिक परिचय प्राप्य है वह यह है कि गणेशदास किसी मन्त्री या जागीरदार की निजी नौकरी में नहीं थे। क्योंकि इस पद्य-रचना में किसी की अधिक प्रशंसा अथवा बुराई नहीं लिखी मिलती। इन तीनों पद्य-रचनाओं में उन सैनिक अधिकारियों तथा सिपाहियों का वर्णन है जो युद्ध में पर्याप्त भाग लेते रहे। कवि ने उन छोटे सिपाहियों की प्रशंसा उसी प्रकार की है जिस प्रकार कि एक बड़े अधिकारी की। जहाँ भी कोई वीर सैनिक प्रशंसा का पात्र होता है वह वहीं कवि से अपना पूर्ण भाग प्राप्त कर लेता है। कवि कहीं भी किसी में अपनी विशेष रुचि प्रकट नहीं करता और न ही किसी के उच्च-पद अथवा वंश को महत्व देता है।

यहाँ यह प्रश्न भी हो सकता है कि क्या कवि गणेशदास महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में किसी उच्च पदवी पर आरुढ़ थे, क्योंकि कवि का छोटी से छोटी घटना से परिचित होना तथा उसका सविस्तर वर्णन करना इस मत की पुष्टि करता है। यह बात तभी सम्भव हो सकती है जब समाचारों से अवगत होने का मार्ग उन पर सरकारी तौर पर खुला हो और युद्धों के समाचार उन के पास प्रतिदिन पहुँचते रहते हों। अथवा युद्ध सम्बन्धी समाचारों से उन का विशेष वास्ता पड़ता हो। कम से कम यह तो कहा जा सकता है कि उन्हें प्रत्येक समाचार की सूचना मिलती रहती थी। एक दो प्रसंगों से तो यह भी अनुभव किया जा सकता है कि वह सब समय महाराजा की सेवा में प्रस्तुत रहते थे। मैंने महाराजा रणजीतसिंह तथा खालसा दरबार के सं: १८११-१८४६ तक के सब लेख-पत्र पाँच वर्ष का समय लगा कर पढ़े हैं और उन्हें व्यवस्थित किया है। देखो परिशिष्ट न० ७। उन में सब सरकारी नौकरों के नाम लिखे मिलते हैं। परन्तु कवि गणेशदास का नाम कहीं नहीं। मुन्शी सोहनलाल की पुस्तक 'उमदात्तलतवारीख' अथवा 'रोज़नामचा रणजीत सिंह' में महाराजा की प्रति दिन की दिनचर्या लिखी हुई है। परन्तु गणेशदास का नाम वहाँ भी कहीं नहीं मिलता। महाराजा रणजीतसिंह के दरबार का कोई विरला ही नौकर ऐसा होगा जिसका नाम इस पुस्तक में किसी न किसी सम्बन्ध में एक आध बार न आया हो।

इन बातों से यह परिणाम निकलता है कि हो न हो गणेशदास महाराजा साहब के व्यक्तिगत सेवकों की श्रेणी में से होंगे और उन्हें वेतन भी सर्फे-इजूरी में से मिलता होगा। उस समय ऐसे लोगों की संख्या काफी से अधिक थी। इन के जिम्में कोई न कोई कार्य होता था। ऐसे कुछ कर्मचारी गडवी-खाना (लोटा-घर), लस्सी खाना और 'गुलाब-खाना' आदि में नियुक्त थे। कुछ के जिम्में पहनने के वस्त्र, छत्र और छत्री ले जाना (छाता बरदारी), और कुर्सी आदि उठा ले जाने के काम थे। वे सब साधारण बोल-चाल में "भइए" कहलाते थे, चाहे वह कोई भी काम करते हों।

यदि उन में कोई विशेष चतुर और बुद्धिमान् निकलता तो उसे कई बार प्रबन्ध कार्यों में भी लगा दिया जाता था।

मेरे पास हस्तलिखित लेखपत्रों का एक संग्रह है। जिस में काल-क्रमानुसार, शृङ्खला-बद्ध इन ४६२ सरकारी आज्ञा-पत्रों (पर्वानों) की प्रतिलिपि है, जो सरदार तेजासिंह जरनैल कम्पू-ए मुअल्ला के नाम (१ मगसर स० १८६० से ७ पोस १८६१) १४ नवम्बर सन् १८३३ से २२ दिसम्बर सन १८३४ तक भेजे गये थे। इन आज्ञा-पत्रों में से एक में भैया गणेशदास का नाम आता है, उस को १४ नवम्बर १८३३ में १५० सवार सेना के साथ एक विशेष कार्य पर लगाया गया था। सम्भव है कि कवि गणेशदास यही व्यक्ति हों। भैय्यों में और भी कई पढ़े लिखे व्यक्तियों के नाम लिखे हैं। यह केवल मेरी कल्पना है, पूर्ण विश्वास से कुछ कहा नहीं जा सकता।

कवि-रचना का उद्देश्य—

हो सकता है कि तीनों 'फतहनामे' कवि ने महाराजा से आज्ञा पाकर लिखे हो और इन के लिए इनाम भी प्राप्त किया हो। परन्तु सामाजिक प्रेम तथा देशभक्ति की जो धारा इन छन्दों में कहीं कहीं, बहती देख पड़ती है उस से तो यही प्रतीत होता है कि कवि गणेशदास ने पंजाबी वीरो की उस अद्वितीय वीरता से, जो इन्होंने पठानों के साथ युद्ध में दिखलाई थी, प्रेरित होकर यह कविता लिखी है। इस में सन्देह नहीं कि रणजीतसिंह के राज्य से पूर्व पंजाब में अहमदशाह अब्दाली और उस के पठानों का बहुत आतंक छाया हुआ था। यद्यपि गणेशदास नाम से सिक्ख नहीं था तो भी उस की कृतियों से पता चलता है कि वह खालसा धर्म की भावनाओं से सराबोर था। उसने प्रत्येक घटना को एक सच्चे सिक्ख की दृष्टि से देखा है। इसलिए कवि प्रत्येक अध्याय के अन्त में लिखते हैं कि गुरु पंथ के इस यश को पढ़ने और सुनने वाले दोनों को ही लाभ होता है। उन्हें संसार के चारों पदार्थ

अर्थात्—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है। कवि द्वारा खालसा का आदर-सत्कार प्रशसनीय है।

रचना काल—

कवि गणेशदास ने अपनी रचनाओं में मुलतान, नौशहरा तथा अकोड़ा (पेशावर) के युद्धों के वर्ष तथा दिनांक तो लिखे हैं परन्तु यह कहीं नहीं बतलाया कि उन्होंने ये रचनाएँ कब कीं। उन्होंने यह भी स्पष्ट नहीं किया कि प्रत्येक लड़ाई का वृत्तान्त उस लड़ाई की समाप्ति पर ही लिखा गया था या तीनों लड़ाइयों का वृत्तान्त किसी समय इकट्ठा ही लिखा गया था। अतः विश्वास से नहीं कहा जा सकता कि कवि ने अपनी रचनाएँ कब और कौन से वर्ष में लिखीं। हाँ, आन्तरिक प्रमाणों से यह पता अवश्य लगता है कि यह रचनाएँ १८४५-४६ अर्थात् अंग्रेजों और सिक्खों के युद्धों से पूर्व लिखी जा चुकी थीं।

मुलतान युद्ध अध्याय ५ पद्य न. १६ में कवि लिखते हैं कि जब खालसा सेना की विजय की सूचना अंग्रेजों को मिली तो उन्हें यह समाचार एक आँख न भाया, क्योंकि वे महाराजा की विकासोन्मुख शक्ति को सहन नहीं कर सकते थे। अगले दो तीन पदों में गणेशदास अंग्रेजों को सम्बोधित करके कहते हैं कि अब अपनी रक्षा का प्रबन्ध करे क्योंकि सिक्ख दिक्षी पर अधिकार किये बिना नहीं रहेंगे। इसी प्रकार पेशावर युद्ध न. १, पद्य ७५ में बाबा फूलसिंह की वीरता का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है कि इस वीर की वीरता की धाक लोगों के हृदयों में पहली बार उस समय जमी जबकि सं० १८०८ में अंग्रेजों की एक सैनिक टुकड़ी के साथ अचानक मुठभेड़ हो जाने पर बाबा जी ने उन्हें रण से भगा दिया था। एक दूसरे स्थान पर फूलसिंह की वीरगति के सम्बन्ध में कवि लिखते हैं कि अंग्रेजों से लोहा लेने की इच्छा प्रारम्भ से ही इसके मन में थी। परन्तु १८२३ में शहीद हो जाने के कारण यह मनोकामना उसके जीवन-काल में पूरी न हो सकी थी इसलिए आशा की जाती

है कि वे अवश्य ही भुजगी के रूप में अवतरित हो कर एक बार अगरेजों से युद्ध करेंगे।

१८४८-४९ में खालसा राज्य का अन्त हो गया और अगरेजों का राज्य स्थापित हो गया। इस लिये अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि कवि गणेशदास की यह रचना अगरेजों की विजय के पीछे की होती तो उपर्युक्त बातों का इस में लेखबद्ध होना सम्भव न था। अतएव यह रचना १८४६-४९ से पूर्व की लिखी हुई है।

इसी प्रकार यदि खलीफा सैयद अहमद वाली लड़ाई (पेशावर युद्ध नं २) की रचना को ध्यान से पढ़ा जाय तो अनुमान लगाया जा सकता है कि यह सन् १८३१ से पहले की लिखी हुई है। खलीफा ने खालसा राजधानी के अटक पार इलाके में १८२७-१८३१ ई में पांच वर्ष लगातार विद्रोह मचा रखा था। तीन चार बार स्थान-स्थान पर उसके साथ खालसा सेना के युद्ध भी हुए। अन्तिम लड़ाई १८३१ ई में धमतौड़ की पहाड़ियों में हुई, जिस में खलीफा मारा गया। अतएव पेशावर युद्ध नं २ की रचना-तिथि १८३१ ई से पूर्व की हो सकती है, पीछे की नहीं। यदि यह रचना १८३१ ई. के पश्चात् लिखी जाती तो यह सम्भव न था कि उसमें खलीफा की मृत्यु का जिक्र न हो। विशेषकर इस कारण कि खलीफा लड़ाई में एक सिक्ख सैनिक की गोली का निशाना बन गया हो और उस दशा में जबकि उस का मुंड रुग्ड से पृथक् कर के राजकुमार शेरसिंह के पास, जो उस कटक का सेनापति था, भेजा गया हो और राजकुमार ने उसी समय चित्रकार को बुलाया हो और उस का चित्र बनवा कर लाहौर दरबार में महाराजा को समर्पित किया हो। गणेशदास इन बातों को भूल नहीं सकते थे।

इसी प्रकार पेशावर युद्ध नं० १ में बाबा फूलासिंह अकाली की समाधि बनाने के विषय में कोई संकेत तक नहीं है। गो यह समाधि युद्ध-क्षेत्र में, जहाँ कि ये वीर गति को प्राप्त हुए थे, अर्थात् अक्रगानी इलाका के

मध्य में बनाई गई थी। अलबत्ता बनाई गई थी उनके शहीद होने के दस वर्ष पीछे, जब कि १८३४ ई. में अटक-पार का प्रदेश पूर्णतया महाराजा के अपने अधिकार में ले लिया। इसलिये मेरा यह अनुमान है कि यह रचना भी १८३४ ई. से पहले की है, बाद की नहीं। मेरी धारणा है कि कवि ने प्रत्येक घटना का वर्णन युद्ध की समाप्ति पर ही किया है। वास्तव में फतह नामा का उद्देश्य भी यही होता है कि विजय की घोषणा उसी समय ही कर दी जाय।

कवि की निष्पक्षता—

यह बात भी उल्लेखनीय है कि चाहे कवि के हृदय में अपनी जाति और देश के लिये स्नेह तथा आदर फूट फूट कर भरा हुआ था फिर भी उसने शत्रुओं का वर्णन करते हुए भी किसी प्रकार के पक्षपात से काम नहीं लिया और अपनी लेखनी को उन के लिये कटु और घृणित शब्द लिखने से सर्वथा रोके रखा है। अफगानों के पौरुष और वीरता की सराहना भी खालसा की वीरता से कम नहीं की। मुलतान के घेरो का वर्णन करते हुए गणेशदास लिखते हैं कि अफगानों की रक्त सेना ने किले की ओर बढ़ती हुई खालसा सेना का एक बार तो मुंह मोड़ दिया। दुर्ग से चलती हुई तोपो की गरज ने सिक्ख सेना को पीछे हटने पर बाध्य कर दिया। आगे चल कर कवि वर्णन करते हैं कि दोनों ओर के युद्ध के समय में बूढ़ा नवाब मुजफ्फर खां अपनी अफगानी शान और मर्यादा का पालन करते हुये खज्ज लेकर किले के द्वार पर अन्तिम श्वास तक लड़ता रहा।

आय के तीर तमाचे चलाये, लडे सो भले तलवार वगाये।

सिंहन मार विदार दिये, बडे सूरमे थे पर भूम गिराये।

(मुलतान युद्ध अध्याय ५, १४)

इसी तरह टिब्बा टीरी की लड़ाई का वर्णन करते हुए कवि लिखते हैं कि पठानी सेना ने महाराजा रणजीतसिंह की प्यादा पलटनों और अश्वा-रोहियों को दो बार पीछे हटने पर बाध्य कर दिया, और सिक्ख सेना को

ऐसी शोचनीय अवस्था में डाल दिया कि महाराजा को गुरु का ध्यान कर के प्रार्थना (अरदास) करनी पड़ी। उन्होने 'अपने पथ को आपे राखे' पर निश्चय करके गुरु गोविन्द सिंह की महती शक्ति के सम्मुख सिर झुकाया और शुद्ध हृदय से विनती की, ताकि युद्ध का पाँसा पलट जाय और सिक्ख सेना को सफलता प्राप्त हो। यह विजय सिक्ख सेना को बहुत मेंहगी पड़ी, क्योंकि फूनासिंह, गर्भासिंह, गोरखा जरनैल बलभद्र आदि अनुपम वीर इस युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए। उपर्युक्त घटनाओं में कवि की निष्पक्षता का पुरा-पुरा परिचय मिलता है।

काव्य की भाषा, शैली और साहित्यिक महत्त्व—

गणेशदास पंजाबी कवियों में वीर रस के उत्तम कवि थे। उन्होंने अपनी रचना प्राचीन हिन्दी कवियों के ढग पर की है। उसी भान्ति दोहे, चौपाइयाँ, सवैया और सोरठे लिखे हैं। इनकी भाषा तो बहुधा ब्रज भाषा ही है, किन्तु इस पर पंजाबी का प्रभाव स्पष्ट देख पड़ता है। इसमें बोलचाल के विशेष पंजाबी शब्द और क्रियाएँ बहुत पाई जाती हैं। जैसे कि अगों, ताँते, सदाएँ खैणा, सन्धयाँ बेलें, बोडना, कमावदे, जद कद, दरयाओं पार आदि। लिखते समय भी कवि गणेशदास ने हिन्दी के कई एक शब्दों को पंजाबी रूप देकर लिखा है। जैसे नृप को 'निरप', सब को 'सभ', युद्ध को 'जुद्ध' आदि।

पंजाबी शब्दों का अधिक प्रयोग कवि गणेशदास ने उस घटना का वर्णन करते समय किया है जो महाराजा के और नवाब के वकीलों में परस्पर सधि (Peace) के लिए हो रही थी, या उस समय जब कि नवाब अपने मंत्रियों तथा भाई भतीजों से इसके सम्बन्ध में बातचीत करता है। ऐसा करने से कवि अपनी रचना को वास्तविकता का रंग (realistic touch) देने का प्रयत्न करते हैं। पंजाबी शब्दों के अतिरिक्त अवधी भाषा, उर्दू और फ़ारसी के शब्द भी कहीं कहीं मिलते हैं। एक दो स्थानों पर अंग्रेजी और फ़्रांसीसी भाषा के शब्दों का प्रयोग है। ये सभी शब्द महाराजा रणजीतसिंह

की सेना में प्रचलित हो चुके थे और सरकारी पत्रों में भी व्यवहार में लाये जाते थे ।

काव्य-कला की दृष्टि से यदि देखा जाय तो सम्भव है कि कवि गणेशदास की कविता हिन्दी के उच्च कोटि के कवियों की कविता की बराबरी न कर सके, फिर भी उनके छन्दों में प्रवाह तथा माधुर्य दोनों पाये जाते हैं । कवि ने अपनी कविता में उत्साह, वीरता तथा देशभक्ति के जिन भावों को प्रकट किया है उनको दृष्टि में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि हमारे पंजाबी कवि भी, हिन्दी के उस विख्यात कवि भूषण के जोड़ के हैं जिस ने शिवाजी मराठे की वीरता के कार्यों को कविता में लिखा था ।

क्रोध, भय और प्रोत्साहन प्रभृति मानसिक भावों और आवेगों का वर्णन इस कवि की कविता में कम है । किन्तु जहाँ भी ऐसा वर्णन है वहाँ वह बहुत सुन्दर तथा सुचारु रूप में है ।

इस रचना में कई स्थानों पर अनुप्रास अलंकार का प्रयोग भी किया गया है, जैसे—

चटक पटक लट पट लड़े, भट सटकार कटार ।

तुरक जो मारे सिंहन को, सिंह सो दये विडार ।”

एक दूसरे स्थान पर लिखा है—

‘तड़ाक तीर काढ कै कड़ाक सु भट्टाक मारे,

लागत पटाक दे सटाक होत ढेर हैं ।’

इसी प्रकार उत्प्रेक्षा अलंकार का भी कई स्थानों पर प्रयोग किया है, जैसे —

“पेख दरवार, मानो आप करतार,

गुरु रूप हूँ को धार के उधारिवे को आयो है,

कियो जाय के दीदार सुख पायो है अपार,

ऐसे वचन सु सार स्त्री मुख ते अलायो है”

भीतरी प्रमाणों से जान पड़ता है कि कवि गणेशदास बहुत बड़े ज्ञानी । थे हिन्दू धर्म के प्राचीन प्रमाणों और सिक्ख धर्म के इतिहास तथा

मर्यादा से वह खूब परिचित थे। कवि ने अपनी इस रचना में कई उदाहरण गुरु नानकदेव की जन्म साखियों में से भी दिए हैं। उन्होंने गुरु नानकदेव जी से बाबर बादशाह की बातचीत, कारु की गोष्ठी (वार्तालाप) आदि जैसी कुछ सिक्ख जनश्रुतियों को भी वर्णन किया है। उन्हें भाई गुरुदास जी की रचना का ज्ञान भी जान पड़ता है, क्योंकि भाई गुरुदास जी वाला लकड़ी का उदाहरण—‘काठ न डोबे पाल के, संग लोह तराया’—अपनी रचना में दिया है।

इस के अतिरिक्त कवि गणेशदास ने प्रचुर मात्रा में उन शब्दों तथा मुहावरों का भी प्रयोग किया है जो खालसा दरबार में ही प्रचलित थे या जो सिक्खों के अपने सामाजिक-जीवन में ही विशेषकर प्रयुक्त होते हैं। नीचे बाने बनाना, जयकारा बुलाना, कमरा कसना, सुचेत होना, वाहगुरु का नाम जपना, दल साजना, बिरद की लाज रखना, वाह गुरु की फतह बुलाना, सुरधाम सिद्धाना, गुरु चरणों में निवास करना, भुजग सिंह, औरंगजेब को सदा नौरगा के नाम से पुकारना इत्यादि।

हिन्दी के प्राचीन कवियों की तरह गणेशदास के काव्य में भी अनेक मार्मिक और स्मरणीय उक्तियाँ यत्र-तत्र बिखरी हुई हैं, जो पाठकों के मन पर गहरा प्रभाव छोड़ जाती हैं। उदाहरण के लिए कुछ उक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं :—

गुड दिये मरे विख काहे धरे, ताकी जननी लाज है रन मे दैत जो पीठ,
यह जोवन गति मेघ का सावन को हड जान, कायर दोई जो रण ते भागे
ता के कुल कलक बड लागे, कागन मे कोयल बसै बोलत अपने भाये,
सेवक औगुण बहुत करे साहिव बखशश कीन।

काव्य-सूक्त—

इस रचना के पढ़ने से कवि की काव्य सम्बन्धी सूक्त-वृक्त का भी अच्छा परिचय मिलता है। मुलतान की लड़ाई के प्रारम्भ के पहले नवाब मुजफ्फर खाँ के भेजे हुए दूत जब महाराजा के अधिकारियों को द्रव्य

समर्पित करते हैं और उन से खालसा सेना को लौटा ले जाने की प्रार्थना करते हैं तो उस समय की दोनों ओर की बात-चीत में जो कुछ वर्णन किया गया है उस से कवि की काव्य-प्रवीणता का ही नहीं, वरन् अच्छी नैतिक सूझ का भी परिचय मिलता है। आगे चल कर कवि ने श्री गुरु गोबिन्दसिंह और शाह शमसतबरेज सम्वाद द्वारा अपने इतिहास ज्ञान और खालसा पन्थ की मर्यादा से सुपरिचित होने का स्पष्ट प्रमाण दिया है। कवि ने युद्धस्थल में दोनों ओर की सेनाओं के गुत्थम-गुत्था होने तथा मार-काट करने का जो चित्र प्रस्तुत किया है उस से उनकी काव्य-सूझ का अनुमान भलो भाँति लगाया जा सकता है। जिस निपुणता से कवि ने मुलतान के घेरे, टिब्बा टीरी के भीषण युद्ध और अकोडा के निकट सैदेवाल के स्थान पर सैयद अहमद की अफगानी सेना के साथ खालसा सेना के मुकाबले का वर्णन किया है और अपने छन्दों द्वारा प्रत्येक युद्ध का सजीव दृश्य हमारे सम्मुख उपस्थित किया है, उससे इस रचना का महत्त्व दुगुना हो जाता है। कवि इन खूनी नाटकों के पात्रों को इस प्रकार एक-एक कर के हमारी आंखों के सामने ले आता है, मानो वे जीते जागते प्राणी हो। बस इस प्रकार मिहो के विजयघोष 'श्री वाहगुरु जी का खालसा, श्री वाहगुरु जी की फतह' की अनन्त गूँज हमारे कानों में अब भी गूँजती और सुनाई पड़ती मालूम होती है।

ऐतिहासिक मूल्य—

मुलतान युद्ध के तीसरे अध्याय में कवि गणेशदास ने कल्पना की उड़ान से काम लेते हुए बतलाया है कि श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी स्वयं स्वर्ग से रणभूमि में आए और एक लम्बी चौड़ी बात-चीत उन के और मुलतान के पीर शमसतबरेज के बीच हुई। इसी तरह टिब्बा टीरी के स्थान पर स्वयं दशमेश जी (गुरु गोबिन्द सिंह) युद्ध में भाग लेते हुए दिखलाए गए हैं। इन दो एक उदाहरणों के अतिरिक्त कवि ने अन्य कहीं भी ऐसी कल्पना से काम नहीं

लिया। न ही कोई ऐसी घटना मेरी दृष्टि में आई है जो ऐतिहासिक दृष्टि से मानने योग्य न हो। मैंने इस रचना में दी हुई घटनाओं का मिलाप महाराजा रणजीत सिंह के दरबारी इतिहासकारों की पुस्तकों, अन्य सम-कालीन (हिन्दुस्तानी तथा यूरोपियन) लेखकों की रचनाओं, मुलतान के नवाब के कुल-सम्बन्धी लेख-पत्रों तथा अन्य इतिहासकारों से किया है और उनको ठीक ही पाया है। ऐतिहासिक घटनाओं के अतिरिक्त जिन अधिकारियों तथा सिपाहियों के नाम भी कवि ने अपने छन्दों में दिए हैं, लगभग सब के नाम महाराजा रणजीत सिंह के दरबार के सेनासम्बन्धी पत्रों में मिल गए हैं।* सारांश यह है कि चाहे किसी भी दृष्टि से विचार किया जाय और चाहे किसी भी कसौटी पर परखा जाए, यह रचना ऐतिहासिक दृष्टि से ठीक और प्रामाणिक सिद्ध होगी।

मैं इस काव्य-संग्रह को केवल एक ऐतिहासिक मसविदा या प्रालेख ही नहीं, वरन् एक राष्ट्रीय सम्पत्ति भी समझता हूँ। सत्य तो यह है कि कवि की इस रचना ने मेरी दृष्टि में भाटों और चारणों के गीतों का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ा दिया है। खेद तो इस बात का है कि कवि की गुमनामी और उसकी अपने व्यक्तित्व के सम्बन्ध में बरती हुई उपेक्षा ने हमें उस उच्च कोटि के मनुष्य की जीवन कथा से वंचित कर दिया है। गणेशदास की स्वाभाविक रुचि से ज्ञात होता है कि उन्होंने अन्य काश्मीर और मनकेरा की विजय आदि जैसी दूसरी बड़ी-बड़ी घटनाओं के विषय पर भी अवश्य कविताएँ की होंगी। यदि किसी प्रेमी पाठक को कोई ऐसी रचना मिल जावे तो मेरा अनुरोध है कि वह इस बारे में मुझे अवश्य सूचित करने की कृपा करे, ताकि उसको प्रकाश में लाने का प्रयत्न किया जा सके।

मूल ग्रन्थांश—

मूल वचन तैयार करते समय मुझे सब से अधिक कठिनाई इस कारण हुई

* इन सना सम्बन्धी पत्रों को चालीस वर्ष पहले मैंने व्यवस्थित किया था।

कि मेरे पास सिवाय उस पाण्डुलिपि के, जो मैंने पच्चीस वर्ष पहले मिली पाण्डुलिपि से नकल करा रखी थी, कोई दूसरी पाण्डुलिपि नहीं थी। असली मसविदा अर्थात् पाण्डुलिपि जिसको लायब्रेरियन ने मेरे पास भेजा था वह भी अब हाथ से जा चुका था* ।

नकल किया हुआ मसविदा भी ऐसी असावधानी से नकल किया गया था कि पदछेद का ध्यान न रख कर लिपिकार ने एक छन्द का अन्तिम शब्द अगले छन्द के पहले शब्द के साथ जोड़ दिया था। इस से अर्थ का अनर्थ हो गया। यदि उसकी शुद्धि के लिए मुझे अपने मान्य मित्र प्रिन्सिपल जोधसिंह जी से, जिन्हो ने सिख साहित्य का विशाल अध्ययन किया है, समय पर सहायता न मिलती, तो शायद मेरे लिए इस कार्य को पूरा करना कठिन हो जाता। अतएव उन की सहायता और प्रयत्न से इन त्रुटियों को दूर किया गया। परन्तु जो त्रुटि किसी प्रकार भी दूर नहीं की जा सकी वह कुछ एक छन्दों में छूटी हुई पंक्तियाँ थीं। यह बात निश्चय-पूर्वक नहीं कही जा सकती कि ये छूटे हुए पद मेरे मसविदा के लिपिकार से छूट गए हैं या मूल मसविदे में ही नहीं थे। अतएव मूलवचन में उनको ज्यों का त्यों ही रहने दिया गया है। स्थान स्थान पर पाद-टिप्पण में उन की ओर संकेत कर दिया गया है। इस के अतिरिक्त मूल वचन में चार पाँच शब्द ऐसे भी पाये गये हैं जिन के अर्थ स्पष्ट नहीं हैं। किन्तु पाद-टिप्पण में उनकी

*यह काव्य संग्रह, जैसा कि इस पुस्तक के पञ्चाशी सस्करण में विस्तार के साथ बताया जा चुका है, विश्वविद्यालय पुस्तकालय, लाहौर के पुस्तकालयाध्यक्ष श्री लम्बू राम ने स. १९२५ ई. में मेरे पास भेजा था। मैंने इसे पुस्तकालय के लिए खरीद लेने की सम्मति दी थी। परन्तु मूल्य का निर्णय न हो सकने के कारण उसका स्वामी अपनी पाण्डुलिपि लौटा ले गया और फिर उसका कुछ पता न चल सका। सौभाग्य से मैंने इस की एक प्रतिलिपि करवा ली थी। वही पच्चीस वर्ष पीछे मेरे काम आई।

ऐतिहासिक घटना देकर मैंने ऐसे शब्दों का आशय स्पष्ट करने का यत्न किया है।

वचनारम्भ—

यद्यपि कवि ने प्रत्येक घटना का वर्णन विस्तार-पूर्वक और सिलसिलेवार किया है, तथापि समकालीन होने से उस ने कई एक ऐसी घटनाओं का उल्लेख नहीं किया, जिन्हें उस समय के साधारण लोग भली भाँति जानते थे। परन्तु समय के बीत जाने पर उन साधारण घटनाओं का भी ज्ञान अब इतिहासकारों तथा पाठकों को होना आवश्यक है जिस से कवि की रचना का समझना सुगम तथा सरल हो जाय और साथ ही इस ऐतिहासिक महत्त्व का परिचय भी हो जाय इसी बात को ध्यान में रखते हुए मैंने प्रत्येक युद्ध के मूल वचन के पहले एक वचनारम्भ लिख कर इनकी पृष्ठभूमि देने का प्रयत्न किया है। इस के अतिरिक्त प्रत्येक वचनारम्भ में इन युद्धों के कारणों पर भी प्रकाश डाला गया है। इस के साथ साथ दोनों पक्षों की सेनाओं की संख्या इन के अधिकारियों की विशेषताये, युद्धों के स्थान और जीत या हार का आगामी इतिहास पर प्रभाव, इत्यादि बात भी दी गई हैं ताकि इन वचनारम्भों पर एक दृष्टि डालने के पश्चात् यदि पद्य का पढ़ा जाय तो इसका समझना सरल हो जाय।

पाद-टिप्पण तथा सूची-पत्र—

इन के अतिरिक्त मूल वचन के विवरणों को अधिक सुगम बनाने के भाव से उन के नीचे पाद-टिप्पण दे दिये हैं। यद्यपि इन टिप्पणियों की संख्या कुछ अधिक हो गई है तो भी मैंने उन को रखना ही आवश्यक समझा है। जिन पंजाबी, फारसी या अंग्रेजी शब्दों को कवि ने हिन्दी का रूप दे रखा है, उन के भी अर्थ और भाव पाद-टिप्पणियों में दे दिए गए हैं।

पुस्तक के अन्तिम भाग में सात सूची-पत्र दिए गए हैं। उन में से प्रथम,

और द्वितीय में रणजीतसिंह के समय के समस्त सरकारी आय-व्यय, और तीसरे और चौथे में सेना की संख्या और उन के वेतन दिए गए हैं। पांचवें में महाराजा के उन प्रसिद्ध फौजी अफसरों का संक्षेप में वर्णन है, जिन्हो ने उन तीन युद्धो मे भाग लिया था और जिन का उल्लेख कवि ने अपनी रचना मे किया है। सूची न० छः में महाराजा के यूरोपियन अफसरों के नाम और उन के वेतन हैं। सातवें न० पर उन पुस्तकों की सूची दी गई है जिनके विवरण पाद-टिप्पणियों में दिए गए है।

इस अवसर पर मैं विश्वेश्वरानन्द वैदिक संस्थान के प्रकाशन विभाग को धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिस ने इस वीर-काव्य का हिन्दी संस्करण प्रकाशित करने का कार्य-भार उठाया है। इस के अतिरिक्त मैं विशेषरूप से श्री देवदत्त जी का अभारी हूँ, जिन्हो ने मेरी तैयार की पाण्डुलिपि में अनेक उपयोगी सशोधन किए हैं, और अपनी देख-रेख मे पुस्तक का सुदृढ़ करवाया है।

संस्थान से प्रकाशित पत्रिका 'विश्व-ज्योति' के सुयोग्य सहकारी सम्पादक श्री सन्तराम जी के प्रति मैं हार्दिक कृतज्ञता का अनुभव कर रहा हूँ जिन्होंने ने पाण्डुलिपि को आद्योपान्त पढ़ने के बाद अपने विद्वतापूर्ण सुझाव दे कर और कवि द्वारा प्रयुक्त पंजाबी शब्दों के स्थान पर उपयुक्त हिन्दी शब्द बता कर विशेष अनुग्रह किया है। साथ ही मैं अपने आदर योग्य मित्र पं० विश्वबन्धु जी के प्रति भी आभार प्रकट करना चाहता हूँ जिन से प्रोत्साहन और प्रेरणा पाकर मैंने चार वर्ष पहले इस पुस्तक का हिन्दी संस्करण तैयार करने का निर्णय किया था। अन्त मे श्री हरबसलाल बी. ए., बी. टी. जिन्होंने पुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने में मेरा हाथ बटाया है, मैं उनका धन्यवाद करता हूँ।

माडल टाऊन रोहतक }
मई, १९५८

सीताराम कोहली

मुलतान-युद्ध

वचनारम्भ

नवाब शुजाहखाँ सूबेदार मुलतान

मुलतान प्रान्त मुगल राज्य का एक भाग था । आईन-अकबरी में इस का नाम सूबा 'दारुलामान मुलतान' लिखित है । महाराजा रणजीतसिंह के लेख-पत्रों में भी इसका यही नाम लिखा मिलता है । सन् १७५२ ई० में अहमदशाह अब्दाली ने इसे जीत कर काबुल के राज्य में मिला लिया, और अपने एक निकट सम्बन्धी शुजाहखाँ सदोज़ई को इस का राज्यपाल नियुक्त कर दिया । सन् १७७२ में जब मिर्खसरदारो ने जोर पकड़ा तो भंगी मिसल के सस्थापक सरदार भण्डासिंह ने नवाब शुजाहखाँ को मुलतान से निकाल कर स्वयं इस पर अधिकार कर लिया । परन्तु भंगी मिसल के सरदारों का मुलतान पर अधिकार केवल आठ वर्ष ही रहा । इस के बाद अहमदशाह अब्दाली के पुत्र तैमूर शाह ने इसे दूसरी बार जीत लिया, और शुजाहखाँ के पुत्र मुजफ्फरखाँ को इसका राज्यपाल बना दिया । महाराजा रणजीतसिंह ने यह प्रान्त मुजफ्फरखाँ से ही सन् १८१८ ई० में छीन कर अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया था ।

रणजीतसिंह के आरम्भिक आक्रमण

रणजीतसिंह ने मुलतान पर छ बार आक्रमण किया । किन्तु प्रत्येक बार नवाब से कर-प्राप्ति के पश्चात् वह वापस लौट आता रहा । ऐसा प्रतीत होता है, कि महाराजा ने पहले तीन आक्रमण तो सन् (१८०२, १८०६ व १८१० ई० में) केवल नवाब की सैनिक शक्ति का अनुमान लगाने के लिए

हो किए। परन्तु अपने चौथे आक्रमण (सन् १८१० ई०) के समय रणजीतसिंह मुलतान पर पूर्ण रूप से अधिकार करने पर कटिबद्ध था। इस के बाद के आक्रमण भी इसी भावना से किये गये थे। किन्तु उसे पूर्ण सफलता सन् १८१८ ई० के आक्रमण से ही हुई। इसी युद्ध का वर्णन कवि गणेशदास ने अपनी इस रचना में किया है। अतएव हम भी यहाँ उस का वर्णन विस्तार पूर्वक करेंगे।

आक्रमण की तैयारिया

सन् १८१७ ई० का अन्तिम भाग बड़े पैमाने पर सैनिक तैयारियों में खर्च किया गया। लाहौर से मुलतान जाने वाली सबक पर स्थित प्रत्येक ज़िले के अफसरों और जागीरदारों को विशेष रूप से आज्ञा दी गई, कि वे रास्ते में चढ़ाई पर जाने वाली सेनाओं को छकड़े, गड्ढे बँल, खच्चर आदि माल ढोने के वाहनों, खाद्य पदार्थ तथा अन्य आवश्यकताओं के सम्बन्ध में पूरी पूरी सहायता पहुँचायें। रावी और चनाब के पत्तनों पर जितनी नौकायें थी, उन सब को सैनिक आवश्यकता के लिए अधिकार में ले लिया गया। डाक के आने जाने का प्रबन्ध भी आवश्यकता के अनुसार कर दिया गया। प्रत्येक तीसरे मील पर डाक चौकियाँ बना दी गईं, ताकि महाराज तक युद्ध की सूचनाएँ नियमित रूप से प्रतिदिन पहुँचती रहें।

जनवरी सन् १८१८ ई० को सेनाओं का प्रस्थान

इस आक्रमण के लिए २०,००० सेना एकत्र की गई। इस में प्यादे, सवार और तोपखाना सभी थे। तोपे-कलाँ अर्थात् भगियों की बड़ी तोप, जिस में एक मन पक्का वज़नी गोला पड़ता था, अमृतसर से मगवा कर मुलतान भेज दी गई। मुलतान जाने वाली सेना के अपने बेलदारों के अतिरिक्त ५०० दूसरे बेलदार भरती किए गए, ताकि युद्ध-स्थल में सुरंगें खोदने और मोर्चे बिछाने का कार्य सुगमता तथा शीघ्रता से हो सके। इस सेना की कमान राजकुमार खड्गसिंह के सिपुर्द की गई, चाहे

चारस्तव में पूर्ण बागडोर सेनापति मिश्र दीवानचन्द के हाथ में ही थीं। (परिशिष्ट १) मिश्र दीवानचन्द उम समय तोपखाने का सब से बड़ा अधिकारी था। राजकुमार खड्गसिंह की माता महारानी दातार कौर भी अपने पुत्र का उत्साह बढ़ाने के लिए उसके साथ गईं। चढ़ाई करने से पहले राजकुमार खड्गसिंह बाबा साहबसिंह बेदी का आशीर्वाद लेने शाहदरे गया। महाराजा रणजीतसिंह ऐसे अवसरों पर सदा ऐसा ही किया करते थे। वे भी विजय-प्रार्थना करने अमृतसर और तरनतारन के गुरुद्वारों को गए। १४ जनवरी सन् १८१८ ई० के दिन सेना ने मुलतान की ओर प्रस्थान किया।

मुजफ्फरगढ़ तथा खानगढ़ पर अधिकार

त्रिभुं के तट पर जाकर सेना ने डेरे डाल दिए। यहाँ से एक दस्ता, जिस में जागीरदारी अश्वारोही सेना तथा कुछ तोपे थीं, किला खानगढ़ और मुजफ्फरगढ़ की ओर चनाब नदी के पार भेजा गया। फरवरी मास के अन्त तक सिक्खों ने इन दोनों किलों पर अधिकार कर लिया। सरदार हरीसिंह नलवा की सेना का कुछ भाग वहाँ पर रक्त-सेना (गैरीसन) के रूप में रख दिया गया। अब इस ओर से मुलतान दुर्ग की रक्षा के लिए नवाब को किसी प्रकार की सहायता नहीं मिल सकती थी।

सन्धि की बातचीत

इस के पश्चात् सरदार फतहसिंह आहलूवालिया के अधीन एक और सेना भी लाहौर से मुलतान वाली सेना की सहायता के लिए भेजी गई। इस सहायक सेना के पहुँचने पर सारी सेना ने मिल कर त्रिभुं से कूच किया। मुलतान के नवाब ने भयभीत होकर इस अवसर पर एक बार फिर राजस्व देकर पीछा छुड़ाने का निश्चय किया। इसी भावना से उसने अपने विशेष वकील सैयद मुहम्मद शाह तथा दीवान जमीअतराय को राजकुमार खड्गसिंह से भेंट करने भेजा। उन्होंने मिश्र दीवानचन्द द्वारा एक लाख पच्चीस हजार रुपया राजस्व के रूप में पेश किया। परन्तु उन्हें हताश लौटना पड़ा।

कारण यह कि महाराजा रणजीतसिंह ने इस बार अपने अफसरों को मुलतान के नगर तथा दुर्ग पर अधिकार करने का विशेष आदेश दे रखा था। अतएव मुजफ्फर खां के वकीलो को यही उत्तर मिला, कि यदि नवाब नगर और दुर्ग को खालसा अधिकार में दे दे तो उसके निर्वाह के लिए एक भारी वार्षिक आय की जागीर तथा निवास के लिए शुजादाबाद का नगर तथा दुर्ग दिया जायगा। परन्तु नवाब ने यह स्वीकार न किया। कवि गणेश दास ने इस अवसर का वर्णन पहले अध्याय के पद ४८ से ५८ तक में किया है।

मुलतान नगर पर अधिकार

नवाब के इस बात पर सहमत न होने पर सिक्ख सेना ने समय व्यर्थ न गवा कर शहर के हृद् गिर्द घेरा डाल दिया। मिश्र दीवानचन्द ने अपने तोपखाने तथा सैनिक दस्ता की ह्म ढग से व्यवस्था की, कि चारों ओर से मुलतान का नगर और दुर्ग उनकी मार में आ जाता था। सिक्खों ने अपनी तोपों से गोले बरसाना आरम्भ कर दिया। यह गोला-वृष्टि एक सप्ताह तक जारी रही, इस के उत्तर में दुर्ग की बाहरी दीवार के ऊपर से अफगान गोले बरसाने लगे। ह्म से लाहौर सेना के बहुत से सैनिक मारे गए। परन्तु सिक्ख तोपचियों की निरन्तर गोलावृष्टि से नगर की दीवारे और प्राचीर में कई स्थान पर छेद हो गए। सिक्खों की अपार शक्ति के सामने न टिक सकने के फलस्वरूप अब पठानों ने नगर को छोड़ कर दुर्ग में शरण ली।

दुर्ग का घेरा और महाराजा की ओर से

रक्तपात रोकने का प्रयत्न

मार्च मास के मध्य में नगर पर अधिकार हो जाने के पश्चात् सिक्ख सेनाओं ने दुर्ग के चारों ओर घेरा डाल दिया। महाराजा रणजीतसिंह के पास युद्ध का समाचार प्रतिदिन डाक द्वारा पहुँच जाया करता था। वे वहाँ से न केवल रसद तथा अन्य युद्ध-समग्री भेजते वरन् सेना के संचालन और

नेतृत्व के लिये विशेष आदेश भी भेजा करते थे। युद्ध में और अधिक रक्तपात न हो, इस भाव से महाराजा ने अपने अधिकारियों के नाम एक आज्ञा भेजी। उन्होंने कहा, कि एक बार फिर मुलतान के नवाब के सामने यह सुझाव रखा जाय, कि वह मुलतान का दुर्ग छोड़ कर जागीर लेना तथा शुजाहाबाद में रहना स्वीकार कर ले।

सब सिहन-पति सिद्द ने लिख पाति सु पठाय,

कोऊ वकील सो भेज के किला सु लियो मिलाय।

सो महाराज की आज्ञा के अनुसार नवाब के साथ पुन बातचीत आरम्भ की गई। सोहनलाल दफतर २, पृष्ठ २१७ के लेखानुसार नवाब के वकील जमीयतराय, मुहसनशाह, गुरुबख्शाराय तथा अमीनखान सन्धि की शर्तें तय करने नवाब की ओर से आये। उन्होंने यह प्रकट किया कि नवाब मुलतान का नगर तथा दुर्ग छोड़ने के लिए तैयार है, परन्तु शुजाबाद के दुर्ग पर नवाब का अधिकार रहेगा, और नवाब तथा उसके परिवार को मुलतान दुर्ग से सुरक्षित रूप से निकालने का उत्तरदायित्व सिक्खों पर होगा। इधर महाराजा की ओर से दीवान भवानीदास, दीवान पजाबसिंह, नवाब कुतबुद्दीन कसूरिया और चौधरी कादरबख्श इन शर्तों पर विस्तारपूर्वक बातचीत करने तथा समझौते को अन्तिम रूप देने के लिए नवाब के पास १६ मई के दिन दुर्ग में पहुँचे। किन्तु उनके आने से पहले ही नवाब अपने वचन से फिर चुका था। सोहनलाल के कथनानुसार नवाब को कुछ मूर्ख तथा अदूरदर्शी पठानों ने बहका कर उसके मन में यह बात भर दी, कि इस प्रकार मुलतान के नगर तथा दुर्ग को सिक्खों के सिपुर्द करके उनका आधिपत्य स्वीकार करना एक पठान को शोभा नहीं देता, और कि जागीरदार तथा पराधीनता स्वीकार करने की अपेक्षा तो मर जाना अधिक अच्छा है।

हम हैं पठान, माने और की न आन

लडे मरें जौ लौ प्राण, सदा आदि ते विहार है।

सख्त घेरा डालने के लिए महाराजा की आज्ञा

इस प्रकार जब सन्धि की बातचीत भी असफल रही, और ऊपर से ग्रीष्म ऋतु भी तेज़ी के साथ आरम्भ हो गई तो महाराजा ने सेना के अधिकारियों के नाम अपना एक विशेष सदेश जमादार खुशहालसिंह द्वारा भेजा। इस में यह आज्ञा थी कि अब शीघ्र ही धावा बोल देना चाहिये क्योंकि दुर्ग प्राप्त किये बिना, खालसा की लाज नहीं रहेगा। इसलिये प्रत्येक बड़े अफसर से लेकर छोटों से छोटे अधिकारी के लिए आवश्यक है, कि वह अपनी नौकरी का हक अदा करने और अपनी देशभक्ति तथा राज्यभक्ति का प्रमाण देने के लिए अपनी पूरी-पूरी क्षमता और शक्ति से काम ले। सांकेतिक रूप से विशेष वीरता प्रदर्शित करने के लिये पुरस्कार इत्यादि का भी विश्वास दिलाया गया। अपने प्रतापी स्वामी का संदेश सुन कर सिक्खों का साहस दुगुना बढ़ गया। एक बार फिर बड़े वेग और साहस के साथ दुर्ग को घेर लिया गया।

तोपखाने के साथ दुर्ग पर गोलाबारी

मिश्र दीवानचन्द ने अपने तोपखाने को दुर्ग के चारों ओर इस प्रकार खड़ा कर दिया, कि स्थिति की दृष्टि से सब प्रकार का लाभ स्वयं उन्हें ही प्राप्त हो। जागीरदारी घुड़सवारों को भिन्न भिन्न मोर्चों तथा दुर्ग के साथ सम्बद्ध खाइयों के समीप नियुक्त कर दिया गया। अब इन मोर्चों से भारी तोपे, जिन में सुप्रसिद्ध तोप-जमज़मा (भगियों की तोप) भी एक थी, शत्रु पर गोलों की वर्षा करने लगीं। दिन-रात की सतत बम्बारी से घेरे में आई हुई नवाब की सेना की पर्याप्त क्षति हुई। चाहे दुर्ग की दीवारों का ऊपरी भाग काफी देर से गिर चुका था, और खिज़रो द्वार के निकट दीवार में दो भारी दरारें पड़ चुकी थीं, फिर भी शत्रु उन में रेत तथा मट्टी भर कर उनकी रक्षा का यत्न कर रहा था। इसके साथ ही अफगानों ने दुर्ग की बाहर वाली खाई पर बने हुए पुल्लों को भी गिरा दिया था। ताकि शत्रु खाई को पार

करके शीघ्र ही दुर्ग में न घुस सके। परन्तु तोपखाने के बुद्धिमान् सेनानायक मिश्र दीवानचन्द ने इन कठिनाइयों का समाधान पहले ही सोच रखा था। उसने बेलदारो द्वारा चुने हुए तोपखाने के मोर्चों से लेकर भूमि के नीचे नीचे से सुरगे खुदवा कर दुर्ग की खाई के साथ मिलाने का कार्य आरम्भ कर रखा था। इसके साथ ही उसने दो तोन शहीदी दस्ते बना लिए थे, ज कि निश्चित समय पर, अपनी जान की परवाह न करके, खाई को लाँघ धूर कोट को पार कर और दुर्ग की दीवार पर चढ़कर भीतर कूद जाएँ।

खालसा सेना का खाई को पार करना

बस ३० मई को एक ऐसी सुरंग खाई के भाग से मिला दी गई जो बिलकुल खिजरी दरवाजे के सामने थी। रात्रि के अन्धकार में वह प्राणो पर खेल जाने वाला सैनिक दल, जो पहले से ही तैयार किया जा चुका था, सुरग के रास्ते से खाई में जा घुसा। 'शारो-शकर' नामक पुस्तक का लेखक पंडित दयाराम लिखता है कि पहले अग्रसर होने वाला सैनिक दल जमवाल राजपूतो का था। इनके साथ-साथ रामगडिया भिस्ल के साहसी सवार भी वीर फतहसिंह दत्त के नेतृत्व में थे। इनके अतिरिक्त साधुसिंह निहग अपने योद्धा सैनिकों को साथ लेकर खाई में कूद पड़ा और वैरी की बन्दूको से निकलने वाली गोलियों की बोछाड़ की रत्ती भर भी परवाह न करके खाई के ऊपर एक काम चलाऊ मार्ग बनाने में सफल हो गया। वह धूरकोट को पार कर दुर्ग की दीवार के पास जा पहुँचा। साधुसिंह की इस अद्वितीय वीरता ने दूसरे सैनिकों का भी साहस बढ़ा दिया। पनक की एक ही भूपक में घास-फूस और मिट्टी से खाई को भर दिया गया और सैनिकों ने अब बिना किसी रुकावट के खाई को पार करना आरम्भ कर दिया और एक साथ ही कमर-कोट को फाँद कर दुर्ग पर धावा बोल देने का निश्चय कर लिया।

चाहे अफगानी सेना की अब तक पर्याप्त हानि हो चुकी थी, किन्तु उनके लिए तो जीवन और मरण का प्रश्न था। इसलिए पठान सैनिक ऐसे डट कर

और दिल खोलकर लड़े कि उन्होंने दुर्ग की दीवार की ओर बढ़ते हुये सिक्ख सैनिकों की पकितियों की पकितियाँ साफ कर दीं। शहीदी दस्ते विवश होकर पीछे मुड़ने लगे। सत्य तो यह है कि चाहे दुर्ग का घेरा डाले दो मास से अधिक समय हो चुका था तो भी उस समय तक कोई यह नहीं कह सकता था कि अन्त में जीत किस पक्ष की होगी।

शमस तब्रेज तथा गुरु गोविन्दसिंह के बीच वार्तालाप

इस अवसर पर कवि गणेशदास अपनी काव्य-कल्पना से काम लेते हुए लिखता है, कि अपने सिक्खों को विपत्ति में फँसे देख स्वयं गुरु गोविन्दसिंह जी उनकी सहायता के लिए आये। दूसरी ओर मुलतानी पठानों की सहायता के लिए पीर शमस तब्रेज को बुलाया गया। तीसरे अध्याय के पद्य न० २१ से लेकर पद्य नं० ६० तक गुरु गोविन्दसिंह तथा शाह शमस तब्रेज के बीच मनोहर वार्तालाप चलता है। मुसलमानी पीर गुरु जी से बिनती करता है, कि वे अपने सिक्खों को लौटा ले जाएँ और पठानी राज्य और पाँच वर्ष के लिये मुलतान प्रान्त में रहने दें।

कृपा अब कीजिए पाँच साल मागे दीजिए।

आगे वचन जो लीजिए, दुःख दीजिए न आयेके ॥

किन्तु गुरु साहब ने इस बिनती को स्वीकार नहीं किया, और यह प्रस्ताव कि वे या स्वयं दुर्ग को खाली कर दें, नहीं तो खालसा जिस समय धावा बोलेगा उसके सम्मुख ठहरना असम्भव हो जायगा। चुनाँचे उसी स्वरूप में वह संदेश शाह शमस ने मुलतान के पीरो को जाकर सुनाया।

मक्के सो ठोर बताईं तुम्हें पाँच साल उहाँ अब जाय बिताये।

साफ जवाब दिया तिस ने तुम सोई करो मन को जोई भाये ॥

भाव यह कि खिजरी दरवाजे के निकट दोनों पक्षों के वीर सैनिकों में घर्षटों घमसान लड़ाई होती रही। मई का मास समाप्त होने को था। गरमी बढ़े जोर की पड़ रही थी। एक दिन जब दोपहर के समय थोड़ी देर के लिए

युद्ध बन्द था, और लोग आराम कर रहे थे, साधुसिंह निहंग अपने कुछ वीर साथियों को साथ ले दुर्ग की दीवार में बड़े छेद के पास जा धमका और पठान प्रहरियों को पलक मारने की देर में ही मृत्यु की नींद सुलाकर अचानक छेद के रास्ते दुर्ग में जा पहुँचा। जैसे ही खाई के निकट वाले मोर्चों में साधुसिंह के 'सतसिरि अकाल' के जय-घोष की गूँज सुनाई दी, खालसा सेनाओं में नया जोश तथा उत्साह भर गया।* तुरन्त ही जगी बिगल बज उठा और सिक्ख सिपाही अपने अपने मोर्चों से निकल कर खाई को पार करते हुए दुर्ग की ओर दौड़ पड़े। वे अर्द्ध-भग्न खिजरी दरवाजे पर एक बारगी दूट पड़े और दुर्ग की छ्योड़ी में प्रविष्ट हो गए। इस युद्ध का चित्र कवि गणेशदास ने चौथे अध्याय में बड़ी सुन्दरता और विस्तार के साथ खींचा है। इसका एक एक छन्द पढ़ने योग्य है।

नवाब का स्वयं मुकाबले पर आना और वीरता के साथ लड़ कर प्राण देना

उधर से नवाब मुजफ्फरखाँ भी सामना करने के लिए बिलकुल तैयार था। उसने इद निश्चय कर रखा था, कि जीते जी दुर्ग को सिक्खों के अधिकार में देकर अफगानी मान-मर्यादा को बटुटा नहीं लगने देगा। अतएव अपने सम्बन्धियों और मित्रों को साथ लेकर बूढ़ा नवाब नगी तलवार हाथ में लेकर मुकाबले पर आ डटा। उसने वीरता का वह प्रदर्शन किया, कि शत्रु भी प्रशंसा करने लगे। गणेशदास ने इस समय पर कुछ बन्द लिखे हैं :—

चढियो मुजफ्फरखा, आयो महाँ रिसान
संग लिए जवान, जो जगीरा बैठे खावते।

❀ दीवान अमरनाथ ने जफरनामा रणजीतसिंह में पृष्ठ ११५ पर इन निहंग योद्धाओं की वीरता का वर्णन करते हुए फारसी में बहुत सुन्दर बन्द लिखे हैं।

आये कर कोप, हाथ लिए ढाल धोप
 आज कैसे रहे ओप, सिंह जोर कर आवते ।
 बीस तीस जो दुरानी, हाथ लिए है कमानी,
 ऐसे कहित जयानी, चलो सिद्दा नूँ खपावते ।
 आये छ्योटी को जान, मारे तीर ते कमान,
 लागे सिंहन को आन, डिंगे मूर्छी जो खावते ।

आगे चलवर कवि फिर लिखता है :—

आय के तीर तमाचे चलाय, लडे सो भले तलवार वगाहे ।
 सिंह मार बिदार दिये, बडे सूरमे थे पर भूमि गिराये !

अन्त में नवाब स्वयं और उसके पांच पुत्र इस युद्ध की भेंट हुए । सोम-
 वार के दिन प्रथम जून सन् १८१८ ई० को मुलतान पर सिक्खों का अधिकार
 हो गया ।* नवाब के शेष कुटुम्ब को लाहौर लाया गया और उनके निर्वाह
 के लिए तीस सहस्र रुपये वार्षिक नियत किये गए ।

शुभ समाचार लाने वाले को पुरस्कार

जब विजय की सूचना महाराजा रणजीतसिंह को लाहौर में पहुँची तो
 उनके हर्ष की कोई सीमा न रही । सरदार फतहसिंह आहलूवालिया का संदेश
 लाने वाले व्यक्ति को महाराजा ने एक जोड़ी सोने के कगन और पांच सौ
 रुपया नगद के अतिरिक्त एक बहुमूल्य खिलअत भी प्रदान की और साहबसिंह
 हरकारा बाशी को, जिस पर मुलतान की डाक के प्रबन्ध का दायित्व था,
 छ' सौ रुपया नकद इनाम दिया । स्वयं महाराजा ने हाथी पर सवार होकर
 लाहौर के गली और बाजारों में चक्कर लगाया और दिल खोल कर रुपए-
 पैसे की वर्षा की । लाहौर नगर में विजय के उपलक्ष्य में दीपमाला की गई ।*
 गणेशदास ने भी अपने अन्तिम छन्दों में इसका उल्लेख इस प्रकार किया है ।

पाछे सिहन के कौर, कहे चलो जी लाहौर,
अब आये दौर दौर सर मोर जो सुहाये हैं।
सो लाहौर जब आये, सुन सिंह सुख पाये,
तोपो शलक चलाये, दान देत हरपाये हैं।
कीनी बग्वश अपार, लई आयो जोऊ सार,
तब वारी दीमाल, मन मोद को बढाये है।

दुर्ग की लूट का माल

किला सर होते ही सैनिको ने नवाब के खजाने, तोपखाने और माल-
खाने की ओर मुँह किया, और बेतहाशा लूट मार शुरू कर दी। परन्तु महा-
राज का विचार था कि लूट-मार का सारा माल राज्य के खजाने में दाखल
होना चाहिए क्योंकि यह किसी एक व्यक्ति का अधिकार या निजी सम्पत्ति
नहीं। अतएव इस से पहले ही इस आशय के आदेश सरदारों तथा सैनिक
अधिकारियों को भेज दिए गए थे। सो दीवान रामदयाल को इस कार्य पर
खगाया गया। इस सुयोग्य नवयुवक ने बड़े सुन्दर ढंग से इसे निभाया। और
दो लाख की सम्पत्ति, वस्तुओं और रुपयों के रूप में सैनिकों से वापस ले
ली। इसे दुर्ग के भीतर ही इकट्ठा कर लिया गया और फिर उसे लाहौर भेज
दिया। लाहौर पहुँचने पर लूट का बचा खुचा माल भी महाराज की
आज्ञानुसार सेना से वापस ले लिया गया। जिस का अनुमान पाँच लाख
रुपया था।*

नगर तथा दुर्ग की रक्षा का प्रबन्ध

नगर तथा दुर्ग की रक्षा के लिये ६०० सैनिक नियुक्त किये गए। इस

* ज० न० पृष्ठ २६-२७

के अतिरिक्त दो पलटने गढ़ शुजाआबाद* की रक्षा के लिये नियुक्त की गई और तीन सरदार—सरदार दलसिंह नहेरना, सरदार जोधसिंह कलसिया और सरदार देवासिंह हाबिया—अपनी अपनी सेना द्वारा जीते हुए सारे भाग की रक्षा के लिये वहीं छोड़ दिये गए। शेष सेना लाहौर वापस बुला ली गई।

मुलतान पर विजय का महत्त्व

मुलतान की विजय से महाराजा के राज्य तथा उस के आर्थिक साधनों में पर्याप्त वृद्धि हुई। नवाब मुजफ्फर खाँ का प्रदेश काफी लम्बा चौड़ा था इस की सम्पूर्ण आय का अनुमान (आय के सभी साधनों से) ६,८०,१७५ रुपए था, यह राशि महाराजा रणजीतसिंह के सम्वत् १८७७ वि० के वित्त कार्यालय के पत्र-प्रमाणों में लिखी मिलती है। इन पत्रों को छेत्तक ने चालीस वर्ष पूर्व सकलित किया था। इस का व्योरा निम्नलिखित है—

(अ) आमदनी माल	४,१५,५०० रुपये
(आ) इजारेदारों द्वारा आमदनी माल	७१,०००
(इ) आमदनी सायरत (जकात चौकियां और चुँगी)	१,४१०००
(ई) आमदनी सायरत (इजारेदारों द्वारा)	३३,४७

* गढ़ शुजाआबाद, मुलतान प्रान्त का दूसरा सुदृढ़ और प्रसिद्ध दुर्ग था, मुलतान के दक्षिण में २३ मील दूरी पर अवलम्बित था, उस पर भी अधिकार कर लिया गया। वहां से पॉच तोपें और बीस सहस्र रुपये का माल महाराजा के हाथ लगा (ज० न० पृष्ठ १६६)।

(उ) बागों से*

५,०००

(ऊ) जागीरों की मालीयत

१५,०००

कुल जोड़

६,८०,१७५ रुपये†

आर्थिक लाभों के अतिरिक्त मुलतान के सूबे को उस समय सैनिक दृष्टि से भी एक विशेष महत्व प्राप्त था। पंजाब के मानचित्र पर दृष्टिपात से यह बात स्पष्ट हो जायेगी, कि नवाब मुजफ्फर खाँ का इलाका एक ओर तो महाराज रणजीतसिंह की दक्षिणी सीमा के साथ लगता था, और दूसरी ओर इसके इर्द गिर्द सटी हुई मुसलमानी रियासते थी, जेसे कि बहावलपुर, डेरा गाज़ीखाँ, डेरा इस्माईलखाँ और मनकेरा इत्यादि। अब मुलतान पर महाराज का अधिकार हो जाने के साथ बहावलपुर, मनकेरा और डेरा जात के

* महाराज रणजीतसिंह के पत्र प्रमाणों (देखो परिशिष्ट न० ७) से भी प्रकट होता है कि मुलतान नगर में सरकारी बाग सरकारी आय के एक नियमित साधन थे। अतएव इस भाव से उन्हें ठीक दशा में रखने के उद्देश्य से महाराज ने अपने प्रसिद्ध तथा योग्य माली मिया अजीम को लाहौर से इस विशेष कार्य पर लगाया। देखिये खः दः रि० (द्वितीय प्रति) पृष्ठ ६८।

† देखिए ख*, रिः, पृष्ठ ७६ प्रति दूसरी। काबुल के सम्राटों के समय में भी मुलतान प्रान्त की वित्तीय आय इस के लगभग ही थी। डाक्टर हरिराम गुप्ता ने अपने एक लेख में यह राशि (६,७३,४००) रुपये लिखी है (इण्डियन हिस्टॉरिकल रिकार्ड कमीशन प्रोसीडिंगज प्रति १८, पृष्ठ १३३)

सोहनलाल अपनी पुस्तक के दफ्तर २ में पृष्ठ २७० पर लिखता है कि महाराज रणजीतसिंह ने संभवत् १८७७ वि० के लिये मुलतान का इजारा (ठेका) छः लाख रुपये के बदले दीवान शामसिंह पेशावरी को दे रखा था। इस से प्रतीत होता है, कि छः लाख रुपया नकद तो ठेकेदार (इजारेदार) ने सरकारी खज़ाना में दाखिल करवाना होता था, और शेष ८०,००० उसके खर्च और लाभ के रूप में उसे दिया था।

मुसलमानी राज्यों की परस्पर एकता का भय महाराजा रणजीतसिंह के मन से जाता रहा। मुलतान का युद्ध सिक्खों तथा अफगानों के बीच दूसरा निर्णायक युद्ध था, किन्तु दोनो बार ही मैदान सिक्खों के हाथ रहा। पहली घमासान लड़ाई हम से छ वर्ष पूर्व वजीर फतह खाँ और रणजीतसिंह के बीच हैदरी के स्थान पर हुई थी। जिस का परिणाम यह निकला था, कि अटक के दुर्ग और उसके आस पास के प्रदेश पर महाराज का पक्का अधिकार हो गया था। इस के परिणाम-स्वरूप मध्य एशिया से भारत में आने वाले उत्तर के प्रधान मार्ग पर रणजीतसिंह का पूर्ण अधिकार हो गया। अब मुलतान विजय से महाराज का दूसरे अर्थात् दक्षिणी प्रधान मार्ग पर भी अधिकार हो गया। यह प्रधान मार्ग कन्धार से प्रारम्भ होकर पशीन और क्वेटा तक और यहाँ से डेरा गाज़ीखाँ तक और डेरा गाज़ीखाँ से सीधा मुलतान को आता था। यह भी एक विशेष कारण था, जिस के लिए महाराजा रणजीतसिंह ने अटूट प्रयत्नों द्वारा मुलतान को छः आक्रमणों के पश्चात् पराजित कर के छोड़ा।

मुलतान युद्ध

पहला अध्याय

एक ओंकार सतगुरु प्रसाद

अथ फतहनामा गुरु खालसा जी का

दोहा

देवी माता सारदा, सभ की करो सहाई ।
दीजै बुद्ध सुबुद्ध मोहि, भाखा करूँ बनाई ॥ १ ॥
श्री गणपत बन्दों चरण, देहौ सुमति बिसाल ।
जस बरनौ गुरु खालसे, प्रगटे गुरु के लाल ॥ २ ॥

सवैया

पन्थ अकाल सज्यो कलुकाल, सुसाल सभै जग दूर पराए ।
तुरकन तेज मिटावन को, नर, रूप धरयो हरि जोत सुहाए ।
श्री गुरु नानक जी प्रगटे जग, नाम ददाए सो पाप मिटाए ।
जोत धरि गुरु गोबिन्दसिंह, अकाल जपै कलना सो मिटाए ॥ ३ ॥

दोहा

श्री गुरु महिमा अगम है, किंव को बरने पार ।
पन्थ सज्यो तिन खालसा, आप रूप करतार ॥ ४ ॥

सवैया

आपन रूप दियो करतार तो, कोई किसी ते न घाट कहावै ।
आपन आप करे मिल रार, मलेच्छन साथ न जंग मचावै ।

तिन्ह ते गुर आप बिचार कियो, सब सिंहन को पति एक^१ बनावै ।
रणजीत मृगिंद भयो तब ही, तहि छत्र दियो करतार सो भावै ॥ ५ ॥

दोहा

चढ़त सिंह नाती भयो, महां सिंह को नन्द ।
छत्र दियो करतार ने, सरब सुखन को कन्द ॥ ६ ॥

सवैया

देस पंजाब लियो जब ही, तब आब चढी तऊ खुशी बढ़ाई ।
आगे नरिन्द सो जोऊ हुते, सभ जीत लिए कर जोर लगाई ।
पाये समां सो दियाल भई गु, कागड़ा कोट दियो सुखदाई^२ ।
आनन्द भयो दुख दुन्द गयो, सो पहाड़ पति करि है सिक्काई ॥ ७ ॥

१. रणजीतसिंह के पंजाब-पति बनने से पहले सिक्ख सरदार (मिसलदार) परस्पर लड़ते झगड़ते रहते थे। इन मिसलदारों के इलाकों के आस पास मुसलमान नवाबों के इलाके थे। इनके परस्पर झगड़ों का परिणाम यह होता कि काबुल के पठान इन्हें शक्तिहीन देख कर किसी न किसी दिन आ दबाते। यह बात रणजीतसिंह जैसे बुद्धिमान और नीतिज्ञ से छिपी नहीं रह सकती थी। इसलिए उसने सब सरदारों को अपने अधीन करके खालसा शक्ति को समूचे रूप से एकत्र करने का दृढ़ निश्चय कर लिया। नीति की इस तह तक पहुँचने के लिए कवि ने जो योग्यता दिखलाई है, वह प्रशंसनीय है।

२. कागड़ा के कोट के लिये 'सुखदाई' शब्द कवि ने इसलिए प्रयोग किया प्रतीत होता है, कि यह गढ़ सारी उपायों की रक्षा करता था। जिसके हाथ में यह कोट होता था वह सारे इलाके का स्वामी होता था। विस्तार के लिए महाराजा के जीवन पर नोट देखो। सन् १८०६ ई० में रणजीतसिंह ने इस किले पर अपना अधिकार कर लिया था।

दोहा

अटक चटक^१ सों लै लई, भटक न लाई बार ।
राज लियो सभ खालसे, दीने तुरक सहार ॥ ८ ॥

कवित्त

बीत गयो कोऊ काल^२, आप गुरु रछपाल ।
काटियो भरम जाल, भूप दिये हैं निवाई के ।
मन मे कियो विचार, तुरकन सो करै रार ।
लियो मुलतान, गुरु आयस को पाई के ।
पाती लिखी चार ओर, भूपन^३ करो रण और ।
आवो दौर-दौर चढ़ो जुद्ध करो धाई के ।
जावो मुलतान, रहें मुगल पठान ।
सो मुजफ्फर जो खान, दीजो बेग सो गिड़ाई के ॥ ९ ॥

सवैया

पूर्बे हरणाक्ष दैत^४ जो, देवन को अति ताहि दुखायो ।
प्रहिलादे को दुःख दीन घनो, ताहि की पुकार सुनि हरि आयो ।
नरसिंह धरियो अवतार तबै, थम फाड़ तिन्हें गति को पहुँचायो ।
रूप भयो कलु में एह ही, मुजफ्फर खान जो नाम धरायो ॥ १० ॥

१. जून सन् १८१३ ई० मे महाराजा रणजीतसिंह को जहादाद से अटक का किला लेने मे न तो कोई देर लगी और न ही रक्त-पात करना पडा था ।
(देखो वचन-आरम्भ पेशावर युद्ध १)

२. कोऊ काल बीतने से कवि का भाव यह है, कि कागडा की विजय और मुलतान की विजय मे नौ वर्ष का अन्तर था ।

३. जागीरदारों से अभिप्राय है ।

४. मुजफ्फरखॉ मुलतान के नवाब का नाम था । इस ने सन् १७७६ से १८१८ तक शासन किया । कवि ने इसकी तुलना हिरण्यकशिपु के साथ इस लिए की है, कि दोनों ही मुलतान के हाकिम रहे थे । और दोनों से प्रजा

दोहा

गति दीनी भगवान तहिं, कीनो भगत प्रताप ।

श्री गुरु गोविन्दसिंह जी, गति दैहैं तहि आप ॥११॥

कवित्त

दुष्ट विदारन को लीनों अवतार आप,

कृष्ण स्वरूप हैं के अनेक दैत घाए हैं ।

तैसे रणजीतसिंह तुरक संहारन को,

कलु के प्रमान जान, आप रूप आए हैं ।

खड्गसिंह' पूत भयो, सुन्दर सरूप सोई,

भूगन में भूप ताहीं, भली छब पाए हैं ।

खुशहालसिंह गुडा कीओ मन्त्री प्रवीन तब,

कहे वात सोंच सोई सभ को सुहाए हैं ॥१२॥

पातशाह जो निहारे, करे मन में विचारे,

मुलतान जोई मारे, दंजे ताहि को पठाई के ।

अगों मन्तरी बखान, सुत तुमरो राजान,

भेजो ताहि मुलतान, आवे फतेह सोइ पाई के ।

सोई काम कीनो, सियालकोट ते सदाई लीनो^३,

आप बीडा दीनों, कहियो एहा समझाई के ।

दुःखी थी । प्रभु की इच्छा देखिए कि मुजफ्फरखाँ का कब्र भा वही बनाई गई थी जहाँ हिरण्यकशिपु का वध हुआ था (देखो मुल्तान गैजेटियर) ।

१. खड्गसिंह का जन्म १२ फाल्गुन सन् १८५७ को हुआ था । इस युद्ध के समय वह सोलहवें वर्ष में था ।

२. गुडा से तात्पर्य 'गौड़ ब्राह्मण' से है । देखो सूची-त्रय न० १ ।

३. पंजाबी शब्द, अर्थात् बुलवा लेना । कुंवर खड्गसिंह को बुलवा लेना की पुष्टि सोहनलाल द० २ पृष्ठ २०५ २०६ से भी होती है ।

जावो मुलतान, रहें मुगल पठान, मो,
मुजफ्फर जो काफर है, बेग दे गिड़ाई के ॥१३॥

सवैया

और सो मात दतारकौर^१, दतार बडी सो भी सग सिधाए ।
संग दीवान क्रिये परबान^२, नवीन रसाले^३ सो लैन बनाए ।
राधा सु राम सरदारी मल^४, सो संग चले करे मन्त्र सुहाए ।
तोपां चलीं घुडनाल संग, बजंतर बजे नहि अन्त सो पाए ॥१४॥

दोहा

करी तियारी चढन को, अनगिन सेना संग ।
खुशहालसिह तहि मन्तरी, साधुसिह निहंग^५ ॥१५॥

सवैया

रावी के तीर मो साहिदरा, गुर अम जो बाबा है वेदी आयो ।
साहिबसिह^६ सो नाम बखान, सुनियो जब सवन अनन्द बढ़ायो ।
खडगसिह बुलाय रजाई^७ देई, वेदी साहिब के तुम पास सो जायो ।
आयस मान चलियो तब ही, खुशहाल को सग लै, सीस निवायो ॥१६॥

१. महाराजा रणजीतसिंह की पटरानी और सरदार रणसिंह नकई की सुपुत्री थी । कुँवर खडगसिंह इस महारानी के उदर से था ।

२. तात्पर्य मिश्र दीवानचन्द से है जो तोप-विद्या में प्रवीण था ।

३. इस का अभिप्राय उन पलटनो से है, जिन को योरूपीय युद्ध-विद्या सिखलाई गई थी ।

४. ये दोनो कुँवर खडगसिंह की जागीर का प्रबन्ध करते थे ।

५. देखो नोट कवित्त ७३ के नीचे ।

६. वेदी साहिबसिंह श्री गुरु नानकदेव के वंश में से थे । इस महत्त्व के कारण राजकुमार खडगसिंह युद्ध को जाने से पहले इन से आशीर्वाद लेने आया था । पुष्टि के लिए देखिए सोहनलाल द० २ पृष्ठ (२०६) ।

७. फारसी शब्द 'रजा' अर्थात् अनुमति ।

कवित्त

पेख दरबार, मानो आप करतार,
 गुरु रूप हो को धार, सो उधारने को आयो है ।
 कियो जाई के दीदार, सुख पायो है अपार,
 ऐसे वचन सुसार, स्त्री मुख ते अलायो है ।
 दीनो आयुध सो एक, गुरु राखे तेरी टेक,
 जाई मारो सो मलेच्छ, जो महेश जी सहायो है ।
 गुरु की आसीस लै, महीश चढ़यो बेग धाई,
 भये शुभ सौन', गौन कियो, अरि धायो है ॥१७॥

दोहा

चढ़यो प्रबल दल साज वै, संग नरिन्द अपार^१ ।
 डेरा चले सो अन्त नहिं, सूफे बार न पार ॥१८॥

सवैया

संग नरिन्द बनियो मध इन्द, गोबिन्द सो सिंह सबै मन धियावै ।
 जात चले करे बात सभे, बड़ जुद्ध करै हिया नाहि डुलावै ।
 मुजफ्फर काफर बेग हतै, बहु तुरकन को जमधाम पठावै ।
 (३) ॥१९॥

कवित्त

तोप घुड़नाल, संग चले ही विसाल,
 सो जम्बूरे औ जंजाल, ताई नाहि कछु पार हैं ।

१. प. अर्थात् शकुन ।

२. सेना ने लाहौर से मुलतान की ओर १४ जनवरी सन् १८१६ ई० की बुधवार के दिन कूच किया था । इस सेना की संख्या २०,००० थी ।

३. पक्ति छुटी हुई है ।

धौसे औ नगारे, बाजे बाजत जुझारे,
 कोपे हिरदै मझारे^१, चढ़े बड़े सरदार हैं ।
 त्रिमू^२ डेरे जाई पाय, चढ़ो लड़ो सो रिसाय,
 किनो ऐसे ही अलाय, पाछे सिंह सो हजार हैं
 ईहां डेरा तो करिओ, सभे आवन सो दिहो,
 तब लड़सू^३, बान्ध सारे तलवार हैं ॥२०॥

दोहा

सिंह बेअन्त न अन्त कछु, त्रिमू^४ डेरे कीन ।
 सब जन जीत सो आयो, दीवानचन्द परबीन^५ ॥२१॥

सवैया

मोतीराम दीवान का पूत सपूत, रामदयाल^६ सो नाम सुहायो ।
 सिंह दुआबिये संग लिए बहु, षोड़ चढ़े जत्थेदार बनायो ।
 फतेहसिंह सु दत्त के संग घने, सिंह डेरा चढ़ियो नहिं अन्त लखायो ।
 चले जात करे एह बात सभे, जो मुजफ्फर काफर मार गँवायो ॥२२॥

छन्द

और सिंह बेअन्त चढ़े, नहि अन्त सो आयो ।
 दीवानचन्द सिरमौर सभे, ताबेआ^७ ताहिं लायो ।

१. प. अर्थात् 'मे'

२. यहाँ जेहलम और चनाब नदियाँ मिलती हैं ।

३. प. 'इहाँ' अर्थात् 'यहा पर', 'करिओ' अर्थात् 'करे', 'आवन'
 अर्थात् 'आने, लड़सू' अर्थात् 'लड़ेंगे' ।

४. नाम मात्र के लिए ही इस युद्ध की कमान का सम्बन्ध राजकुमार
 खड्गसिंह के साथ था । वास्तव मे नेतृत्व मिश्र दीवानचन्द ही
 कर रहा था ।

५. देखो सूची पत्र न. १

६. फ. अर्थात् 'आश्रय' या 'कमान मे'

डेरा चले अपार, नहि कछु पार सो पावैं ।
बड़ी तोप^१ के संग, सिंह अनगिनत ही धावैं ॥२३॥

दोहा

जत्थेदार सरदार बहु, चढ़े सो महां रिसाय ।
जीतेगे मुलतान अब, गुरु जो होय सहाय ॥२४॥

कवित्त

हरिसिंह^२ आयो, सुत भूप सुन पायो,
आय फतेह सो बुलायो, हिये आनन्द सों धार कै ।
लायो है दीवान, मता करे परधान,
करो जुद्ध सो निदान, पहिले बातन विचार कै ।
बोलियो दीवानचन्द, बियाए हिये नन्दनन्द,
सुनो सुखकन्द, डेरा सूजोकोट मार कै ।
मोरचे लगावो, बहु तुरकन अकावौ^३,
सुरगां लाई के जलावो, लड़ा ऐसे ही जुझार कै ॥२५॥

(१) तात्पर्य उस तोप से है, जिस का फारसी नाम जमजमा था । यह तोप अहमदशाह अब्दाली ने सन् १७६१ ई० में लाहौर में बनवाई थी । कहा जाता है, कि इस तोप के बनवाने के लिए लाहौर के प्रत्येक हिन्दू घराने में पीतल या ताँबे का एक एक वर्तन लिया गया था । इन वर्तनों से दो ताँबे बनवाई गई थी । उन में से एक यह थी । इस तोप में चालीस सेर का गोला डाला जाता था । लाहौर जीतने के समय यह तोप लहनासिंह और गजरसिंह भग्नि मिस्ल के सरदारों के हाथ लगी । उस समय से इस का नाम 'भगियो की तोप' प्रचलित है ।

(२) देखो सूची पत्र न. (१) ।

(३) पं. अर्थात् तग करना ।

कवित्त

ऐसे बात मान, चले सूजोकोट खान,
 सो मुजफ्फर गढ़ डेरा ठान^१, कहिओ जुद्ध सो मचाईये ।
 सदासिंह भड़ानिया, दुआबिया सां देवासिंह
 धर्मसिंह, दयालसिंह^२, कोप कै सिधाईये ।
 जाय मोरचे लगाए, कुछ तोपां सो चलाए,
 तब बुरजन गिराए, मार मार सो मचाईये ।
 तीन चार दिन लड़े, आगे सिहन के अड़े,
 छाड़ गढ़ को सो चले, मन मॉहि पछताईये ॥२६॥

दोहा

लड़े सिंह तहिं कोप कर, तुगकन को दे त्रास ।
 खाली कर गढ़ को गये, मन ते भये निरास ॥२७॥

सोरठा

हरीसिंह के सिंह, थानेदार सो किये तहि ।
 मन महि भये आनन्द, प्रथम जीत गढ़ को लियो ॥२८॥

सवैया

सूजोखान को वेग तियारी करी, सुनी खान जां कान पठान पठाए ।
 ऐसे लड़े हठ ठान सबै, जाई मिहन संग जो जंग मचाए ।

१. मुजफ्फरगढ़ शहर मुलतान के पाश्चिम म चनाव के दूर किनार पर है । इसके निकट खानगढ़ शहर भी है । फिर नदी पार मुलतान की ओर तीसरा बड़ा शहर शुजाहाबाद का है । मुलतान पर आक्रमण करने से पहले सैनिक दृष्टिकोण से इन तीनों किलों पर अधिकार करना परमावश्यक था ।

२ इन चारों मिमलदारों के नाम महाराजा रणजीतसिंह की सेना के वेतन पत्रों में मिलते हैं । देखिये खा० ६० रि० बण्डल न० १० और ११ सम्बत् १८१७ ।

आयस मान पठान चढ़े, संग तोप लिए, घुड़नाल बनाए।
इत ओर हकीकत ऐसी भई, सभ सिंहन जाय सो डेरे लगाए ॥२६॥

दोहा

कौन कौन डेरे लगे, तिनके सुनियो नाम।
शामसिंह अर चढ़तसिंह, सदासिंह अभिराम ॥३०॥
फतेहसिंह जो मान है, ठाकुरसिंह सुजान^१
सिंहन कहिओ करोध सों, मारो मुगल पठान ॥३१॥
सभ सिंहन-पति-सिंह ने; लिए नरिन्द बुलाय !
कहिओ चढ़ो दल साज कै, तुरक तेज घट जाए ॥३२॥

सवैया

आहलूवालिआ जो फतेहसिंह भयो, सो बुलाय कहेओ, सुनियो मम भाई^२।
ऐसे चढ़ो, दल साज भिड़ो^३, जो मलेच्छ को नास करो अब जाई।
मुलतान मुजफ्फर खान रहै, तुम मारो सो बेग बिलम न गंवाई।
आयस मान चढ़िओ तब ही, नहीं अन्त, बेअन्त सो सैन चलाई ॥३३॥

सोरठा

ऐसे कहिओ बखान, सभ सिंहन को फतेहसिंह।
जिन को प्यारे प्राण, ते फिर जाओ जुवति^४ पहिं ॥३४॥

१. इन पाँचों मिसलदारों के नाम खा० ६० रि० बन्डल न० १० में मिलते हैं।

२. स० फतहसिंह आहलूवालिया के लिए 'मम भाई' शब्द प्रयोग कवि ने इसलिए किया है कि महाराजा रणजीतसिंह ने इसके साथ पगड़ी (दस्तार) बदली हुई थी, और वह इसे भाई कहा करता था। यह सरदार आहलूवालिया मिसल का बड़ा सरदार था। विस्तार के लिए देखिए सूची-पत्र न० १।

३. प० अर्थात् 'लड़ो', 'युद्ध करो'

४. स० युवति अर्थात् 'जवान स्त्री'।

चौपाई

हमरे संग सो जावै सोई, छतर धरम प्रतपाले जोई ।
कायर होई जो रण ते भागै, ताके कुल कलक बड़ लागै ॥३५॥

सवैया

एह बखान चढ़यो गज पट्टि, तिन सग अनेक ही सिंह सुहाये ।
हरीसिंह सु जीवन सिंह चढ़े, अरु जवाहर सिंह दिवान सुभाये ।
और दुआबिये सिंह घने, बहु घोड़चढ़े जस्थेदार बनाये ।
सिंह वेअन्त न अन्त तिनै, आय संग चढ़े, चलो जग कराये ॥३६॥

दोहा

त्रिमू में डेरे किए, अगनित सिंह अपार ।
दीन मजहब को जंग एह, पत राखे करतार ॥३७॥

सोरठा

मुलतान मुजफ्फर खान, सभ पठान इकट्ठे किये ।
कहो विचार प्रधान, सिंह आये बहुते लड़न को ॥३८॥

कवित्त

खान सुनो तो बिचार, टके दीने एक बार,
सिंह आवैं बार बार, तोहि कहाँ समझाइए ।

१. सेना के बड़े सरदार से तात्पर्य है ।

२. इस से पहले महाराजा रणजीतसिंह मुलतान पर पाँच बार आक्रमण कर चुके थे । परन्तु वह प्रत्येक बार कर लेकर ही आते रहे । सन् १८०२ में वे कुछ भेंटें लेकर लौटे । सन् १८०६-७ में सत्तर सहस्र रुपया लेकर लौटे । सन् १८१० में महाराजा का मुलतान नगर पर अधिकार हो गया, परन्तु दुर्ग जीता न जा सका । इसलिए वे दार्ई लाख रुपया लेकर वापस आ गये । सन् १८१६-१७ में १ लाख बीस सहस्र वार्षिक कर नियत करके लौटे ।

सिंह दिल्ली लैन धाये, तहाँ सिंह जो रहाये,
 सो फिरंगी को लियाए, सतलुज बन्ना सो पाइए^१ ।
 कश्मीर^२ की जो बात, तुम जानो विख्यात,
 तांते लड़ो इन संग, टके देने नहीं भाईए ।
 और कहूँ नहीं जावैं, नित ईहां चढ़ धावैं,
 टके लेत जो सिधावैं, तुम सोभ आप पाईये ॥३६॥
 दोहा

ऐसे कहियो दीवान तब, दियो टके इत बेर ।
 आगे करो उपाय सो, नहि चढ़ आवे फेर ॥४०॥

सवैया

मुअज्जमशाह^३, जमीयतराय, बुलाय के ताहि सो ऐसे अलायो ।
 सभ सिंहन सो तुम जाय कहो, कत साल के साल इहाँ चढ़ आयो ।
 टके लेओ सो डेरा पिछाँहि^४ करो, समैं सार सो उत्तर भाख सुनाओ
 लाख रुपया सो देना करो, सो निदानहुँ को सवा लाख बतायो ॥३१॥

१. कवि ने इस पंक्ति में दिल्ली और 'तहाँ सिंह जो रहाये' की ओर जो सकेत किया है, इस से अभिप्राय सतलुज और यमुना के बीच की सिक्ख रियास्ता—पटियाला, जींद और नाभा इत्यादि—से है। इन रियास्ता से रणजीतसिंह की टक्कर और अंगरेजों के साथ सतलुज-सीमा नियत होने का विस्तार-पूर्वक वर्णन हम "महाराजा रणजितसिंह का सद्धित जीवन" में कर चुके हैं।

२. इन शब्दों का सकेत महाराजा रणजीतसिंह की जून सन १८१५ की काश्मीर की चढ़ाई की ओर है। उस समय महाराजा को इस अभियान में सफलता प्राप्त नहीं हुई थी, वरन् सेना को पर्याप्त प्राण-हानि उठानी पड़ी थी।

३. नवाब के वकील का नाम मुअज्जमशाह नद्वी, वरन् मुहसनशाह था। देखिये सोहनलाल द० २ पृष्ठ २११।

४. प. अर्थात् पीछे।

सोरठा

चलिओ जमीयतराय, मुअज्जमशाह को नाल^१ लै
आयो हैं ताहि धाय, सिह सो जहाँ बेअन्त हैं ॥४२॥

सोरठा

मुअज्जमशाह वकील, पिख डेरे चक्रित भये
मन मे करे दलील, अठवल मिलिये कौन को ॥४३॥

सवैया

दिवानचन्द को जाय मिलो, खडगसिह के पास तुम्हें लै जावै ।
बात को मान चले हैं सुजान, दरबान के कान मे जाय सुनावै ।
सरकारैं तुम जाय तहां कहो, खान वकील जो रुबरू आवै ।
सार सुनी जाँ दिवान हूँ चन्द, तो उत्तम ठौर सो डेरा दिवावै ॥४४॥

कवित्त

लायो है दीवान, खड्गसिह सो राजान,
आये बैठे परधान, लगे बातन बतावने ।
दीवानचन्द, दलमिह, करमसिह हरिसिह,
शामसिह, फतेहसिह,^२ लागत सुहावने ।
दीवान रामदयाल, सो बुलायो तात्काल,
कहो बुध के बिसाल,^३ तुमें कहाँ मन भावने ।
वकील खान है पठायो, टके देन सुन आयो
लीना किला है छुड़ायो, ताहि ऐसे है अलावने ॥४५॥

१. प. अर्थात् साथ ।

२. ये बड़े सरदार और जागीरदार भी थे । विशेष वर्णन के लिए देखिए सूचीपत्र न. १ ।

३. मुलतान-युद्ध के समय रामदयाल की आयु केवल २३ वर्ष की थी और वह सेना के एक भाग का नेता भी था । इस से पूर्व भी महाराजा इसे सेना के नेतृत्व का अवसर दे चुके थे । इस समय जब सैनिक अधिकारियों

दोहा

ऐसे मति मन धारि के, गलीचे दिये बिछाय ।

सभा लगाई अन्त नहि, बड़ा तमाम बधाय^१ ॥४६॥

सवैया

मुअज्जमशाह, जमीयतराय, बुलाय के आदर साथ बिठाये ।
कर जोर के आय सलाम करी, तुमरी किरपा हमें खैर रहाये ।
खान सलाम बखानी तुमें, टके दे सु पठे बिनती जो कराये ।
हम रईअत तुम लेवो सदा, डेरा कूच करो कुछ पाछे हटाये ॥४७॥

दोहा

सिंह कहे तब कोप के, टके सौ लैवैं नाहि ।

मुलतान सो लेहि छुड़ाये, जान लेओ मन माहि ॥४८॥

कवित्त

वकील उवाच—कहे मुअज्जम जो शाह, कहा तोहि परवाह,
हम भी तो किधो तुमरे, सों नौकरी प्रमाण हैं,
अते^२ किला जो छुड़ावे, तामें चाकर रखावैं,
दाम देओ तो रहावैं, चित्त समझो सुजान हैं ।
अते करो बड़ा जोर, हम जानैं तुमें शूर,
गये कशमीर ओर, खाय आये तहाँ भान^३ हैं,

की परिषद् होने लगी, तो आयु के अनुसार वह चाहे दूसरो के सामने बच्चा लगता था तो भी उस की बुद्धिमत्ता और वीरता का लोहा सभी मानते थे । इस लिए कवि ने भी इस के लिए 'बुद्धि का बिसाल' शब्द का प्रयोग किया है । देखिए सूची पत्र न. १

१. फा. एहतमाम अर्थात् प्रबन्ध । 'बड़ा तमाम बधाय' से तात्पर्य है बहुत बढ़िया ठाठ-बाट अथवा सज-धज ।

२. पं० अर्थात् 'और'

३. पं० अर्थ 'हार जाना', 'मार खाना',

ताते पत सेती^१ जावो, टके देत जो रहावो,
नाही बहुत अकावो, राखे सदा तुम मान है ॥४६॥

दोहा

करो जंग हम साथ जे, हम कुछ माड़े^२ नाहिं ।
देख सो लेओ बिचार कै, देओ और दुख पाहि ॥५०॥

कवित्त

करो जो लड़ाई, ऐसे सुनो तुम भाई,
मार देहिगे खपाई, करे जंग सो अपार है ।
नहीं करो मौन, टके लेके जावो मौन,
जमधाम नहि गौन, कहि दीनी बात सार है ।
सिंह सो बखाने, लड़े मरे हठ ठाने,
बोले ऐसी जबाने, गीदी^३ बावरो गेंवार है ।
कहे मुअज्जम जो शाह, तुम तो बेपरवाह,
भली बुरी जानो नाहि, करो इको मार-मार है ॥५१॥

दोहा

भली बुरी का कहत हो, कहूँ बात समझाय ।
न छोड़े, मारे तुम्हें, करो अनेक उपाय ॥५२॥

१. प० अर्थ 'मान सतकार' के साथ, 'इज्जत के साथ'

२. प० अर्थ 'कमज़ोर'

३. प० अर्थ 'कायर',

लाख रुपय्या देत है, ओडक^१ सवा सु लाख^२ ।

फेर-फेर दे हैं सदा, हम तुम के हैं साख^३ ॥५३॥

उत्तर—लाख हमारे बहुत हैं, बेरियन विरछन संग ।

मुलतान सो लये छुड़ाय कै, ऐसा करहैं जंग ॥५४॥

हैंस के कहे दीवान तब, देखो सिहन बात,

हीरा लेके हाथ मे, टके मोल दे जात ॥५५॥

सवैया

लाख सवा लाख लैहैं नाहीं, इत बेर लैहैं मुलतान छुड़ाई ।

पत^४ जो चहो, खाली करो गढ़ को, नहीं मार लैहैं तो रहो पछताई ।

एहि सौच कहे ना लाज गहें, अब मारेगे बहुत सैन है आई ।

खाय के जहर वकील दोऊ, कहाँ माड़े^५ हमें सो करे हैं लड़ाई ॥५६॥

कवित्त

बड़े क्रोध सों बखान, उठे दोऊ जो प्रधान,

सार कीनी जाय खान, वे तो टके नहीं लेत हैं ।

करेगे लड़ाई, सेना अन्त नहीं आई,

तैसे करो अब भाई, जैसे तुम्हें मन हेत हैं ॥

१. प० अर्थ—आखिर

२. कवि लिखता है कि नवाब सवा लाख रुपया देता था । परन्तु सरदार दलसिंह नहेरना की चिट्ठी से जो उमने मुलतान से लिखी थी, पता लगता है कि नवाब दो लाख भी देने के लिये तैयार था । देखिये सोहनलाल द० २ पृष्ठ २१५ ।

३. प० अर्थ 'साक्षी' ।

४. प० अर्थ 'मान' 'इज्जत'

५. प० अर्थ 'दुर्बल' 'कमज़ोर'

कहें लैहैं मुलतान, दैहैं सूजोकोट खान,
भला एही बात जान, दाम और भी सो देत हैं^१ ॥
खान पूछे भ्रातन को, कहो अनुमान,
मिले लड़े रहे आन, किधो कारे किधो स्वेत हैं^२ ॥१७॥

सोरठा

कहे नजाबत खान, मिलो तो पैहो भोरे^३ ।
सुजाबल मुल्ख^४ समान, कैद पये पछताओगे ॥१८॥

कवित्त

उठो सामने सो लडो, कोई दिन है तो अड़ो,
नहीं राह फड़ो^५, मक्के जाना दरकार है ।
ऐसी सुन खान, बोल पड़े जो प्रधान,
कहो दिल की बखान, सिंह आये तो अपार हैं ।
कहो कैसे लड़े, पूरी किवै^६ तासों पड़े,
मार दिहगे जो अड़े, नहीं छांड़े वेग मार हैं ।
सकदर जो खान, कहे लड़ो हठ ठान,
बात एहि है निदान, जग अस जै जै कार है ॥१९॥

१. सोहनलाल ने भी अपनी पुस्तक के द० २ पृष्ठ २१३ पर यही शर्ते लिखी है ।

२. मुजफ्फरखान अपने भाइयों से पूछता है कि तुम बताओ कि शत्रु के साथ मिल जाने मे हमारा कल्याण है या लड़ने मे ? जो बात लाभदायक है और जो हानिकारक है वह स्पष्ट रूप से कह दो ।

३. प. अर्थ अन्धेरी कोठरी मे जीवन भर के लिए डाल दिए जाओगे ।

४. संकेत शाहशुजा-उल-मुल्क से 'कोहनूर' ही । छीनने की ओर है । पूरे वृत्तान्त के लिए देखिए इसी लेखक का "महाराजा रणजीतसिंह ।" पृ. ७२-७४

५. प. अर्थ 'पकड़ो' (राह लो)

६. प. अर्थ 'किस प्रकार' ।

सवैया

इत ओर दलीलां पठान करे, सो मिले के लड़े हठ नाहिं गँवावैं !
 उत ओर दिवान-सुचन्द कहे, चलो खालसा जी ! नहीं देर लगावैं !
 सुन चौप चढ़ी सभ के चित्त मै, धर मारु दिये सो तुरे हिनकावैं !
 गज बाजि चढ़े, रथ धूड़ उड़ी, अपना पर कानहीं सूझ सो पावैं ॥६०॥

कवित्त

चढ़े सिंह हैं अपार, नाहीं सूझे वार पार !
 बड़े बड़े सरदार, चढ़े कोप बल धार के !
 तीर मुलतान, डेरे कीने सभे आन,
 बैठे लाय के दीवान, करे बातां सु विचार के ।
 मोरचे लगावो, सो चुफेर घेरा पावो,
 बहु तुरकन खपावो, जुद्ध करो हठ धार के !
 तोपन चलावैं बुर्ज धूर' सों उड़ावैं,
 ऐसे जुद्ध ही मचावैं, सो बधावे ऐसी रार के ॥६१॥

दोहा

संध्या वेले सिंह सभ, बैठ मता एहि कीन,
 प्रात सो लावो मोरचे, जानो चित्त प्रवीन ॥६२॥

१. धूर से अभिप्राय धूरकोट से है। यह किले का वह बाहरी भाग होता है, जो दुर्ग को अधिक सुरक्षित रखने के लिए इस के इर्द गिर्द बनाया जाता है। इसे 'कमरकोट' भी कहते हैं।

२. यह पहिला मोर्चा मुलतान नगर (बलदा मुलतान) को पराजित करने के लिए बनाया गया था। इस अध्याय के अन्तिम पद्य तक उसी युद्ध का वर्णन है, जो नगर की फ़सील के बाहरी भाग के समीप होता रहा।

कवित्त

भयो भिनसार^१ उठे आनन्द सुधार,
 हो सुचेत जो तैयार, जपें वाहिगुरु नाम को ।
 कीनो सभे दान, यथाशक्त जैसी जान,
 कस कमरां प्रधान, लगे करन ऐसे काम को ।
 खड्गसिंह एक ओर, मोरचे लगाय जोर,
 साधुसिंह दूजी ओर, कीने बिस्लाम को ।
 एक ओर सो दीवान, लाय मोरचा प्रवान,
 कहे खल ओ पठान, सभे पठें जमघाम को ॥६३॥

कवित्त

दलसिंह दबासिंह. मोरचे लगाय जोर,
 बुर्ज कोट कलसिया^२ सो बैठो हठ धार के ।
 कन्हैये चढ़ आये. आन मोरचे लगाये,
 करमसिंह ज्वालासिंह^३ बड़ो बल धार के ।
 देसासिंह^४ सगधर, चोफेरे कीनो भली भांति,
 हरिसिंह कहे इन्हें, मारो ललकार के ।

१. अभिप्राय प्रातःकाल से है ।

२. कलसिया से अभिप्राय सरदार जोधसिंह कलसिया से है । यह करोड़ सिंधिया मिस्ल का सरदार था । इस समय उसकी आयु ६६ वर्ष की थी मुलतान के गढ़ पर अधिकार हो जाने के पश्चात् महाराज रणजीतसिंह ने इस को वहाँ का प्रबन्ध करने के लिए नियुक्त कर दिया था । परन्तु छः मास बाद वह मुलतान में ही मर गया ।

३. सहदार मित्तसिंह पधानिए का पुत्र था, देखिये सूची न १

४. देसासिंह मजीठिया महाराजा रणजीतसिंह के दरबार के चोटी व सरदारों में से था । सरदार दयालसिंह मजीठिया, जिस की सम्पत्ति से दयालसि

सोभासिंह, रामसिंह, मोरचे लगाय दीने,
सभन के वदन सों, कहे मार मार के ॥६४॥

सवैया

तोप बड़ी धर कोप हिये, कर आयस दीवान है चन्द अलायो ।
बुर्ज बनेरे सो ढाहि^१ देखो, कर तोपां चलाय, गुबारे बगायो^२ ।
दूजी बाही इलाही^३ सो ढाही भले, बड़ तोप चलाय फतेह तिन पायो ।
दीन मजहब को जग करे हैं, निसंग सो ढंग एहि मार मचायो ॥६५॥

दोहा

दयासिंह जो पूरबी, लाये मोरचे आन,
तोप, गुबारे, रहकले, मार सो मार बखान ॥६६॥

सवैया

आइलूवालिये मोरचा लायो जहां, पटछियां^४ सो आगेहुं को पुन होवै ।
ऊपर गोली पठान जो मारत, आवत जावत लोग बिगोवै ।
चुफेर लड़े, बहु तोप चले, अरि सीस दले भूमि तन जोवै ।
दोरु ओर ध्यावत हैं गुरु पीर, सो जीत की बात चहें दुख खोवै ॥६७॥

कालेज लाहौर (करनाल) और दयालसिंह लायब्रेरी और (Tribune)
“ट्रिब्यून” नामक दैनिक पत्र चल रहा है, इसी सरदार का पोता था ।

१. पं० अर्थ, गिराना ।

२. पं० अर्थ फैकना ।

३. इलाही से तात्पर्य इलाहीय शा से है । यह रणजीतसिंह के तोपखाने का कमानदार था । यह बड़ा सुन्दर तथा सजीला युवक होने के साथ साथ एक प्रसिद्ध गतका खिलाडी भी था । गतका के कारण ही महाराजा ने उसे नौकरी में लिया था ।

४. पटछिया से तात्पर्य ढका हुआ से है । इसको फारसी में “राहे-सलामती” कहते हैं । मुगल सेना जिस समय किसी के गिर्द घेरा डाल लेती तब अपने मोर्चों से किले की दीवार तक पहुँचने के उद्देश्य से ‘राहे सलामती’

दोहा

काल्यांवाल महिमान^१ जो, रणजीतसिंह तहि नाम ।
कर सलाह दलसिंह सों, लड्यो बड़ो हठ ठान ॥६८॥

कवित्त

तोपन चलावे, गोले घूकदे^२ सो जावैं,
आगे मेरे^३ जाय पावैं, मानों करे बड़ा राह हैं ।
ऊपरों पठान मारै गोली ऐसी जान,
कहे ऐसे ही बखान, सो उड़ावे सिंह साह^४ हैं ।
ऐसी भांति दोऊ लड़े, तोप ओ गुबारे धरे,
कीने काम खरे, सभे कहे वाह वाह हैं ।
ऐसे गोले मारे, सूर बहुत ही पछारे,
सो पठान जवान मारे, जोई फौजन के नाह हैं ॥६९॥
मुजफ्फर जो खान, कहे कोप के पठानन को,
मारो तोपां आन करो सिंहन को घात है ।

से काम लिया करती । यह रास्ता इस ढंग से बनाया जाता है—शत्रु की गोली और तीरो से अपना बचाओ करके सेना के सिपाही गढ़ के निकट पहुँच जाते हैं । महाराजा के समय में इस रास्ते का प्रयोग किया जाता था । देखिये Army of the Indian Mughals by Wilhom Irvine, महाराजा रणजीतसिंह ने इस युद्ध में पटखियों से काम लिया था । देखिये सोहनलाल द० २ पृष्ठ ३६ ।

१. फा० अर्थ अतिथि । यहा तात्पर्य दामाद (जवाई) से है ।

२. प० ऊँची आवाज या शोर करते हुए ।

३. प० अर्थ सुराख या शिगाफ ।

४. स० अर्थ प्रबल ।

गोलंदाज सो बुलायो, सिरोपाऊ^१ है पहिनायो ।

मार गोले तो रिसायो, करो ऐसी बड़ी बात है ।

कीनी तोप सो तैयार, कहे मुखों मार मार

बढ़ो जुद्ध सो अपार, कर जाने इहो सात^२ है ।

ऐसे गोले हूँ चलाये, डेरे सिंहन के पाये,

कियो घायल सु भाय, किंवे सुरग हूँ को जात हूँ ॥७०॥

सवैया

पूरब ओर सो बाही जोऊ, शामसिंह सो मोरचा कोप लगायो ।

निधानसिंह^३ बुलाय रजाय^४ दई, धर तोपां सों महल बनेरे गिरायो ।

बान्ध-शिस्त^५ चलाय दई सो जबे, तब ऊँची अटारी के छज्जे को ढायो
गोलियां मारत, कोप उचारत, मारत हैं तोहि जान न पायो ॥७१॥

दोहा

सभ सिंहन मन कोप कर, मोरचे लाये चुफेर,

छियापट ओटा^६ करी, मुलतान लेयो बिच घेर ॥७२॥

कवित्त

मोरचे लगाय, बड़े अति ही रिसाय,

बड़े जोर सों अलाय, कहें तुरक दिहो मार के ।

सुरंगो सो चलावे, ता मै दारू^७ बहुत पावैं,

धूरकोट को उड़ावैं, करैं जुद्ध बल धार के ।

१. प. सिरोपा अर्थात् खिलअत ।

२. फा. 'साइत' अर्थ घड़ी, समय, वक्त ।

३. निधानसिंह पंजहथा से तात्पर्य है । देखिए सूची ३ ।

४. फा. शब्द 'रजा' अर्थ अनुमति ।

५. फा. अर्थ निशाना ।

६. प. अर्थ आश्रय, ओट ।

७. पं. अर्थात् बारूद ।

तोपां सो चलाय, बड़े मेरे तहिं पाय,
 मारे तुरक अरराय, कहे रहे लोहसार के ।
 साधुसिंह^१ जो निहंग, तिन कीनो बड़ो जंग,
 मारे तीर औ तुफंग, करे ऐसी ही जुझार के ॥७३॥

कवित्त

दयासिंह पूरबी सो मोरचा लगाय भलो,
 तोप औ गुबारे मार छज्जे सो ढाये^२ हैं ।
 काहनसिंह करे जंग, तुरकन के काट अंग,
 जानो पिये भंग, गिरे मूरछा सो आये हैं ।
 मोरचा बढ़ाये मार मार सो मचाये,
 जम्बूरे औ जंजाइल अनेक वै चलाये हैं ।
 दुआबिये जो सिंह, सो बघेलसिंह मिसला^३ है,
 लड़े हठ धार मन, कोप को बढ़ाये हैं ॥७४॥

दोहा

तुरक कोप कर मार हैं, जंबूरे अरु जंजाइल ।
 लगे सीस जो सिंहन के, बैकुण्ठ जाय तत्काल ॥७५॥
 सिंहन के कर ते जोऊ, लगे जो सन्मुख सीस ।
 बहिश्त गये मन हर्ख धर, इच्छा थी जगदीश ॥७६॥
 श्री गुरु पंथ सो जस कह्यो, पढ़े सुने चित्त लाय ।
 गणेशदास पिंगल भने, चार पदारथ पाय ॥७७॥
 इति श्री गुरु खालसे जी का, फतेहनामा मुलतान युद्धकथनम् ॥
 प्रथमोऽध्यायः सम्पूर्णः ॥

१. बाबा फूलासिंह की तरह साधुसिंह भी अकालीदल का एक प्रसिद्ध योद्धा था । मुलतान के जीतने में उसने बड़ी वीरता दिखाई थी ।

२. प. अर्थात् गिराना ।

३. मिसला से तात्पर्य छोटा मिसलदार है ।

अध्याय २

८१६

दोहा

सभ सिह्न पति सिह् ने, लिख पाती सो पठाय ।
कोऊ वकील सो भेज के, किला सो लियो मिलाय' ॥१॥

कवित्त

मुजप्फर जो खान, तासो ऐसे ही बखान,
कहे, देओ मुलतान, नाहीं पाछे पछ्तायेंगा ।
करोगे जो जंग, तब लूटोगे निहंग,
तोपां मारेगे निसंग, जमधाम तू सिधायेंगा ।
अब लों तुम्हारा, कछु काज न बिगारा,
अरु कोपेगे जो सिंह, तब बड़ा खता खायेगा^१ ।
सिह् लिख के पठायो, तू लड़ाई बंद पायो,
सभ मन में एहि भायो, जो वकील आगे जायेंगा ॥२॥

दोहा

मबानीदास^३ को भेजिये, बड़ो मुजान वकील ।
कादरबख्श भी साथ तहिं, पठिये कीन दलौल ॥३॥

१. महाराजा का यह भाव था, कि बिना अधिक रक्तपात किए मुलतान का दुर्ग भी हाथ आ जावे ।

२. प 'बड़ा' विशेषण है 'खता' का, 'खता' का अर्थ "गलती" । "खता" साधारणतया स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होती है, परन्तु शाहपुर के इलाके की ओर । "उसने बड़ा खता खाधा," बहुत बोला जाता है इस लिए यहाँ बड़ा शब्द का प्रयोग कवि ने गलत नहीं किया ।

३. देखिए सूचीपत्र (१) ।

सोरठा

चौधरी कियो वकील, कादर बख्श जहि नाम है ।
गढ़ देखत करी दलील, किशा कि काल को धाम है ॥४॥

सवैया

देख किला चित्त चोंक रह्यो, यहि सिंहन के कर में किमि आवै !
पीर सहायक हैं इन के पुन, और पठान जवान सुहावै !
तोप चढ़ी चहुँ ओर किले के, जम्बूरे जंजाइल को अन्त न पावै !
देख मुजफ्फर के तन को मन, कादर बख्श सो जाय सुनावै ॥५॥

सोरठा

करी सलाम अलेक, कहो खान कुब्र खैर है ।
खुदाय जोराखे टेक, तुम आवन कैसे बनी ॥६॥

सोरठा

भवानीदास भी साथ, बैठ गये दोऊ तब ।
कहूँ सो ऐसी गाथ, जा ते भला सो होय तुम ॥७॥

कवित्त

कहत है पुकार तोहि, साची जान बात, मोहि,
कैसे रहिन होय, तेरा किला घेर डारो है ।
चहुँ ओर घेरयो गढ़, एकन ते एक अड़,
सूरमे जवान खान, नीके कै निहारो है ।
तेरो मुलतान खान नाही, अब सिंहन को
दीजे आप हाथ तो मरातबा' अपारो है ।
न तो पछतायें, समां फेर हुं न पायें,
मैं तो दीन ही की सांझ जान, तोहि पै पुकारो है ॥८॥

दोहा

खान कहे सुन चौधरी, किला सो देहूँ नाहि ।
लड़े मरे हारे नहीं, जान लियो मन माहि ॥६॥

कवित्त

तोहि तो कहें सुजान, ऐता हठ किहां ठान,
मेरा जो प्रमान, तुम सुनो चित्त लाय के ।
तुरंग हैं अपार, गज भूलत हज़ार,
जोधे कड़े हथियार, जुद्ध करेगे मचाय के ।
पिदर, बिरादर, जो धावत थे एक दौर,
सुनत ही सिंह तेरे जात दहलाय के ।
आयो बन मीत, दगा धार बड़ा चीत,
गढ़ छाड़ भाग, नीति ऐसे कहत सुनाय के ॥१०॥

दोहा

कादर नादर जान भल, आदर दीन बिसेख ।
हम को भी कायर करै, हिये छुड़ावै टेक ॥११॥

चौधरी उवाच—

सवैया

खान सुजान ! अजानपना तज, मान कहा सुन्यो मोहि भाई ।
पीछे की बात बखानी तुम्हें, इह साच सभे हमरे जी आई ।
हो तो समां वही बीत गयो, अब साहिब सिंहां नू दीनी बड़ाई ।
हमरो तुमरो इक दीन भयो, तहि ते तुम जीवन बात बताई ॥१२॥

१. फ. अर्थ 'डर जाना', खान मुजफ्फर खा और अहमदशाह अब्दाली एक ही वश के थे । अब्दाली के आक्रमणों के समय सिक्ख छुपा मार बन मे इधर-उधर छिप जाते थे । इसी लिए कवि ने खान के मुख से यह शब्द-नकलवाये हैं ।

दोहा

खान सुजान सो सुनो तुम, ऐसा राज न खोय ।
राज धन सो जात पिख, अर्थ दीजिये सोय ॥१३॥

कवित्त

दीजे मुलतान गढ़, सिंहन सों नाहीं अड़,
भूटे सभ तेरो फड़^१ करी सो बड़ाई है ।
गुगल पठान, भरे बड़ो अभिमान,
लहिंदे धरती ओ जुवान जिन्हां हाल-चाल पाई है ।
तेरो सभ भाई, मारे सिंहां ने खपाई,
अब तेरे सिर आई, मौत, कहां भज^२ जाई है ।
मारयो कर जोर, न मरोर कोऊ या में रही,
कुतबा कसूरिया^३, तू देख तेरा भाई है ॥१४॥

सोरठा

फिर कहि कोप सों खान, सुनहु मीत अनीत है ।
देहि हैं अपने प्रान, किला न कबहुँ दैहिगे ॥१५॥

कवित्त

न तो सुन भाई, जुद्ध करांगे मचाई,
सेना जोऊ चढ़ आई, सभ मारागे बटोर कै ।
मेरी तलवार धार, लागे जब एक बार,
मरेगे हज्जार सिंह, देखिये सो जोर कै ।
तेरा दीन जाने, नां तू मेरा कहा माने,
जुद्ध करे हठ ठाने, सनेहा^४ लै जा मेरी ओर कै ।

१. प. अर्थ फैलाव ।

२. प. अर्थ भागना ।

३. तात्पर्य कुतुबु-द्दीन नवाब कसूर से है । आधा नाम घृणा का सूचक है ।

४. प. अर्थ सदेश ।

हुन^१ आये जो निहंग, तासों करें बड़ जंग,
लूट लेहिंगे तुरंग, पठें नाहिं एक मोड़ कै

वकील उवाच—

दोहा

वेद, पुरान, कुरान में, भावी प्रबल बखान !
होनहार तो सिर चढ़ी, सुनियो खान सुजान ॥ १७ ॥

कवित्त

खान सुनो तो विचार, सिंह चढ़े बेशुमार,
लड़ो कैसा रिदा धार, ताहीं अन्त न आवतो ।
दीनहुँ की सांझ जान, आये तोहि समझान,
तेरो बल एहि खान, मोहू को डरावतो ।
तो को रोग भयो भारी, बहिश्त^२ जान दिये धारी,
बचे आप नाहीं, मोहे सग ही मरावतो ।
उनहुँ के राज भल, पाये सुख कोट खल,
तिन सों जो करे छल, कहां सुख पावतो ॥ १८ ॥

दोहा

सुख की बाते का कहै, तुम हो जिम्मी सो दार^३ ।
सभ के आगे निंव चलत, जो आवत सरदार ॥ १९ ॥

कवित्त

चौधरी सुनो जी सात, कोवरी न करो बात,
तेरी जात रईयत, सदा न विचार है ।
हम हैं पठान माने और की न आन,
लड़ें मरे जौ लौं प्रान, सदा आदि ते बिहार है ।

१. प. अर्थ अब ।

२. फ. अर्थात् स्वर्ग ।

३. भाव जमींदार से है ।

बोले फिर कादर, सो एहो बात नादर,
मिलो है आदर, ना चादर उतार है ।
दीजै मुलतान, लीजे सूजोकोट खान,
सरदार है जमान, ऐता भूठ न उचार है ॥ २० ॥

दोहा

अजु कछु बिगरियो नहीं, मन्तरी भ्रात बुलाय,
आपस में रत मंत्र कर, कहो बात समझाय ॥ २१ ॥

सोरठा

लीये सो वेग बुलाय, भ्रात मुसाहिब मन्तरी,
कहु दीजे प्रगटाय, लड़ो, मिलो क्या दिल तुम्हें ॥ २२ ॥

कवित्त

शाकर सिकन्दर सो, बैठ्यो जाय अन्दर,
में मन्दर एकन्त मता कीनो है बनाय के ।
बोल्हो दीवान, आये सिंह बलवान,
लड़े बचे न पठान, कहो बात सत भाय के ।
भतीजे और भ्रात, कहें लड़ो बिख्यात,
जान लियो बात सात, रहो पीछे पछताय के ।
कोऊ दे के अपराध, लै हमें गहि बान्ध,
भोरे' पाके मौन साध, तब चले न उपाय के ॥ २३ ॥

दोहा

सिंह जो जामन देत है, जे गढ़ पठ हैं तांहि !
रोक लहै वही किले को, जान लियो मन मांहि ॥ २४ ॥

कवित्त

तांते और न उपाव, करे सिंह दाव घाव,
लड़ो अति ही रिसाव, मारे खूब तलवार है ।

सभी कहे सुनो खान, तू तो आप हैं सुजान,
 मिले बचें न पठान, भोरे पर्व^१ तो लाचार है ।
 बुलाय के सो कादर, को कहे बात नादर,
 है मांहे जो बहादर, सो चादर उतार है ॥

... .. (१)

... .. (२)^३॥२५॥

दोहा

भवानी दास कादरबख्श, दोऊ कहत समभाय ।
 फिर वेला नहि पाई है, पछतावा रहि जाय ॥२६॥

कवित्त

जात हो पुकारे, तै तो किले कोट हारे,
 संग प्रान ही पधारे, एहि जाती बात सही^३ है ।
 कौ लौं समभावै, बार दूजी नहीं आवे,
 भावे पीर को मनावे, बात जीवे की न लही है ।
 गोबिन्दसिंह जोत धरी, पीरन की पीरी हरी,
 ओट का की धरी, जां ते तेरी टेक रही है ।
 जाहै जो न माने, तू तो काहू की बलाए जाने,
 दीन को पछाने, तांते एती बात कही है ॥२७॥

सोरठा

कहि समभायो कोट, एक न मानी हिये तिन ।
 धार हिये गुर ओट, आयो सिद्हन दल विखे^४ ॥२८॥

१. प० जव अंधेरी कोठरी मे बन्द किये जावोगे तब लाचार हो जावोगे ।

२. चौथी पक्ति छुटी हुई है ।

३. अर्थ सच प्रतीत होती है ।

४. दोनो वकील निराश हो कर लौट आते हैं, महाराजा को इसकी सूचना

सोरठा

आय कह्यो समझाय, खान आन मानत नहीं ।
करहूं जुद्ध मचाय, जो चढ़ आये मोहि पर ॥२६॥

कवित्त

दीवानचन्द कहे कोप, सुनेओ रल करी धोप,
सेर सी जो ओप, किधौं टंक न करायिबो ।
अब लौं ते कोट, सो छुडाय^१ लेत कौन ओट,
करी तुम्हें खोट, जो पहि बातन लगायिबो ।
आगों^२ कहत बखान, मोहि साहिब की आन,
कहे 'दीजे मुलतान', नहीं पाछे पछतायिबो ।
पै विचार के सो देख, बदी लिखी हमें लेख,
नहीं सभ ते विसेख, कोऊ उन्हें समझायिबो ॥३०॥

सोरठा

बैठे लाय दिवान, खड्गसिंह और फतेहसिंह ।
रामदयाल प्रधान, साधूसिंह निहग हैं ॥३१॥

सवैया

और सभे सरदार जोई, मजीठिये, कलसिये, बेग सो आये ।
शामसिंह हरिसिंह, करमसिंह, सु वाहिगुरु की फतेह सो बुलाये ।
लाय दीवान बखान कहे, किधौं खान तो आन न मानत भाये ।
सिंह साहिब को लिख के पठईये, 'मुलतान न देत है, जुद्ध मचाये' ॥३२॥

लाहौर भेज दी जाती है, वहा से आज्ञा आने पर दुर्ग का मोरचा आरम्भ कर दिया जाता है, और पुनः युद्ध शुरू हो जाता है (नः ३७-७२) तक इसी घमसान युद्ध का ही वर्णन है ।

(१) प० अर्थ छुडाय ।

(२) पं. अर्थ आगे से ।

दोहा

सभ सिंहन मत एक कर, लिख पाती सो पठाय ।
जो आझा, तुम लिख पठो, सोई करें सत भाय ॥ ३३ ॥

सोरठा

ले पाती तब दूत' पवन वेग धायो तबै ।
राजन मैं पुरहूत, जाय कह्यो दरबान सो ॥ ३४ ॥

सवैया

आय कह्यो दरबान तबै, 'महाराज । द्वार पै दूत सु आयो ।'
'आवै' कह्यो तो बुलाये लियो, तिन पाती हूं देकर सीस निवायो ।
ऐसे बखान मुजफ्फर खान, न दे मुलतान परान तजायो^१ ।
पाती में ऐस लिख्यो प्रभु जी, जस आझा करो तस जुद्ध मचायो ॥ ३५ ॥

१—महाराजा रणजीत सिंह के समय में डाक का प्रबन्ध प्रशसनीय था । शान्ति के दिनों में प्रत्येक हरकारा छः मील चलता था । परन्तु युद्ध के समय में उसकी गश्त तीन मील कर दी जाती थी, अर्थात् हरकारों की गिनती दुगनी कर दी जाती थी । इस युद्ध के समय इस विभाग का मुख्य अधिकारी (हरकारा वाशी) साहिब सिंह था । उसने मुलतान युद्ध के समय डाक का ऐसा सुचारू प्रबन्ध किया था, कि मुलतान से भेजी जाने वाली सूचना २४ घण्टे में लाहौर पहुँच जाती थी । इस लिये मुलतान विजय होने पर महाराजा ने इसे छः सौ रुपया पुरस्कार दिया था । सन् १८३२ ई० के वेतन पत्रों के अनुसार इस विभाग का वार्षिक व्यय खर्च ५००० रुपये था और इस में ६०० हरकारे काम करते थे ।

२—सोहनलाल ने अपनी रचित पुस्तक के द. २ पृष्ठ २१७ पर भी यही लिखा है, कि नवाब मुजफ्फर खान ने जीते जी हाथ से दुर्ग देने की अपेक्षा मरना अच्छा समझा । 'अजी हयाते मुस्तमारे चन्द रज़ा मुर्दन बेहतर अस्त' ।

दोहा

सुनत सिंह कोपत भयो, लियो दीवान बुलाय ।
सिंहन को ऐसे लिखो, मारो खड्ग उठाय ॥ ३६ ॥

सवैया

परवाना लिख्यो सो बनाय तबै, सिंह साहिब ने तुम ऐसे अलायो ।
जुद्ध करो न डरो इन ते, तुमरे गुरु आप जो होय सहायो ।
रहकले और गुबारे धरे, सो जंजाइल जम्बूरे की मार मचायो ।
मार के खान सो लै मुलतान, जो लूट पठान जैकार बुलायो' ॥ ३७ ॥

दोहा

परवाना लिख्यो बनाय के, दियो दूत के हाथ ।
अर्जुन ज्यों जस लीजिये, तुम्हें ओट रघुनाथ ॥ ३८ ॥

सोरठा

ले धायो तब दूत, पवन-पूत ज्यों बेग दे ।
जाहिं थे सिंह सपूत, आय दियो परवान तहि ॥ ३९ ॥

१—इस सवैया मे कवि ने विशेष रूप से निम्नलिखित तीन बातें स्पष्ट की हैं—

(क) महाराज ने आज्ञा दी कि धावा बोल कर पहले दुर्ग पर गोले बरसा कर इस की दीवारों आदि तोड़ दी जाए ।

(ख) चाहे मुलतान के चारों ओर घेरा डाले तीन महीने हो चुके थे, किन्तु नवाब के हथियार डालने के लक्षण अभी तक दिखलाई नहीं देते थे । इस लिए अगले आक्रमण के लिए महाराजा ने सेना को तैयार करने के उद्देश्य से विजय-प्राप्ति के पश्चात् उन्हें नगर लूटने का लालच भी दिया ।

(ग) महाराज युद्ध के कामों मे इतने निपुण थे कि लाहौर बैठे ही युद्ध सम्बन्धी आवश्यक आदेश अपने सैनिक अधिकारियों को भेजते रहते थे । इस का उल्लेख योसूयीय समकालीन इतिहासकार प्रसिप और कनिष्क आदि ने भी अपनी पुस्तकों मे किया है ।

कबित्त

लाय के दीवान, सिंह करें गुरु ध्यान,
 आपनो बिरद पछान, रच्छ कीजे अब आय के ।
 सभी सिंह आय, मत्ता एक ही बनाय,
 पाती सिंह जो पठाय, सुनी सभे चित्त लाय के ।
 ऐसे लिख के पठायो, तोप रहकले चलायो,
 मार तुर्कन खपायो, करो जंग सो रिसाय के ।
 नृप आयस जो आई, तैसे किये बने भाई,
 बैठो मोरचे लगाई, आपो आवनी सु जाय के ॥ ४० ॥

दोहा

सभ सिंहन मन्तर कियो, करो जुद्ध मन लाय ।
 छत्र धर्म प्रतिपालना, मारू दिये बजाय ॥ ४१ ॥

सोरठा

धौसे करी टकोर, मारू दिये बजाय के ।
 फिरयो नकीब सु दौर, जुद्ध करो प्रभात सभ ॥ ४२ ॥

सवैया

ढोल नगारे अपार बजे, शूतरी रणके ते नफीरी बजावे ।
 पेंच तूर सो ऐसे लगे बजने, जो पहि कायर भी लड़ने चढ़ धावें ।
 सुन के सभको चित्तधारयो तवैं, सभ ऐसे लड़ो, पग पाछे न पावे ।
 रणकै बनकै जो चढ़े बन के, जो लड़े बनकै सभ ऐसे सुनावें ॥ ४३ ॥
 मुजफ्फर खान सुनी धुन कान, सिकन्दर खान ताहि बुलवायो ।
 सिकन्दर खान, बड़ो बलवान, दलावर खान भतीजा है आयो ।
 अगरदाद है खान दिवान तैसे, सो भुजा गहि के तहि पास बिठायो
 किहो, सिंह चढ़े सो लड़े न टलें, हम हूँ सो लड़ें कि मिले मन भायो ॥ ४४ ॥

दोहा

मन्त्र करो मिल एक सभ, जहि पत रहे हमार ।
जस होवे इह लोक में, भोगें रस सुख सार ॥ ४५ ॥

कवित्त

बोले अगरदाद खान, मिलत हो जे हो सुजान,
बचत है परान, सूजोकोट हथ आवतो ।
सिकन्दर खान बोले भ्रात, दैसन में चले बात,
मिलें अररात, सो कलंक है लगावतो ।
मारें शमशेर करे लोथन' के ढेर,
आवैं नाहीं चढ़ फेर, घेर घेर के खपावतो ।
कहे सिकन्दर पुकार, जुद्ध करे निराधार,
मारें ऐसी तलवार, मेरे आगे कौन आवतो ॥ ४६ ॥

दोहा

हस के कहे दीवान तब, करो गरब की बात ।
घोड़स मासे की लगे, तो भूल जाय सुध सात ॥ ४७ ॥
यह जोबन गति मेघ की, सावन को हड़ जान ।
ताते जग जस लीजिये, दीजे भावे प्रान ॥ ४८ ॥

सवैया

भ्रात कहे जस बात इन्हें, जो लड़े ठठके अति जुद्ध मचावें ।
दिवान कहे जस तो इहो पहि, मोए सभी सुख राज वजावे^१ ।
पुत्र कलत्र गये तज के, सो लड़े है भले जग बात चलावे ।
मिलें बचे प्राण सो देहें मुलतान, जो सूजो ही खान में राज कमावें ॥ ४९ ॥

१. प. अर्थ 'शव'

२. प. अर्थ 'गैवाना ।'

दोहा

पावस रुत आइ जवे, सिंह जाये निज धाम ।

मुलतान सु लेह छुड़ाय फिर, मता एहि अभिराम ॥५०॥

३ ॥

सोरठा

कहे सिकन्दर खान, सिंहन की पोथी लिख्यो^१ ।

करे कसम बहुतान, फिर मारत तुरकान को ॥५१॥

दोहा

अटक सो वाले^२ कियो मोहि, इन विसाह^३ न कोय ।

जद कद दगा कमांवदे, जानो चित्त में सोय ॥५२॥

कवित्त

सिंहन की रीत, दगा धारें हित्त चीत,

करे प्रथम प्रीत, फिर मारते विसाह के ।

जिनहूं को मारयो, फिर न ताहुं सिंगारियो,

फिर कैद कर डारयो, हाथी लैत हैं चढ़ाय के ।

(१) पोथी से अभिप्राय गुरु-ग्रन्थ साहिब से नहीं वरन् सिक्खों में प्रचलित इस धारणा से है, कि मुसलमान चाहे कितनी ही सौगन्ध खाये, उसका विश्वास नहीं करना चाहिए । जफरनामे में गुरु गोविन्दसिंह जी ने औरंगजेब को इस प्रकार लिखा है :—

‘मरा एतबारे बरी कसम नेस्त’

(२) अभिप्राय जहादादलों से है । महाराजा ने इसको अटक के दुर्ग के बदले में वजीराबाद में एक अच्छी जागीर दी थी, और इसके साथ किसी प्रकार का विश्वासघात नहीं किया था । पृष्ठ के लिए देखिये शहामतअली कृत (Sikhs and Afghans) ‘सिक्ख एण्ड अफ़गान्स’ पृष्ठ १५६ ।

(३) पं. अर्थ ‘विश्वास ।’

तांते मिलो नाहीं, सो विचारो मन माहीं,
समां फेर नाहीं, फिरो पाछे पछताय के ।
सिंह दीव यां ते चढ़ धावों, बड़े मारु को बजावो,
शस्त्र अंग में बन्हावो^१, करो जंग सो रिसाय के ॥५३॥

दोहा

ऐसा मता सो कीन रल, कस कमरां परधान ।
सजोई पहिर बखतर सजे, आये मुगल पठान ॥ ५४ ॥

कवित्त

आये मुगल पठान, बड़े सूरमे जवान,
लड़े सभे हठ ठान, मारे तुपक सो तीर हैं ।
कराबीनां हूँ चलावे, सो तमाचे हैं बगावे,
बड़ा जुद्ध सो मचावें, और ध्यावे गुरु पीर हैं ।
देख सिंह अति चढ़े, अगो तुरक जूम लड़े,
रहे रुखन ज्यों खड़े, मार मार करे धीर हैं !
कीनों तुरकन सो जोर, रहे सिंह मुख मोर,
करे जो बहौर, तब लड़े सूरवीर हैं ॥ ५५ ॥
खड्गसिंह^२ डेरे के जो सिंह चढ़े बेग धाय,
मार मार तुरकन को, दीनो अति त्रास है ।
दूजी ओर दलसिंह, सिंह सो चढ़ाये भले,
मारो आज मुसले, नवेड़ो एहो प्यास है ।

१. प. अर्थ 'बान्धना ।'

२. मिसलदार था, विजय के पश्चात् किले के प्रबन्ध के लिए नियुक्त हुए अफसरों में से यह भी एक था । देखिये खालसा दरबार रिकार्ड, बगडल नं० ८ सम्बत् १८१५-१६ । इस की वीरता के लिये देखिये पेशावर युद्ध नं० २ ।

गर्भा सिंह कहे लड़ो, ताहि पत रहे अब,
 लड़ने को डट्टे, नृप देत जो शाबास है !
 दीवान रामदर्याल, ताहिं फौज जो बिसाल,
 मारे मुसल्ले संभाल वड़े अन्दर निरास है ॥ ५५ ३ ॥

कवित्त

तोप औ गुबारे चले, रहकले सु मारे भले,
 पृथवी थर थर हिले, सो अन्धेरा कर डारयो है ।
 सूझे कछु नाहीं, सिंह कहें मन माहिं,
 तोपां चले अवगाही, देख प्रान सो पधारयो है ।
 करे सिंह जो विचार, पाछे जाय निरधार,
 निरप^२ देत है बिडार, समां बन्यो अब भारयो है ।
 गुरु होय जो सहाई, तोऊ बने बात भाई ।
 दोहूँ भांत मृत आई, गुरु हाथ दे उबारयो है ॥ ५७ ॥

सोरठा

तोपां चलीं अपार, और गुबारे रहकले,
 घायल सिंह हजार, कुछ-इक गये सुरगधाम को^३ ॥ ५८ ॥

सोरठा

देख सो हसियो खान, मरे सिंह सुन फूलियो ।
 दीनों बहुत इनाम, गोलन्दाज प्रसन्न होय ॥ ५९ ॥

१—एक मिसलदार था । देखिये खा० दा० रि० बख्त न० १० ।
 इसका नाम पेशावर युद्ध मे भी आयेगा ।

२—नृप शब्द को पजाबी रूप दिया गया है ।

३—इस बात की पुष्टि दीवान अमरनाथ के लेख द्वारा भी होती है ।
 देखिये ज्ञ० ना० पृष्ठ ११४ ।

सवैया

सिंह मता सो करे मिल के, जोऊ उपाय करो हम हूँ सुख पावे ।
दीवानचन्द को ऐसे कह्यो सभ ही, जो पहि तोपां सामने तोपां चलावे ।
रहकले और गुबारे धरे, सोई बुर्ज बनेरे को वेग ढहावे ।
हम हूँ तुम हूँ रल मोरचे माहीं, सुलयापटै और सुरंग चलावे ॥६०॥

दीवान कोल^१ आये मता सो पकाये, जो आपो ही आपने डेरे सिधाये ।
कियो विस्वाम सो रैन प्रमान, भये भिनसार जयकार बुलाये ।
रहकले और गुबारे धरे, धलले धलले कर तोप चलाये ।
ऐसी चली पृथ्वी सो हली, बुरज होई गली सो बनेरे ढहाये ॥६१॥

दोहा

किन्हुं सार दोनी^२ तबै, चौक सु बैठो खान ।
कह्यो सो मारो वेग दे, तोप गुबारे जान ॥६२॥
गुबारे और सो मार देई, तकियो चौक निसान ।
गोले जाय परे तहां, जहा सो बैठो खान ॥६३॥

कवित्त

बैठो जहां खान, गोले परे तहां आन,
मारो मुगल पठान, दिये खाक मे रुलाय के ।

१. प. अर्थ पास, समीप दीवानचन्द के पास आकर War council लगाई गई ।

२ इस दोहे से ज्ञात होता है कि किले मे से खालसा सेना को खबर पहुचाने का कोई साधन अवश्य था । इस की पुष्टि मुहम्मद लतीफ की 'तारीखे-पजाब' और अहमददीन बटालवी के हस्तलेख से भी होती है । इस के अतिरिक्त ये दोनो मुसलमान लेखक यहा तक भी लिख देते है, कि कई बड़े-बड़े सरदार नवाब का साथ छोड गये थे ।

करत सलाम, जाय पीरन को धाम^१,
 दीजे मोह को आराम, बिनै सुनो चित्त लाय के।
 बोली हमशीरा, भेद नाहीं गुर पीरा,
 लड़ो नाहीं बच मेरा, सरनी पड़ो तुम जाय के।
 अज खाब मोहे आये, नीले बाने सो बनाये,
 पांचो सिंह^२ चढ़ धाये, लिया तख्त छुड़ाय के ॥६४॥

दोहा

सुन्यो सो तुमरो रुबाब इह, कह्यो कोप तब खान।
 करो अराम सुधाम तुम, पड़ो सु जाय कुरान ॥६५॥

कवित्त

कोप्यो तब खान, जुद्ध कीजिये निदान,
 चढ़ो मुगल पठान, मारो तोप सु चलाय के।
 करो सिंहन को जेर, आवे नाहीं चढ़ फेर,
 मारो सभ ही को घेर, देख्यो खाक में रुलाय के।
 गोलंदाज को बुलायो, सिरोपाय है पहनायो,
 मार गोले तो रिसायो, कह्यो ताहीं समभाय के।

१. 'पीरन को धाम' से तात्पर्य शेख बहाउद्दान और शेख रकनुद्दीन की उन खानकाहों से है जो किले में अवस्थित हैं। ये दोनों मुसलमानों के सब से बड़े पीर थे।

२. पाँचों सिंहों से अभिप्राय गुरु गोविन्दसिंह के पांच 'प्यारों' से है। कवि ने इस कवित्त की पिछली दोनों तुकें मुजफ्फर खान की बहन के मुँह से कहलवा कर यह प्रकट किया है, कि घिरे हुए लोगों को अपनी हार का पता पहले ही लग चुका था। नवाब की बहन के सपने में नीले वस्त्र पहने हुए खालसा का किले में प्रवेश करते हुए देखने का उल्लेख एक दूसरे समकालीन कवि हाकिमसिंह ने भी किया है। देखो "पंजाबी दुनिया" सन् १८५४ का जून अंक, पृष्ठ ३६।

चहुँ ओर मारो, तीर मोरचे उतारो,
सिंह सभ ही बिड़ारो, करो जुद्ध ऐसा जाय के ॥६६॥

दोहा

गोलंदाज प्रसन्न होय, करी सु तोप तैयार ।
दूरबीन रख पेख के, लीये निसाने धार ॥६७॥

कवित्त

तोपां दोहू सु चलाये, गोले घूकदे सुधाये,
डेरा शामसिंह लाये, तहा परे सोई थान के ।
दोहू सिंह मारे, देव-धाम सो पधारे,
कुछ घायल दुखारे, मागे पानी दिहो आन के ।
तोपां चौं दायो, दूजी ओर सों चलायो,
जोध सिंह डेरे पायो, सिंह मारे चारे जान के ।
सिंह ऐसे ही पुकारे, बिधि आप जो च्वारे,
गोले आंवदे दुधारे, जोऊ बड़े परमान के ॥६८॥

सवैया

कोप दिवान सु चन्द कियो, बडी तोप के गोले सु वेग चलाये ।
झ्योड़ी ढाय सो बुर्ज उड़ाय, जो आगे हुं की सो दीवार गिराये ।
बख्र हूं पात परे कर घात, सो तुरकन रात अवधन आये ।
मूर बररात, कहे नहीं जात, किधो सत सात कि आठ उड़ाये ॥६९॥

सोरठा

कुछ न रही संभार, दिवस रैन सूझे नहीं,
गोलन परी गुबार, धुंधूकार अपार है ॥ ७० ॥

१. भगिया की तोप के लिये सौ गोले और महाराजा ने मुलतान भेजे ।
यह बात उल्लेखनीय है कि जेठ की गर्मी के दिना मे महाराजा लाहौर के किले
मे बैठ कर युद्ध के लिये सारा गोला बारूद अपनी देख-रेख में भेजते थे ।

कवित्त

होइ गई सो रैन, भई दोहीं धिरीं चैन
 सभ लागे सुध लैन, कौन घायल कौन मार्यो है ।
 सन्मुख जोऊ मारे, सुरधाम सो पधारे,
 वरे मोहनी सुनारे^१, रहे सु सुखार्यो है ।
 कहत गणेशदास, करी जिन्हें गुरु आस,
 कियो सो बैकुण्ठ वास, सुख सो पधार्यो है ।
 गोबिन्द सिंह आप, दीनी सिंहन को थाप,
 भयो बड़ो परताप, गुरु हाथ दे उबार्यो है ॥ ७१ ॥

दोहा

इह बिध जुद्ध करत सभे, बीत गये दुई मास^२ ।
 सीस लगे सां अनेक तहि, कियो बैकुण्ठ निवास ॥ ७२ ॥

इति श्रीगुरु खालसे जी का फतहनामा
 मुलतान-युद्ध-पूर्णो नाम, द्वितीयोऽध्यायः सपूर्णः ॥



१. स्वर्ग में सुन्दरिया की प्राप्ति कवि ने मुसलमानों के लिये लिखी है । यह विचार कवि ने पुनः कवित्त न० २१ अध्याय ४ में प्रकट किया है ।

२. मलतान शहर पर आक्रमण १५ मार्च के लग-भग हुआ था ।

अध्याय ३

दोहा

सभ सिंहन पति सिंह इत, मन महिं करे विचार ।
ध्यान धरे रिद गुरु का, मुलतान लियो सुख सार ॥ १ ॥

कवित्त

श्री गुरु धर्यो ध्यान, बिरद आपनो पछान,
दीजो मुलतान, पन्थ रावरो ही जान के ।
तेरो जो है धाम, सर अमृत सो नाम,
करूं सेव तहि थान, बड़ो आदर सो मान के ।
बुंगे हैं अपार, करूं सेव सुखसार,
धन देहो कर धार, ताहि नाही परमान के ।
चहुं ओर रहे दीन, और बड़े है प्रवीन,
सेवो हो अधीन, देओ ताहि बहुत दान के ॥ २ ॥

सोरठा

अस मत मन महि धार, पठे सो और नरिन्द तहां ।
तुरक सो देओ विदार, जुद्ध करे अति ही धनो ॥ ॥

सवैया

पूरब को सिरमौर भयो, सो खुशहाल है सिंह जो नाम धरायो ।
बुलाय के आयस ताहि दर्ई, जो चढ़ो मुलतान को देर न लायो ।
घोड़ चढ़े और पलटन संग लै, जुद्ध कराई गुरु हो सहायो ।
मार के खान सो लै मुलतान, जो लूट पठान, जैकार बुलायो ॥ ४ ॥

१. महाराज ने घुड़सवारो और पैदल सिपाहियो की सेना जमादार खुशहालसिंह के नेतृत्व मे पहली सेना की सहायता के लिये भेजी थी, क्योंकि मिश्र दीवान चन्द ने एक पत्र द्वारा बहुत सी पैदल सेना की माग की थी ।
देखिये सोहनलाल द० २, पृष्ठ २१७—१८ ।

दोहा

पावस आवत जान ही, करो उपाय शताब ।
तोड़ो किला सो वेग दे, नहीं तो आवत आव^१ ॥ ५ ॥

कवित्त

खुशहालसिंह चढ़े, हथियार कर फड़े,^२
देख बैरी सभ डरे, रहे सीस को निवाय के ।
गये मुलतान, रहें मुगल पठान,
भरे बड़े अभिमान, सो जो आन पेखे जाय के ।
घोड़चढ़े लये संग, छब पलटनां अनंग,
बाजे बाजत मृदंग, सन तम्बूरे रणकाय के ।
कह्यो मोरचे लगावो, हेठ सुरंगां चलावो,
ता में दारु बहुत पावो, देवो अगन लगाय के ॥ ६ ॥

दीवान चन्द सुनी सार, क्रोध बड़े सों उचार,^३
किला लीनों मार, अटकाओ रंच रह्यो है ।
कह्यो मोरचे न लावे, हम आप ही छुड़ावे,
लड़े होये रहे फावे, अज-काल किला लियो है ।
चोबदार जा सुनायो, तुमे मोरचा न लायो;
हम लड़े धमकायो. फतह लैन तुम चाह्यो है ।

१. फ० अर्थ पानी यहा तात्पर्य वर्षा से है।

२. प० अर्थ पकड़ना ।

३. मिश्र दीवान चंद और खुशहालसिंह के मध्य यह कोई नई अनबन नहीं थी वरन् पहले से ही चली आ रही थी । इसका परिणाम यह हुआ कि मिश्र दीवान चंद ने मुलतान की विजय के पश्चात् महाराजा को समझा बुझा कर खुशहालसिंह को सरदार-ड्योढी के पद से हटवा दिया ।

सुन बोल्हो ऐसे बैन; सो तेरे कहे नहींअन,
निरप^४ आज्ञा हमें दैन, तब लड़ने को डाह्यो है ॥ ७ ॥

दोहा

घोड़चढे और पलटनां, लाये मोरचे आन ।
खुशहाल सिंह ऐसे कहे, लड़ो बड़ो हठ ठान ॥ ८ ॥
खुशहालसिंह मन्तर^१ कह्यो, सुन्यो सभन चित लाय ।
आपो अपने मोरचीं, सुरंगां देओ चलाय ॥ ९ ॥

कवित्त

एक सुरंग^२ जो चलाई, खाई तीर जब आई ।
हेठो हेठ सो पुटाई, बुरज तले सो टिकाई है ।
ता में दारू बहुत पायो, सो बसन्तर जो लायो,
बुर्ज आधा है उड़ायो, अरि कहे मौत आई है ।
सोये मुगल पठान, संग बेगमा सुजान,
लागी आग तिने आन खाट साथ ही उड़ाई है ।
रोवे भ्रात ताई, जले दोजक^३ की भाई^४,
आगे करेगा खुदाई, अन्त नाहिं सो लखाई है ॥ १० ॥

१ जो सन्देशा महाराज ने लाहौर से भेजा था ।

२. यह वह सुरंग थी जो खिजरी दरवाजे के सामने भूमि के नीचे नीचे साई तक खोदी गई थी । इसका उल्लेख नवाब के बड़े पुत्र सरफराजखा ने अपने वश की हस्तलिखित पुस्तक के पृष्ठ १०५ पर भी किया है । खालसा सेना अपने मोर्चों को बढ़ाते बढ़ाते दुर्ग की खाई तक जा पहुँची थी और ज़मीन के अंदर ही अंदर सुरंगों में तैयार करते जाते थे ।

३. फ० अर्थात् नरक ।

४. प० आग ।

दोहा

उड़यो बुरज जब सुरंग सों, सुन्यो खान प्रवीन ।
ऊपर ते हठ कर कह्यो, मनो भयो अति दीन^१ ॥ ११ ॥

सोरठा

खान कह्यो समझाय, खबरदार रह्यो तुमै ।
और जो सुरंग चलाय, अगन लगायो प्रथम तुम ॥ १२ ॥

कवित्त

सुरंग दूजी ओर लाई, धूर कोट तल आई,
ऐसी साफ है बनाई, प्रात आग सो लगाइये ।
सार सुनी ऐसी खान, पठे मुगल पठान,
दारू पावो बहुत आन, वेग ताई को जलाइये ।
खान आज्ञा जो कीन कुप्पे दारू के सो लीन,
बीच आग लाई दीन, वेग रौणी उड़ाइये ।
पांचों सिंह हैं उड़ाये, देवधाम सो सिधाये,
तिन्हे मोख गत पाये, गुरुध्यान सो ल ॥ १३ ॥

सवैया

रामगढ़ियां ने सुरंग चलाई भले, जब आग लगाई ता बुरज उड़ायो ।
बीच पठान जरे सो अड़े, बड़े पाप करे तेहि का फल पायो ।

१. इस की पुष्टि सोहनलाल द० २ पृष्ठ २१६ से भी होती है वहा पर लिखा है कि जय किले की फसीले तोपों की मार न सह सकी तब मुजफ्फर खान ने मुहसिन शाह को सधि का निशान देकर धूरकोट भेजा ताकि खालसा सेना के साथ सधि की बातचीत हो जाय । परंतु इस अवसर पर महाराजा के जरनैलों ने किसी प्रकार की बातचीत करने से बिल्कुल इन्कार कर दिया ।

आग जरे मन्द भाग भरे, सभ दोजख जानहूँ ते डर पायो।
खुदाय की बात लखी नहीं जात, मोये बिरलात सो रोय सुनायो ॥१४॥

दोहा

उडे सिंह, सुन कोण्यो, साधूसिंह निहग,
मोरचे खाई' पायो सभ, ऐसा करहों जंग ॥१५॥

सोरठा

सुन्यो जो ऐसे कान, दीवानचन्द कोपित भयो।
फतह सिंह दत्त सुजान, प्रथम सौ खाई टाप्यो^१ ॥ १६ ॥

सवैया

फतह सिंह जो खाई में कूद पड़्यो, जाई मोरचा सो भली भांत लगायो।
तिन भ्रात जोई विख्यात हुतो, तिन भी पुन रूपर छाल लगायो।
पटझ्यां सों ओटां लडे हित दे नहीं मरने हूँ ते मन नेक डरायो।
ऐसे गने मन माहि भने, किधों लेय किला तुरकान खपायो ॥१७॥
तब ही सभ खालसा कूद पड़्यो, आहलूवालिया सो जाय थाई लई है।
चढ़त सिंह सो कन्हैया खूब लड़्यो, हरिसिंह पड़्यो तब आग दई है।

१. उस समय तक खालसा सेना अपने मोरचे बढ़ाता हुई खाई तक बल्कि इस से भी आगे ले गई थी।

२. इस समय फतहसिंह दत्त रामगढ़िया सरदारों की मिस्ल का नेतृत्व कर रहा था। फतहसिंह और इस के दोनों भाई भी समान रूप से निर्भीक, वीर और प्राणों पर खेल जाने वाले योद्धा थे। फतहसिंह दत्त के सब से पहले खाई पार करने की पुष्टि 'शीरोशकर' के लेखक द्वारा भी होती है।

छप्पर फूक के ऊपर डार, गुरु रखपार सो आप कई है।
तारासिंह^१ के डेरे के सिंह टपे, तब मार ही मार पुकार भई है ॥१८॥

दोहा

ज्वालासिंह पधानियां, लड़यो जो सन्मुख होय।
दलसिंह लड़यो नहेरना^२, गुरु सहाई होय ॥१९॥

सोरठा

गरभासिंह नरिन्द, लड़यो बडो हठ ठान के।
राखे पत गोबिन्द, करे सु बेनती गुरु पहि ॥२०॥

कवित्त

जोधसिंह^३ चढ़े, बड़े क्रोध हूँ सो लडे,
रहे रुखन ज्यों खड़े, पग पाछे हूँ न पायो है।
ऊपरों पठान, गोली मारी ऐसी जान,
लागी साहिब सिंह आन, डेरे घायल सो आयो है।
आय भयो बस काल, सिंह लहेंगे बिसाल
गुरु रूबरू दयाल, जाय सीस सों निवायो है।
गरीब हों निवाज, कहा “लयायो इन्हें आज^४”
परसों हल्ले का समाज, सो अन्त सीस लयायो है ॥२१॥

१. चढतसिंह, हरि सिंह और तारासिंह साधुसिंह निहग के डेरे के निर्भय योद्धा थे। तारासिंह की वीरता का वर्णन पेशावर-युद्ध में दोबारा आयगा।

२. सरदार ज्वालासिंह और सरदार दलसिंह की वीरता का उल्लेख लेपल ग्रिफन की पुस्तक में भी आता है।

३. खाई पर अधिकार करते समय यह वीरगति को प्राप्त हुआ। इस के तीन दिन बाद ही किले पर चारों ओर से आक्रमण आरम्भ कर दिया गया।

४. इन को आज किस लिये लाये हो।

दोहा

सिख कहें कर जोर के, रावर सहज सुभाव ।
जीत्यो रण हित उहां, करना वेग उपाय ॥ २२ ॥

सोरठा

श्रीमुख आप बखान, परसों चढ़े दल आवना,
मारे खान पठान, दोही फिरग अकाल की^१ ॥ २३ ॥

कवित्त

श्री गुरु भये दयाल, चढ़े आप ततकाल,
सिंहन की रखपाल, करो आप जाय के ।
बाजे पंचतूर, रह्यो शब्द भरपूर,
संग लीने ऐसे सूर, जोई मारे आगे धाय के ।
कोप्यो कृपाल, लई कुतक संभाल,
वेग होय बस काल, जिन्हें लागत सो जाय के ।
आये गगा के तीर, सार सुनी ऐसी पीर,
पठियो शमस वकील, करो बेनती सो जाय के ॥२४॥

सवैया

शमसहुँ तबरेज है पीर जो, सूरज तेज इहां जो मंगायो^२ ।
सभ पीरन हुँ रल ताई बह्यो, अब हिन्दू के पीर हुँ पे तुम धायो ।

१. इस सोरठे की चाल शुद्ध नहीं है ।

२. शमस तबरेज मुलतान में एक प्रसिद्ध पीर हुआ है । कहा जाता है कि एक बार लोगो ने उसे मास का टुकड़ा भूनने के लिए आग देने से इन्कार कर दिया । इस पर उस ने सूर्य को नीचे बुला लिया और उसकी गर्मी से मास का टुकड़ा भून लिया । उसी समय से मुलतान में बहुत गर्मी पड़ती बतलाई जाती है ।

कर जोर कहीं सो बहोर करो, पांच साल हूँ लौहम नाहीं दुखायो ।
याद करो तकरार वही, जब उच्च का पीर^१ होई देस में आयो ॥२५॥

दोहा

तब तुम हम को वचन कहे, हम पर भये कृपाल ।
राज करो सुख सों रहो, हम तुमरो रछपाल ॥२६॥

सवैया

पीरन ताहि कह्यो रल के, तब शमस जो तबरेज सिधायो ।
बड़ भाग लखे अपने तब ही, गुरु दर्शन करो हियाराव मे गायो ।
तट गंग में जाय दीदार कियो, तहि बैठे सभे हैं दीवान लगायो ।
कर जोर के जाय सलाम करी, सुदुआये फकीरां है रहिम खुदायो ॥२७॥

दोहा

श्रीगुरु पूछत कुशल है, कहो आये कित काज ।
आगे हूँ जाना कहूँ, कैसा बन्यो समाज ॥२८॥

शमस उवाच—

कवित्त

मुलतान रहें पीर, उन्हें बनी बड़ी भीर,
खाना हक कुछ बीर, नीर पीयें न अघाय के ।
मोहि को बुलायो, तुम पास है पठायो,
ऐसे कहि समझायो, करो वेनती सो जाय के ।
किरपा अब कीजे, पांच साल माँगे दीजे,
आगे बचन सो लीजे, दुख दीजिये न आय के ।
गद्दी मन मे ही गिने, उच्च पीर जब बने,
ऐसे वचन सो भने, रछ कीजे अब धाय के ॥२९॥

१. 'उच्च' मुलतान के निकट मुसलमान पीरों की एक पुरानी जगह है ।
यहा उच्च के पीर से अभिप्राय गुरु गोविन्दसिंह से है, जिन्होंने चमकौर-युद्ध
के समय उच्च के पीर का ऐसा पहरावा धारण किया था ।

दोहा

अपनो वचन पछान के, कर अब हम रखपाल ।
गंग कियो इशानान तुम, चढ़ो धाम ततकाल ॥३०॥

सवैया

गुरु आप बखान, सुनो हो सुजान, लीयो बच मान तो देर लगायो ।
चढ़े जो नरेश, लैहैं तिस देस, हमैं सो तिनैं बन्द करायो ।
तहि ते तुम हों बड़ राज कियो, तुम उम्मत ने मोहि सिक्ख दुखायो !
ऐसे कह्यो तब ही तुम को, जो करो अभिमान तो मार गिरायो ॥३१॥

दोहा

शमस कहे ऐसे सुनो, तुम हो बड़े प्रवीन ।
सेवक औगुण बहुत करे, साहिब बखशस कीन ॥३२॥

१. सवैया न० ३१ और कवित्त न० ३४ में कवि ने सिक्खों और मुलतान के पठानों के बीच पैतीस वर्षीय (१७७२-१८१८) राजनीतिक संघर्ष का बड़े मनोहर ढंग से वर्णन किया है । ऐतिहासिक साक्ष्य यह है कि सन् १७७२ में पहले भगी मिसल के सरदार भण्डासिंह ने नवाब मुजफ्फरखान के पिता नवाब शुजाहखों को हरा कर मुलतान के नगर और गढ़ पर अपना अधिकार जमा लिया था । परन्तु यह अधिकार सात वर्ष से अधिक समय न रहा । पीछे अहमदशाह अब्दाली के पुत्र तैमूर ने भगी मिसल के सरदारों को पराजित कर मुलतान पर अधिकार कर लिया और नवाब शुजाहखों को फिर से वहाँ का राज्यपाल नियुक्त कर दिया । महाराजा ने सन् १८०३ से मुलतान पर छः आक्रमण किये । दो तीन बार मुलतान नगर पर तो अवश्य अधिकार कर लिया, परन्तु गढ़ पर अधिकार करने में उन्हें कभी भी सफलता प्राप्त नहीं हुई ।

सवैया

नीर न काठ को बोड़त है, पिछली पुन प्रीत की रीत चितारे ।
संचयो हमी तो बड़ा भयो, तहिं ते कबहुं न बोड़ सो डारे^१ ।
छाती पै पैडो कियो तिस ने, बन बेड़ी सो ऊपर लोक पधारे ।
होछे करे छल काम सदा, बड़े होये न ताई की ओर निहारे ॥३३॥

कवित्त

सुन मुस्कान, ऐसे कहत बखान,
जब मानी तुम्हें आन, राज अब लौं सो पायो है ।
करो हिये में विचार, सिंह चढ़े बेशुमार,
किला लीनो एक बार, फिर तोहि को दिवायो है ।
पाछे आये कई बेर, मुलतान लियो घेर,
किया बन्द ताई फेर, समां ऐसे ही बितायो है ।
जाय अब करो सार, छाड़ धाम को पधार,
बहुत करो न करार, तुम्हें रहिन न पायो है^२ ॥ ३४ ॥

दोहा

बचन सखत सुन गुरु के, शमस चलयो धाय !
मुलतान सु आयो छिनक में, कह्यो तिन्हें समझाय ॥ ३५ ॥

सवैया

पूछत हैं मिल पीर समै, कहो काई कह्यो तुम को समझाई ।
शमस उत्तर ऐसे दियो, वहि मानत नाहीं आवत धाई ।
मक्के सो ठोर बताई तुम्हें, पज साल उहां अब जाई बिताई ।
साफ जबाब दिया तिस ने, तुम सोई करो मनको जोई भाई ॥ ३६ ॥

१. ऐसा प्रतीत होता है कि इस सवैया मे प्रकट हुआ विचार कवि ने भाई गुरदास की 'वारो' से लिया है । भाई साहिब ने लिखा है "काठ न डोबे पाल के सग लोह तराया" ।

२. देखो फुट नोट सवैया ३१

सोरठा

करे चिन्त सभ पीर, सारे कहें मुशकल बनी।
मिले जो होय अधीर, किधों जुध करे हठ ठान के ॥ ३७ ॥

कवित्त

कूच श्रीगुरु कियो, न्हाय जमना सो लियो,
दान ऐसे दियो, रहे याचक अघाय के।
आये सतलुज तीर, कियो मज्जन सो नीर,
करतारपुर बीच न्यास, गंग तट आय के।
तरनतारन सो न्हाय, सर अमृत^१ जो आय,
ऐसे लोगन दिखाय, आन्धी आई है रिसाय के।
आगे गये मुलतान, लखे पीरन सुजान,
हीरे पन्ने भेट आन, मिले पीर बहुत आय के ॥ ३८ ॥

दोहा

हाथ जोड़ बिनती करे, तुम हो दीन दयाल,
हम हैं तुमरे आदि के, कर हमरी रखपाल ॥ ३९ ॥

सवैया

एककहें बिनती, गिनती, भिनती सो करे नही रोस गह्यो।
श्रीगुरु नानक को इक बेर, सो बाबर आन दीदार लह्यो।
मुठी सात लै भंग दियो इह रंग, सतों पातशाही का राज दयो।
दस बाबे की हैं सत बाबर^२ की, सो कृपा करके तिन्ह आप कह्यो ॥ ४० ॥

१ इस विषय मे हम बता देना चाहते है कि श्री गुरु गोविन्दसिंह को अपने जीवन काल मे अमृतसर देखने का अवसर नही मिला था।

२ दस बाबे से अभिप्राय 'दस पातशाही' अर्थात् दस गुरु साहिबान से है और 'सात बाबर' से बाबर की सात पीढ़िँ। बाबर के बाद सातवा मुगल बादशाह बहादुरशाह था। इस के पश्चात् वास्तविक

दोहा

अपने गुरु के बचन सुन, करो सहाई सुजान ।
पांच साल रहना इहाँ, फिर सो जाये निदान ॥ ४१ ॥

सोरठा

श्रीमुख आप बखान, सुन पीरो । साची कहैं ।
दियो सु राज महान, सत्त मुट्ठो लै भंग की ॥ ४२ ॥

सवैया

मुठी सात लै भंग दियो तुम रंग, न जंग कियो बड़राज सो पायो ।
सोई सीम दे सात करी इह बात, लियो तब राज सो जंग मचायो ।
क्रियो तुम जोर, भयो अति शोर, मो खालक की तुम खलक दुखायो ।
घन भूम गुमान कियो तुम हूँ, तहिं ते तुम को अब दूर करायो ॥ ४३ ॥
पीर उवाच—

दोहा

पंथ प्रकट तुमरो जगत, बड़ी दया मन मांहि ।
अपनो बंस पछान के, करो दया सुख पांहि ॥ ४४ ॥

कवित्त

करो हिये में विचार, किरपा कीनी एक बार,
दियो राज सो अपार, गुरु नानक सो आयके ।
अजहुँ लौं सुख पाये, किन्हूँ नहीं सो अकाये,
अब आप चढ़ आये, गुरु बचन मिटाय के ।
इहै तुमें जी आई, फेरां रावरी दुहाई,
करा पंथ की सहाई, मारुँ तुरका नूँ खपाय के ।
हसे करुणा-निधान, सुन पीरा की जबान,
करो मक्के में मकान, तहां वेग अब जाय के ॥ ४५ ॥

शक्ति मन्त्रियो और दरबारियो के हाथ मे रही । बादशाह केवल नाम मात्र के लिये थे । यह कथा किस साखी मे आती है हमें इसका पता नहीं चल सका ।

दोहा

तुम कह्यो हम दे गये, सत पातशाही राज ।
कारुं को जैसे कह्यो, सो सुन्यो सुख साज ॥ ४६ ॥

कवित्त

सुनो पीरो विचार, कारुं पूछयो एक बार,
कभी फेर भी दिदार, तुम अपना सु देहोगे^१ ।
कह्यो नानक सो सार, होय दसवां अवतार,
नोरंगे अमल मभार, राज तुमरो सो लेहेंगे ।
तुम उम्मत जो होय, दुख देवे अति गोय,
ताही मारंगे खलोय, दोही आपनी करेगे !
पहले जीत हैं पंजाब, फिर और लेन राज,
करे तुरकां नूं खराब, पति सभ की बिगोहेंगे ॥ ४७ ॥

दोहा

हिन्दुस्तान को जीत हैं, आकी रहे न कोय ।
उत्तर अर पच्छिम सभे, लये जीत के सोय ॥ ४८ ॥

१. कवि के यह लिखने से कि कारु को गुरु नानक देव जी ने बतलाया कि वे दसवे रूप में औरंगजेब के समय आवेंगे, प्रतीत होता है कि कवि के समय में गुरु नानक देव जी की कारु के साथ मुलाकात और वार्तालाप की किवदन्ती प्रचलित थी। कनिधम साहिब ने अपनी रचित पुस्तक (History of the Sikhs) के पृष्ठ ३७१-७२ पर गुरुनानक के कारु को लिखे पत्र का अनुवाद अंग्रेजी भाषा में सैलानी छुद मे दिया है। कवि गणेशदास और कनिधम लग-भग एक ही समय में हुये थे। कवि ने उस चिट्ठी का समूचा भाव छन्द न. ४७, ४८, ४९ में दिया है। इसी सम्बन्ध में सवैया न. १५, अध्याय नं. २ भी देखिये ॥

सोरठा

पूरब दक्खन जान, आन मान रईयत बने ।
सुन हैं वेद पुरान, बाहिगुरु मुख जाप हैं ॥४६॥

सवैया

सुन कारू हैरान बखान कहे, किधों खान पठान निदान है आयो ।
हमरी कल माहीं, रहे थिर नाहीं, कहे पछताई तुम्हीं मन भायो ।
करन कारन हो प्रितपारत को, तुम तारन मारन-हार सो आयो ।
हम तो लखे हैं सो खुदाय तुही, तुममें सु खुदाय में भेद न पायो ॥५०॥

दोहा

कारूँ कियो सवाल इह, गुरु सो दियो जवाब ।
उम्मत तुम अभमान कर, होये सु बहुत खराब ॥ ५१ ॥

सोरठा

गल में पल्लू डार, तब कारू बिनती करी ।
कुछ तो लियो उबार, बंस करो निर्बंस नहीं ॥ ५२ ॥

सवैया

होये दयाल करी रखपाल, निहाल कियो अस भाख सुनायो ।
सेवक होय भजे हर नाम, सो खालसे की जोऊ सेव करायो ।
सोई भवन भण्डार पटम्बर को, तन औ धन लै मन ते सुख पायो ।
गोशट आपस माहीं करी, पुन सीस निवाय के धाम सिधायो ॥ ५३ ॥

दोहा

सुन पीरो ! श्री गुरु कह्यो, कारूँ मान्यो सीस ।
मक्के की ज्यारत करो, अब इछ्या जगदीश ॥५४॥

पीर-उवाच—

सोरठा

कुछक हमें है देर, मुहलत भी दीजिये प्रभु ।
श्री गुरु नैन तरेर, “घटिका चार” बखानियो ॥५५॥

सवैया

सवा लाख ही पीर कहे मुख भाख, न राख सके हम को अब कोई ।
कौन सी बात कही गुर है, सब साच कह्यो नहीं भूठ सो गोई ।
कह्यो गुरु कोप करो न धोप, जो चोट चले तब ओट न होई ।
तहि ते अब भाज चलो तज राज, सो मक्के बिराज रहे हम सोई ॥५६॥

दोहा

सवा लाख जो पीर थे सभ गये मक्के ओर ।
रहे जो दीन मुहम्मदी, सो कहि किस अब जोर ॥५७॥

सवैया

धाई पड़े सो शहीद जबे, नस पीर गये न धीरज पावैं ।
जात खिसात भजे पछतात, सो आपस में यह बात चलावैं ।
कौन समों सिर आन पड़ो, हम के दिन पाछे के फेर न आवैं ।
गोविंदसिंह ने राज अटल दियो, सिर ऊपर खालसे छत्तर फिरावैं ॥५८॥
गुर पीरन की यह गोशट है, जो पड़े और सुने मन प्रीत बढ़ावैं ।
गुरु चरनन पास निवास करै, अरु चार पदारथ को फल पावैं ।
वेद पुरान कुरान सभै, गुरु की उपमा सो अपार बतावैं ।
गुरु कीरत सिन्ध अपार भले, मन हीरे लहे जोई सेव करावैं ॥५९॥

दोहा

दीन मजब को जंग अब, सुनो सिंह मन लाई ।
जो मनसा कर पढ़ सुने, फल दे सतगुर भाई ॥६०॥

सोरठा

श्री गुरु कहत प्रमान, भोर भये हल्ला करो ।
पिंगल साध बखान, कथा सो आगे होयगी ॥६१॥

इति श्री गुरु खालसे जी का फतहनामा मुलतान-युद्ध-

कथनम् । श्री गुरुआगमनम्, पीरा साथ गोष्ठी

तृतीयो अध्यायः सपूर्णः ॥

अध्याय ४

दोहा

अमृत वेले सिद्ध सभ, जाग सु भये सुचेत ।
दातन कर मञ्जन करें, गुरुबानी पढ़ हेत ॥ १ ॥

कवित्त

भयो जब भोर, बानी पढ़े प्रेम पोर,
मानो पंछी करे शोर, रवि आगमन जान के ।
बढ़यो है प्रकाश, भयो सिद्धन हुलास,
जैसे मोह होत नास, बड़े ब्रह्म हूँ ज्ञान के ।
गुरु उपदेश, कियो रिदे में प्रवेश,
मारो जाय के मलेछ, करो जुध हठ ठान के ।
कियो अनुमान, कस कमरां प्रधान,
मारो किला अब तान, कहें सभ ही बखान के ॥ २ ॥
किला देखियो बहोर, जामो मिली पवन भौर,
कहि कि चले हम जोर, कैसे चढ़े अब धाय के ।

ॐ अब किले पर हल्ला (assault) करने का वर्णन है, इस हल्ले में कई बार पठानों की लगातार गोलाबारी से तग आ कर सिख पीछे हट आने पर मजबूर हो जाते हैं ।

१. चौथे अध्याय का आरम्भ खालसा सेना के खाई तक पहुँच जाने से होता है । खाई के इस तट पर कुछ लड़ाई हुई । नवाब की सेना ने दिल छोड़ दिया और खाई पार करके किले को वापस चली गई । जाते हुए उसने खाई के पुल तोड़ दिए । दीवान अमरनाथ के जफ़र नामे से भी प्रकट होता कि खालसा सेना को खाई के इस ओर कुछ रुकना पड़ा, किन्तु जल्दी ही खालसा सेना के सेनानायक मिश्र दीवान चन्द ने आज्ञा दी कि खाई पार करके किले पर आक्रमण किया जाय । आज्ञा पाते ही खालसा-सेना शीघ्रता से खाई पार कर गई और इस के तीसरे दिन ही किला सर हो गया ॥

लायो गुरु ध्यान, करो मुशकल आसान,
 किला होवे सर आन, बिरद लाज राखो आय के ।
 सिंह आरत पुकार, सुनो गुरु सुखसार,
 दे तुरकों नूँ संहार, रहैं हमीं सुख पाय के ।
 होये गुरु कृपाल, आप चढ़े ततकाल,
 चहुँ ओर सो विसाल, तब फेरयो असि जाय के ॥३॥

दोहा

चरन दाब श्री मुख कह्यो, बेग सो नीवां होय ।
 बचन सुने श्री गुरु के, धरनी लाग्यो सोय ॥ ४ ॥

कवित्त

गोबिंद सिंह गाजे, रन मारु भांत भांत बाजे,
 साजे संग देवता, बिराजे मध आप है ।
 बवंज^१ बीर जोगनी, नौ नाथ, षट् जति आये,
 धाये हैं चुरासी सिद्ध, हाथ लिये चाप है ।
 बीन नारद बजावे, शिव डौरु डमकावे,
 भैरो भवक^२ सुनावे, हनुमान^३ राम-जाप है ।
 भये असवार, बाजे दुंदभी अपार,
 साहिब सोढी^४ करतार, जां को अटल प्रताप है ॥ ५ ॥
 पिक्खे मुसकाने, प्रभु अति बिगसाने,
 कह्यो आपनी जवाने, ऐसे सभ को सुनाय के ।

१. पं अर्थात् बावन ।

२, ३. पं: अर्थात् डरावनी आवाज़ । उपर्युक्त वीर, सिद्ध, भैरो इत्यादि के लिए देखिये भाई काहन सिंह कृतमहाकोष ।

४. पं: श्री गुरु गोबिन्द सिंह क्षत्रिय सोढी वंश से थे ।

पीरन की पीरी हरो, तुरकन को नास करो,
 चल गढ़ वड़ो^१, सफा^२ दीन की उठाय के ।
 चले तब धाय, जस दुंदभी बजाय,
 मारे तुरक सु गिराय, पीर दिये सो भजाय के ।
 क्यों न भाजे पीर, जहां आये रणधीर,
 सग लै बवंजा बीर नाल जोगनी लिवाय के ॥ ६ ॥

दोहा

फतह कियो मुलतान को श्री गोबिन्द सिंह साहब ।
 रिदा पर रह्यो खालसे, हल्ला करो शताब ॥ ७ ॥
 जगत रीत सिंह जो लड़े, तिन की सुनियो बात ।
 कुछ घायल, कुछ सुर्ग गये, कलुक भये सुकचात ॥ ८ ॥
 सिंह लड़े मुलतान जब, लगे बहुत तहि सीस ।
 चित्त चितवे सरदारनी^३ करे रच्छ जगदीश ॥ ९ ॥

कवित्त

पातशाह की राणी, तारकौर मन जाणी,
 सो बुलाय कहे बाणी, बैठी सभा को लगाय के ।
 शंकरदास^४ को बुलायो, सो भवानीदास आयो,
 दिलबाग सदवायो, कही बात समझाय के ।

१. पं, अर्थात् प्रवेश करो ।

२. फा: अर्थ पक्ति ।

३. तात्पर्य महारानी दातार कौर से है ।

४. दीवान शंकरदास कुँवर खड्गसिंह की जागीर का मुस्तयार था, इसका पिता महाराजा रणजीतसिंह के दादा चंदतसिंह के पास नौकर रह चुका था । दिलबागराय, राधाराम, हरमुखराय आदि भी खड्गसिंह के कारदार थे ।

राधाराम हरसुख राय, सरदारी मल्ल,
 सभे रल आये चल, बैठे छबहुँ को छाया के ।
 काहनसिंह हट्टु पास, कहे सुनो अरदास,
 तुम आज्ञा होय जास, करे सोई चित्त लाय के ॥१०॥
 पूछत प्रधान, कहे मन अनुमान,
 मारे किला जैस तान, कहो ऐसा ही उपाय को ।
 आगै मन्तरी बखान, सुनो बीबी धर ध्यान,
 मारो तोपां बहुत जान, ढाये कंध करे राह को ।
 बरबंडसिंह^१ को बुलाय, कह्यो चढ़ो तुम धाय,
 अतरसिंह^२ सो रिसाय, मार तोपां हूँ चलाय को ।
 देवीसिंह मनु खाय, तोपां हूँ चलाये भले,
 शिवप्रसाद^३ कहे, अज पीछे हूँ न जाय को ॥११॥

दोहा

धन्व गहरी क्रोध कर, गोले संग लिवाय ।
 तोप गुबारे रहकले, मारो वार न पाय ॥१२॥

सवैया

तोपां गुबारे सो रहकले, मार कहे ललकार सो गीदी बिडारे ।
 धमाके पड़े अरि छाती डरे, तो पुकार करे है है मारे है मारे ।
 ऐसे ही बेग दे तोप सों मारत, चुटकी चलाय न आवत वारे ।
 गुलाबसिंह^४ सो कोप लड़्यो बहुते, लैके पड़तल साथ बड़ो बल धारे ॥१३॥

-
१. बरबंडसिंह निहग सिंह के दल का प्रसिद्ध योद्धा था ।
 २. देखिये खालसा द० रि० बण्डल न० ए० ए० २ ।
 ३. शिवप्रसाद भी अस्पी तोपखाने का कुमादान था । देखिए खा० द० रि० बण्डल न० ए. ए. २ ।
 ४. गुलाबसिंह प्यादा सेना का कुमेदान था । इसकी पलटन मे ७४२ सिपाही थे और जिनका मासिक वेतन ५३१७ रुपये था । देखिये ख० द० रि० बण्डल न० १ ।

सवैया

दिवानचन्द की पड़तल ऐसे लड़े, मार गोलियां क्रोध करे अति भारी ।
और भी सिंह चौफेर लड़े, खाईं रोक लई, तुरकान बिड़ारी ।
साधूसिंह^१ निहंग, करे बड़ जंग, सु ढंग इहे मार मार पुकारी ।
बुधसिंह सो सूर लड्यो हित दे, जर अंग गये तो कछु न विचारी ॥१४॥

दोहा

दीवानसिंह^२ जो अड़दली, लड़्यो बड़ो हठ ठान ।
राम सो गढ़ियासिंह था, बड़ो सूरमा मान ॥१५॥

कवित्त

तुरकन कियो विचार, मुए हम एक बार,
चढ़ो बलधार लड़ो सिंहन सो जाय के ।
तोप और गुबारे, मार कीने हम कारे,
सब सुध-बुध देह की, सो दीनी है भुलाय के ।
तांते चढ़ो धाय, अज बाहिर सु जाय,
मारो अति ही रिसाय, दिहो सिंहन हटाय के ।
ऐसे चपि आये^३, तीर तुपक चलाये,
सिंह पासे सो हटाये कियो जंग सो रिसाय के ॥१६॥

१. साधुसिंह निहंग सिकखो के जत्ये का जत्येदार था । यही सब से पहले खाईं लॉघ धूरकोट को पार कर किले की बुर्जी पर पहुँचा था और इसी ने खालसा का झण्डा फहराया था । इसी की वीरता को देख सेना के अन्य वीर भी झपाटे से किले पर चढ़ दौड़े थे ।

२. दीवानसिंह रामगढ़िया सरदारों में से था । इसकी कमान के नीचे ७०० घुड़सवार थे ।

३. चपि अर्थात् क्रोध से ।

तुरक आये हैं भयकारे, मारो मारो ही उचारे ।

बड़ो बल धारे, मारे तुपक सो तीर है ।

तड़ाक दे कड़ाक सो भटाक दे पटाक मारे ।

सिंह तब कहे, ए॥तो आए सूरबीर है ।

दोहु जूझ के सो लड़े, नहीं नेकु मन डरे,

बरे आगे अप्सरां को मरे कर धीर है ।

सिंह भये गरभार, प्रभु गरब निवार,

दीओ तुरकां बलधार, भागे सिंह पाछे नीर है ॥१७॥

कवित्त

सुनी सार तारकौर, आये सिंह सभे दौर,

पठानन के कौरन^१ के आगे भागे आवते ।

कश्यो, पीनस मंगावो, मैं तो आप चढ़ धावों,

जाय जुद्ध सो मचावों, लड़ों कहां बाहि जावते ।^२

फाजल बहादर जाय, कहे ताहि समझाय,

लड़ो चित्त लाय, पाछे ठौर नहीं पावते ।

लड़ो सामने सो धाय, दियो तुरकां नूँ ह्टाय,

मार मार सो मचाय, लोक फिरे जस गावते ॥ १८ ॥

१. प० बरें अर्थात् विवाह करना । यही विचार कवि ने कवित्त न०

११ अध्याय २ में भी प्रकट किया है ।

२. कुमार अर्थात् पुत्र ।

३. कवि की इस रचना से प्रकट होता है, कि रानी दातारकौर अपने सैनिकों का उसी प्रकार उत्साह बढ़ा रही थी जिस प्रकार कि महाराजा यदि स्वयं मौजूद होते तो बढ़ाते । इस बात की पुष्टि दीवान अमरनाथ के ज़फरनामा से भी होती है ।

माई कर्मों जो पूछत, सुधाम का विहार कोई,
 तासों ऐसे कहे, मोहि को सूझत न होर है ।
 जब लौं सु ढीला कर, मार किला लिखो नाहिं,
 तब लौं न शान्त आवे, मेरे मन जोर है ।
 जाई वे बहादर, न होवे इहे कादर,^१
 सो इहो बाल नादर, जो चढ़े किले दौड़ है ।
 किये क्रोध नैन, सु नकैन^२ बैन कहे ऐसे,
 लड़ो मारो, हारो नाहीं, गुरु का सो जोर है ॥ १६ ॥
 साधु सिंह जो निहंग, कहे बैठो जी निसंग,
 करे अबकि जो जंग जाय तुरकां न चोट है^३ ।
 मुड़े फिर धाये, मार मार सो मचाये,
 कियो जुद्ध भली भाये, दे मुस्ले खपाये है ।
 बिजाल कराबीनी, सो बन्दूकन की मार कीनी,
 धाये हैं^४ ।
 मोहरे साधु सिंह^५ पाछे सभे हैं भुजंग सिंह,
 टप्प चढ़े बुरजन, निशान ते हलाये हैं ॥ २० ॥

१. कायर के अर्थ में प्रयोग हुआ है। देखिये, द्वारिका प्रसादकृत शब्दार्थ ।

२. भाव महारानी दातारकौर से है ।

३. यहा भूल जान पड़ती है। छद् ठीक नहीं बैठता ।

४. यह पक्ति पूरी नहीं है ।

५. निहगो का जो मुकाबला पठानों के साथ साधुसिंह के नेतृत्व में हुआ इस का वर्णन दीवान अमरनाथ कृत जफरनामा के पृष्ठ ११५ पर बड़े सुन्दर शब्दों में किया गया है ।

बोहा

बरबरसिंह पौष कियो, चढ्यो बेग तब धाय ।
साधुसिंह के पास तब, तुरक सो देय गिझाय ॥ २१ ॥

कवित्त

पाछे चढ़े सिंह और बड़े जो नरिन्द,
कहैं राखा है गोविन्द सिंह, तिसे मन भ्यावते ।
जहां मण्डा लायो, बुद्धसिंह तहां आयो,
सो गुलाबसिंह कोप, लै के सिहंन को धावते ।
धोड़ चढ़े चढ़े, देखे कायर सु खड़े,
सभ मुस्ले जो बड़े, कहैं अन्त नहीं आवते ।
अन्दरों पठान, आवे कोप मान जान,
आगे सिहंन कमान, बान तान सो चलावते ॥ २२ ॥

ऊच के उचार, चढ़ो किला टपो द्वार,
भंगासिंह सरदार ऐसे लोगन सुनाये है ।
अगन को डर मान, अकन की भरी आन,
खाई मध डार, चढ़ो बेग तब धाये है ।
भगा सिंह कहे अक टोलन को जहे,
खाई दीखत सो नाही, पष्ट रचक लखाये हैं ।
हमें चढ़ जावे, मार तुरकन भजावे,
छाल मारत सुझावे, चढ़े गढ़ धाये, कला गुरु की सो पाये हैं ॥ २३ ॥

१. साधु सिंह निहग की वीरता देख कर सारी सेना का साहस बढ़ गया और सब ने एक ही बार हज्जा कर दिया । पृष्ठ के लिये देखिये कनिधम पृष्ठ १५६, सोहनलाल द० २ पृष्ठ २१६)

दोहा

भंगासिंह सो चढ़यो जब, मारे तुरक सो सात,
पेख सिंह सभ ही चढ़े, करें सो तुरकन घात ॥२४॥

भंगासिंह को चढ्यो पिख, साधूसिंह बखान ।
अब तुरकन को मार हैं. आओ सभे बलवान ॥२५॥

कवित्त

आवे जो दुरानी, मारे तीर लाय कानी,
ऐसे कहत जबानी, सिंह जाये नहीं जीवते ।
ऐडे बँडे आवें, कराबीन हो चलावे,
सो तमाचे हौ वगावें, घाय लगे डिग खीवते ।
जिन्हें लगे गोली, मुखों जाय नहीं बोली,
सो तो सैनत सुटोली. किधों पानी दिहो पीवते ।
बढ्यो अनुराग, मानो खेले मिल फाग,
लहू धूड़ रंग लाग, जानो प्रेम डोर सीवते ॥ २६ ॥

देवीसिंह कीनो कोप, चढ़यो किले मार धोप,
तुरकन की तोप किधों दीनी है घटाय के ।
और सिंह चढ़े, अगो तुरक जूझ लड़े,
हथियार कर फड़े, मारे अति ही रिसाय के ।
देखो साहिब रजाय, कहें तुरक बिललाय,
मुए इकट्ठे ही धाय, कैसी पड़ी सिर आय के ।
देवीसिंह सिंहन को, ऐसे हि कहे रिसाय,
आओ सिंहो धाय, दियो तुरकन नूँ खपाय के ॥२७॥
सभे सिंह-चढ़े, कर कोप अति लड़े,
अगो तुरक सो अड़े करे जुध हठ ठान के ।
मारे तीर कराबीन, न होवे सो अधीन,
बड़े तुरक सो प्रबीन, मारो मार सो बखान के ।

चौफेरे के जो डेरे, पाये सभनां ही घेरे,
 सिंह गढ़ को सो टप्प, चढ़े, बड़े बलवान के ।
 घोड़-चढ़े सरकारी^१, टप्पे उच्चि सो अटारी,
 दिये तुरक संहारी ताई बड़े अरि जान के ॥ २८ ॥

मेहरसिंह^२ रूपसिंह चढ्यो बलधार तहि,
 भूरा^३ सिट हेट^४, दलसिंह को चढ़ाय के ।
 तारासिंह चढ़ के सो मारी तलवार धार,
 कीनों भल जंग, बहुत मुस्ले खपाय के ।
 कालियां सो वाले सिंह, लड़े हठ धार बड़े,
 दलसिंह साथ पायो, जस तुरक घाय के ।
 और सिंह कोप, चढ़े किले मार धोप,
 होती तुरकन की तोप तब दीनी सो हटाय के ॥ २९ ॥

दलसिंह कोप मानसिंह नूँ^५ कहे बखान,
 लैके बड़े जवान, चढ़ो टप्प किले दौर है ।
 आयस को मान, चढ़े सिंह बलवान,
 आगे लड़े सो पठान, जवान मुगलां के कौर है ।

१. इस के व्योरे के लिये देखिये पाद-टिप्पणी कवित्त न० ८८ पेशावर-युद्ध नं. १।

२. मेहरसिंह, रूपसिंह और दलसिंह आदि के नाम खा० ८० रि० बगइल नं० ८ से १० सम्बत् १८७६-७७ में आते हैं।

३. प० अर्थ कम्बल,

४. प० अर्थ नीचे फैक कर,

५. प० अर्थ को ।

कराबीनां हूँ चलाबे, तीर तुपकां वगाबे^१,
 बड़े जुध सो मचावें, दोहुं ओर सिरमौर है।
 लड़े कर धीर, लगगे बहुत्यां^२ नूँ तीर,
 सो लखावें नहीं पीर, मुए गये सुरग ठौर हैं ॥३०॥
 करमसिंह ज्वालासिंह, फौज सो चढ़ाई गढ़,
 गर्भासिंह कहे, मारे देहो सो तरास है।
 दीवान मोतीराम कहे सुनो फतेह सिंह,
 आज मेरी पत्त तेरे हाथ^३, लड़ो होए शबास है।
 ऐसी सुनी कान, चढ़यो फतह सिंह दत्त,
 जहां जहां मुगल पठान, तिन कीनो बहुत नास है।
 एक जो पठान, मारी गोली सो रिसान,
 फतहसिंह लागी आन, पायो सुरग में वास है ॥ ३१॥
 ताई को भरात, आयो मोयो पेख तात,
 लड़यो भले बिख्यात, मार कीने तुरक जेर हैं।
 तड़ाक तीर काढ़ के, कड़ाक सों झटाक मारे,
 लागत पटाक दे, सटाक होव ढेर हैं।
 पांच सात सो पठान, आये क्रोध मान जान,
 मार सूरमे जवान, भ्रात फतेह सिंह घेर हैं।
 लागी गोली ताई, गयो सुरग लोक माहीं,
 जस भयो वाह वाह, लड़े भले दोऊ जोर हैं ॥३२॥
 और जोई सिंह चढ़े, सो चौफेर हूँ ते लड़े,
 अड़े अगे तुरक, मारे सिंह तलवार है।

१. प० चलाना ।

२. प० पजाबी रूप अर्थ बहुत लोगों को ।

३. प० अर्थ हाथ मे ।

आवे जो दुरानी, छोड़े तीर सुभ कानी,
 लागे, मांगे नहीं पानी, ऐसी तीखी तांहि धार है।
 शेरसिंह पूत, सो सपूत तांहि समें,
 सोभा सिंह सोभा लीनी, कोप, बलकार है।
 खाई टप चढ़यो, जाय तुरकन सो लड़यो,
 पांच सात सीस जढ़यो, बड़ी तीखी तलवार है ॥३३॥

दोहा

रतन सिंह गरजाकिया' लड़यो तो तन दे सोय।
 घोड़-चढ़े तैं के सभे, लड़े सो अति रग होय ॥ ३४ ॥

कवित्त

एक जो पठान आये, मार मार करे धाय,
 सोभा सिंह हूँ रिसाय, मारी ताहि कृपान है।
 पेख के पठान, भये मन मे हैरान,
 ऐतो बड़ा है जवान, पांच सात मारे थान है।
 दूर ते पठान, मारी गोली ऐसी जान,
 लागी सोभा सिंह आन, वक्खी भेद लागी ठान है।
 लागत परान, सो पठाये सुरधाम, जान,
 वरे सोई अप्सरां ने, जो सूरमें प्रमान है ॥ ३५ ॥

१. रतन सिंह गरजाखिये का नाम खा० द० रि० बण्डल न० ६ मे है। यह सरदार फतह सिंह गरजाखिये के डेरे का कोई प्रसिद्ध अधिकारी प्रतीत होता है, इस अवसर पर गरजाखिये डेरे के सवारों ने बड़ी वीरता दिखलाई थी तथा मुलतान जीत मे इन का बड़ा हाथ था। इसी लिए महाराजा ने सरदार फतह सिंह गरजाखिया की सम्पत्ति मे बढोतरी की और उस को आगे के लिए अधिक सेना रखने का काम दिया। देखिये लैपल ग्रीफन पृष्ठ ४५१।

दीवान मोतीलाल,^१ फौज चढ़ी सो विसाल,
 संग गिलजन की फौज हूँ को दीनो अति त्रास है ।
 द्वाबिये जो सिंह चढ़े, क्रोध कर अति लड़े,
 मोए जोऊ खेत, तिन कीनो सुरग बास है ।
 शाम सिंह, ज्वाला सिंह, कोप के सफील^२ चढ़े,
 गर्भा सिंह सिंहन को कहत शाबास है ।
 जीवनसिंह कोप कर, चढ़यो किले बेग धाय,
 ओर फौज अन्त नाहीं, डोगरे^३ हुलास है ॥ ३६ ॥
 रतन सिंह^४ बस्तरी, सो सस्तरी बखान कहे,
 सिंहो ? देर करो नाहीं, लड़ो सो रिसाय के ।
 मारो तलवार तीर, बान्धो हिये बड़ी धीर,
 मरो, सुर लोक जाओ, जीतो जस पाय के ।
 ऐसे सुन कान, सिंह लड़े हठ ठान,
 मारे सूरमे जवान, दीये मुस्ले खपाय के ।
 जोध सिंह कलसिया के सिंह चढ़ धाये जब,
 आये तुरक जोर, लड़े, अति ही रिसाय के ॥ ३७ ॥
 एक जो पठान आये, लड़यो सो रिसाय अति,
 मारे सिंह दोऊ, कीने घायल सो तीन है ।

१. अभिप्राय दीवान मोतीराम से है ।

२. फा० शब्द 'फसील' अर्थात् किले की रक्षार्थ प्राचीर ।

३. महाराजा रणजीत सिंह के सैन्य सम्बन्धी पत्र प्रमाणों में डोगरो की अश्वारोही सेना का वर्णन मिलता है ।

४. बस्तरी फारसी शब्द बस्तनी के मुकाबले का प्रतीत होता है । फारसी में बस्तनी का अर्थ तोशाखाने का कारदार है । यहाँ उस अफसर से तात्पर्य है जिस पर महाराज के वस्त्रों का उत्तरदायित्व था ! महाराजा के रिकार्ड में रत्न सिंह का नाम इस सम्बन्ध में मिलता है ।

दलसिंह कोप मान, बल्ले ताहीं धाम जान,
 लै के किरपान, सीस जुदो धड़ कीन है ।
 नरक सुरग पड़ी रार, ऐसे नही नरक डार,
 सिंहन के हाथ मरे, सुरग गति दीन है ।
 जमगन लै के ताहीं, जात चले दोऊख को,
 रामगण खोस के सो बहिश्त पद दीन है ॥३८॥

दोहा

जमगण गये रिसाय के, धर्मराज के पास ।
 नरक सभी खाली पड़ा, सुरग कियो सभ बास ॥ ३९ ॥

सोरठा

पास सो किये पहाड़, जनम गयो छल बल करत ।
 दिये सुरग में डार, राम गणन अति जोर कर ॥ ४० ॥

सवैया

धर्मराय गयो सो रसाय तबै, प्रभ पाय कहे बिनती सुन लीजे ।
 तुमरी इह कार, निभे न सार, गण राम अपार सो कुंजिया लीजे ।
 पापी बड़े जो मुए रण में, तिन को गहे सुरग के गामी सो कीजे ।
 सुभ बाणी भई, सुन धर्म लई, गत ताहीं दई सिंहां हाथ जो मीजे ॥४१॥

दोहा

गुर सिंहन के हाथ ते लगे जो सन्मुख सीस ।
 सुरग बास ताकां करो, इच्छा है जगदीस ॥४२॥

सोरठा

सिंह करे गुर ध्यान, जुध करे अति ही घनो ।
 जाय जो सन्मुख प्रान, बैकुण्ठ बसे तेहि हटक नाहीं ॥ ४३ ॥

कवि

सुन्यो धर्मराय, कह्यो जम समझाय,
 मरे रन में जो धाय, ताहीं नाहीं तुम ने जावना ।
 गुरु पंथ है अपार, भजे राम नाम सार,
 ताहीं नरक^१ नाहीं पावना ।
 करे इच्छा जोऊ भोग, सोऊ सुरग लोग जोग,
 फिर आये मात लोक, तिन राज बड़ो पावना ।
 अन्त समै गुरु ध्यान, बसे सो बैकुण्ठ जान,
 पावै बड़ो मान, गुरु नानक पै आवना ॥४४॥

दोहा

संत समागम हरिकथा, छत्रधर्म की रार ।
 ना हूँ, ना तू नहीं छुटे, असि कह्यो करतार ॥४५॥
 श्री गुरु पंथ सो जस कह्यो, सुनो सिंह मन लाय ।
 जो मनसा कर पढ़ सुने, नहिं पूछे जमराय ॥४६॥
 इति श्रीगुरु खालसे जी का फतहनामा मुलतान-युद्ध-कथनम् ।
 किले चढजायवो नाम चतुर्थोऽध्यायः सम्पूर्णः ॥

अध्याय ५

दोहा

सकन्दरखान भरात को, कहे मुज्जम्फरखान ।
लड़ो मरो^१ हारो नहीं, चढ़ो सो मुगल पठान ॥ १ ॥

कवित्त

संग लै अमीर वीर, धार हिये बड़ी धीर,
आयो पहिर चीर, खान अति ही रिसाय के ।
और उमराव, चढ़े चित्त के सो चाव,
लड़ो अति ही रिसाय, मारो सिहां नूँ खपाय के ।
पेटियां बन्ह आये, सो सजोये पहिर आये,
सिर खोल^२ हूँ लगाये, तन सारे लोहा लाय के ।
गये बेगमां के पास, कहि छाड़ो हमी आस,
रहो सतर में निवास, करे जंग हम जाय के ॥ २ ॥
पीर को मनाये, लड़े अति ही सो धाये,
आज इहो चित्त चाहे, मारो करो सिंह घात हैं ।
तड़ाक दे कड़ाक, सो छटाक दे पटाक, मारे,
सिंह कहैं इन्हें कीनी बड़ी बात है ।
तीर तलवार सो तमाचे कराबीन मार,
खण्डे सो दो धार किधों नागनी लखात हैं ।

१. इस समय खालसा सेना किले के द्वार पर पहुँच चुकी है और वहा ही गदरलूक के साथ सघर्ष हो रहा है । यह अध्याय मुलतान-युद्ध की अन्तिम भाकी है ।

२. फ० लोहे के कवच का वह भाग जो सिर की रक्षा के लिए होता है ।

सैफ और पट्टे, सो कटार धार लड़े अति,
मार मार सिंहन को कहें कहाँ जात है ॥ ३ ॥

हरीसिंह कोप कहे, मारो इन्हें धोप सों,
घटावो आज ओप, आये मुगल पठान जो ।
काढे तलवार, जा की तीखी बहूत धार,
कड़कार परे वार, कीनो तबे तुरकान जो ।
ऐडे बैडे आये, पट्टेबाज ज्यों चलाये,
सैफ मारत रिसाय, सीस मोढे को बखान जो ।
कीनो ऐसो जंग, मारे तीर सो तुफंग,
कृपान मानो गंग, वगै लगे सुरग जान को ॥ ४ ॥

दोहा

चटक पटक लट पट लड़े, भट सटकार कटार ।
तुरक जो मारे सिंहन को, सिंह सो देय बिहार ॥ ५ ॥

कवित्त

एक ओर पलटनां ने, कीनो बड़ो जोर तब,
मीहांसिंह^१ कहे, बेग आवो सिंहो मारिये ।
महताब^२ सिंह पूले की जो पलटन चढ़ी शताब,
और घोड़चढ़े चढ़े तुरकन बिदारिये ।

१. मियॉसिंह पैदल सेना की एक पलटन का कुमेदान था । यह पूर्व देश का रहने वाला था । इस पलटन में ७५६ जवान थे । इस दल का मासिक व्यय ५,८७२ रुपये था । देखिये खा० द० रि० बरडल न० ५० ५० १ ।

२. महताबसिंह पूला भी एक पैदल सेना का कमाण्डर था । इस की पलटन में ५६४ जवान थे । इसका मासिक व्यय ४५०६ रुपये था । देखिये खा० द० रि० बरडल ५० ५० १ ।

गुलाबसिंह सिंहन^१ को ऐसे ही कहे रिसाय,
साध साध लड़ो, भले नहीं अब हारिये ।
हस्सवी^२ बुलाय के सो, राखे हुते खान जोई,
सोई अति लड़े चंगे बड़े तलवारिये ॥ ६ ॥

छन्द

कड़ा कड़ी कमान लै पठान एक आयो ।
भुजंगसिंह पेख के तुफंग तीर लायो ।
कंट के समान जान, खोभ सो लखायो ।
कोप कराबीन मार तुरक को गिरायो ॥ ७ ॥

कवित्त

खान को दीवान अगरदादखान आयो तब,
साथ के पठानन सों करे ऐसी बात है ।
मार मार सिंहन के मुंडन उसारो कोट,
पेख जाने सिंह जो पै लड़न आय भात है ।
तरेर किये नैन बैन कहे मोहे चैन नाहीं,
लड़ो मारो वेग करो सिंहन को घात है ।
आये जो पठान, लड़े अति ही रिसान,
छोड़े तीर लै कमान, मारे सिंह पाँच सात है ॥ ८ ॥

दोहा

तुरक जो आये सूरमे, लड़े जो अति चित्त चाय ।
दलसिंह के जो सिंह थे, ताको मारे धाय ॥ ९ ॥

१. गुलाबसिंह भी पैदल दस्ते का कुमेदान था । इस के विषय में चौथे अध्याय में टिप्पणी दी जा चुकी है ।

२. अभिप्राय हब्शीयों से है । ऐबीसीनिया के रहने वाले हब्शी हिन्दुस्तान की दूसरी मुसलमान रियासतों में भी नौकर थे ।

कवित्त

तुरक आये धाय धाय, मारे सिंह सो रिसाय,
 जो खुदाय की रजाय, हमें जीत नहीं आवती ।
 जोऊ जाय लड़े, सिर भूम ताई पड़े,
 पाछे रहे जोऊ खड़े, तिने अजल घेर लावती ।
 चोपड़ जो खेले खान, जाय कह्यो है पठान,
 आई मौत नेरे आन, तुम्हें मालम न पावती ।
 सिंह अन्दर सो आये, तुम खेलो चित्त लाये,
 जोऊ तुमें मन भावती^१ ॥१०॥

दोहा

मुनत खान चकरित भये, पासे दीने डार ।
 उठ संजोई पहरी तवे, हाथ लई तलवार^२ ॥११॥

कवित्त

चढ्यो है मुजफ्फर खान, आयो महां रिसान,
 संग लिये हैं जवान जो जगीरां बैठे खावते ।
 आये कर कोप, हाथ लिये ढाल धोप,
 आज कैसे रहे ओप, सिंह जोर कर आवते ।
 बीस तीस जो दुरानी, हाथ लिए हैं कमानी,
 ऐसे कहत जबानी, चलो सिंहां नूं खपावते ।
 आये ढ्योड़ी को जान, मारे तीर लै कमान,
 लागें छिहंन को आन, डिगगे मूरछा जो खावते ॥१२॥

१. लिपिकार से यह पक्ति छूट गई है ।

२. यह युद्ध की वह अवस्था है जबकि मुलतान का नवाब युद्ध में स्वयं भाग ले रहा था । अंग्रेज लेखकों ने भी इस की वीरता की बड़ी प्रशंसा की है, जो कि मुजफ्फर खान ने इस अवसर पर दिखलाई थी ।

बोहा

कतल किये सो तुरक बहु, मुगल पठान सो खान ।
बचे तेऊ जो छिप गये, लूट लियो मुलतान ॥१३॥

सवैया

ताहि भरात सरफराज हु खान था, शाह नवाज सु शरफ हुँ राज 'सो आए ।
आय के तीर तमाचे चलाए, लड़े सो भले तलवार बगाये ।
सिंहन मार बिदार दिये, बड़े सूरमे ये पर भूम गिराये ।
अमर सिंह 'मजीठिया कोप लड़यो, बहु तुरकन ते हथियार छुड़ाये ॥१४॥

और सभे विख्यात जोऊ, सो मुए लड़ के बचिया नहिं कोई ।
तुरक सभे कतलाम भये, जिन्हां बोदी दिखाई बच्या पुन सोई ।
भाना भया करतार हुँ को, सभा दीन उठी गुरु राज सो होई ।
कश्मीर ओ काबुल रूम ओ शाम कन्धार 'ईरान सो कांपत जोई ॥१५॥

१. नवाब मुजफ्फर खा के सात पुत्र (१) सरफराज खाँ, (२) जुलफिकार खाँ, (३) शाहनिवाज खाँ, (४) मुमताजखाँ, (५) अज़ीज़ खाँ, (६) हकनिवाज़ खाँ, और (७) शाहवाज़ खाँ थे । सरफ़राज़ खाँ और जुलफिकार खा के सिवा बाकी पांचो भाई लड़ाई में मारे गए थे । बचे हुए दोनो भाइयो को कैद करके लाहौर लाया गया । उदार दिल महाराज ने इन्हे ३०,००० रुपया प्रतिवर्ष निर्वाह के लिए दिया था । देखिये खा० द० रि० जिलद पृष्ठ ६३ ।

२. अमर सिंह मजीठिया का पिता सरदार मन्नासिंह महाराजा रणजीत सिंह के दादा चंदतसिंह के सरदारों में से था । देखिए लैपल ग्रीफन पृष्ठ ६८-६९ ।

३. इस सवैया के भाव को अच्छी तरह समझने के लिए देखिये पाद टीका नं० १, कवित्त नं० ४७, अध्याय तीन; तथा कनिंघम की पुस्तक का पृष्ठ ३७१-७२ ।

कवित्त

सुन्यो फरंगी, जो पै जीते हैं भुजंगी,
 हमें भई न चंगी', मन मांहि सो विचारते ।
 किल्ला लियो मुलतान, लूटे हीरे पन्ने आन,
 सब मारे तुरकान बड़े हुते जो उदारते ।
 सम्भाल राखो दिल्ली बात जानो नांहि पिल्ली,
 सिंह आवे जै हैं सिल्ली, बहुत सेना हूँ चढ़ावते ।
 पूरब सो पच्छिम जान, उत्तर और दक्खन मान,
 मारी मुलतान, डर सभ ही सो पावते ॥ १६ ॥

दोहा

रोवे सभी सो बेगमा, कहां गये तज खान ।
 हम कुछ ठौर बतायो, नहीं तजत हैं प्रान ॥ १७ ॥

कवित्त

सिंह जो प्रधान, पये बोल के सुजान,
 रोवें बेगमां सो खान, जाय ताही समझाइयो है ।
 कहि के पठायो, मिलो आओ सुख पायो,
 नाहीं पछताओ, प्राण देश संग जाइयो है ।
 बात मानी नाहीं कोई, कीनी भावत सो सोई,
 इत उत जस होई, जांते बहिश्त हूँ सिधाइयो है ।
 तांते रवो न अधीर, धारो एहो रिदै धीर,
 खान बड़े शूरवीर, सोग सब ही मिटाइयो है ॥ १८ ॥

१. यहा कवि का यह लिखना कि खालसा सेना की सफलता की यह सूचना अंग्रेजों को अच्छी न लगी, ठीक ही प्रतीत होता है । इस बात की पुष्टि अंग्रेजों की सरकारी चिट्ठी-पत्री से भी होती है ।

सोरठा

बहुते कर्म निहार, धाम पठाइयां बेगमां ।
सोना लूट अपार, मोती हीरे अन्त नहीं^१ ॥ १६ ॥

कवित्त

पासले^२ जो कोट, सो छुड़ाये लीने देके भोट,
रही किसे की न ओट, ताते छाड़ के सिधाए हैं ।
पाछे सिंहन के कौर, कहे चलो जो लाहौर,
अब आये दौर दौर, सिरमौर सो सुहाये हैं ।
सो लाहौर जब आए, सुन सिंह सुख पाए,
तोपां शलक चलाय, दान देत हरखाये हैं ।
कीनी बखश अपार, लैके आयो जोऊ सार,^३
तब बारी दीप माल, मन मोद को बढ़ाये हैं ॥२०॥

१. विशेष वर्णन के लिये देखिये भूमिका मुलतान-युद्ध ।

२. पासले कोट से अभिप्राय शुजाहाबाद के गढ़ से है । मुलतान-विजय से यह भी महाराजा के हाथ आगया था । इस मे से महाराजा साहिब को २० तोपे और बीस सहस्र की सम्पत्ति मिली थी । देखिये जफरनामा पृष्ठ ११६ ।

३. यह शुभ समाचार सरदार फतहसिंह आहलूवालिया ने अपने एक विशेष सवार द्वारा महाराजा साहिब के पास लाहौर भेजा । सूचना मिलते ही महाराजा ने सवार को सोने के कड़ा की एक जोड़ी, कलाबूतनी पगड़ी, और ५०० रुपये नकद पारितोषिक दिये । दूसरे दिन महाराजा साहिब हाथी पर सवार हो कर शालामार से किले तक आए । शहर मे उन्होंने जी भर कर रुपये बांटे और गरीबों को असख्य धन बांटा । इस जीत के उपलक्ष्य मे लाहौर नगर में दीपमाला की गई । देखिये सोहनलाल पृष्ठ २२० ।

फतहनामा गुरु खालसा जी का

दोहा

जेठ सुदी सो एकादसी,^४ फतह कियो मुलतान ।
सम्बत अठ दस जानिये, और पछत्तर मान ॥ २१ ॥
श्री गुरु पन्थ सु जस कह्यो, पढ़े सुने चित्त लाय ।
गणेशदास पिंगल भने, चार पदार्थ पाय ॥ २२ ॥
महिमा गुरु के पन्थ की, सुने सुनावे कोय ।
लहे सो चार पदार्थैं, अश्वमेध फल होय ॥ २३ ॥

इति श्री गुरु खालसे जी का फतहनामा मुलतान-युद्ध-कथनम् ।

खान-पठान-वधो नाम पचमो अध्यायः सम्पूर्णः ।

मुलतान जग सम्पूर्णम् ॥

— — —

पेशावर-युद्ध-१

वचनारम्भ

काबुल राज्य की दशा

मुलतान युद्ध की भौति ऐतिहासिक दृष्टि से इस युद्ध का वर्णन भी सविस्तर तथा विश्वसनीय है ।

इस युद्ध के कारणों को ठीक प्रकार से समझने के लिए पिछले कुछ वर्षों की ऐतिहासिक घटनाओं से परिचित होना आवश्यक है । उस समय काबुल की राज-गद्दी पर अहमदशाह अन्दाली का पोता शाह महमूद विराजमान था और फतहखां बारकजई उस का प्रधानमन्त्री था । खैबर पार का सम्पूर्ण भाग तथा पेशावर, नौशाहरा, यूसफजई आदि प्रदेश वजीर फतहखां ने अपने भाई सरदार यारमुहम्मदखां, सरदार मुलतान मुहम्मदखां तथा सरदार दोस्त मुहम्मदखां को सौंप रखे थे । परन्तु अटक का दुर्ग और उसके आस पास का इलाका, मुजफ्फराबाद का इलाका और कारमीर की उपत्यका अभी तक वजीर फतहखां के विरोधी धड़े के अफगान सरदारों के हाथ में थी । उदाहरणार्थ, अटक के दुर्ग पर सरदार जहांदादखां खेल तथा काश्मीर और मुजफ्फराबाद पर उस का भाई अताउल्लाहखां खेल अधिकार किए बैठे थे ।

वजीर फतहखां और महाराजा रणजीतसिंह की काश्मीर पर चढ़ाई

इसी लिए कारमीर और अटक पर अपना अधिकार करने के लिए फतहखां वजीर सन् १८१२ ई० में एक भारी सेना लेकर काबुल से चल पड़ा । परन्तु मुजफ्फराबाद वाले मार्ग को छोड़ कर काश्मीर

को जाने वाले सभी मुख्य मार्गों, जेहलम तथा गुजरात, जम्मू तथा स्यालकोट और भिम्बर तथा राजौरी पर महाराजा रणजीतसिंह ने अपना पुरा-पुरा अधिकार स्थापित कर रखा था। इसलिए बिबश हो कर फतहखां ने महाराजा रणजीतसिंह की सहायता से ही काश्मीर पर आक्रमण करने का निश्चय किया। इसी कारण सिक्ख सेना का एक भारी दल दीवान मोहकमचन्द के नेतृत्व में फतहखां की सहायता के लिए भेजा गया। लड़ाई में सरदार अतामुहम्मदखां खैल की पराजय हुई और वह काश्मीर से भाग गया। इस प्रकार काश्मीर प्रदेश फतहखां के अधीन हो गया।

अटक के दुर्ग का महत्त्व और उस पर महाराजा

रणजीतसिंह का अधिकार, मार्च सन् १८१३

अपने भाई के हार जाने की सूचना पा कर अटक के अधिकारी सरदार जहादादखां को भी अपनी चिन्ता हुई। महाराजा रणजीतसिंह ने यह सुअवसर देख जहादादखां से बात-चीत शुरू की और पर्याप्त जागीर के बदले में उस से अटक के दुर्ग की मांग की। जहादादखां इस के लिए सम्मत हो गया। इस प्रकार मार्च सन् १८१३ ई० में अटक का महत्वपूर्ण दुर्ग महाराजा रणजीतसिंह के अधिकार में आ गया। ❀

महाराजा के लिए यह एक अत्यन्त लाभदायक तथा भव्य विजय थी क्योंकि भौगोलिक दृष्टि से अटक के दुर्ग को एक विशेष महत्त्व प्राप्त था। यह दुर्ग उस प्रधान मार्ग पर स्थित है जिस से मध्य

* दुर्ग में जहादादखां की जो सेना रहती थी, उस का वेतन अधिक समय से जहादादखां के जिम्मे था। इस का सर्वयोग एक लाख रुपये के लगभग था। महाराजा को यह धन देना पड़ा। तब पठान सेना ने दुर्ग को खाली किया, सोहनलाल द. २ पृष्ठ १३८।

एशिया के आक्रमणकारी सदा से भारत में आते रहे हैं। स्पष्टतः यह दुर्ग भारत की रक्षा के लिए एक प्रहरी के समान था। इस दुर्ग पर अधिकार जमा लेने के पश्चात् महाराजा रणजीतसिंह यह मार्ग अफगानों के लिए सर्वथा बन्द कर सकते थे। केवल इतना ही नहीं वरन् नदी के पार जाकर खैबर के दर्रा तक, जैसा कि अगली घटनाओं से प्रकट हो जायेगा, अपना राज्य बढ़ा सकते थे।

पठानों और सिक्खों के मध्य युद्ध जून, सन् १८१३

इस आशंका का अनुभव करके वजीर फतहखां ने काश्मीर की चढ़ाई से अवकाश पाकर सीधा अटक की ओर मुंह किया और महाराजा रणजीतसिंह को अटक के दुर्ग में से शीघ्र ही सेनाये निकाल लेने की चुनौती दी। आशा से बढ़ कर हाथ लगी, इस ईश्वरीय देन को भला रणजीतसिंह कैसे छोड़ सकते थे ? इस चुनौती के उत्तर में महाराजा ने पठान शत्रु का सामना करने के लिए अपने बुद्धिमान् और अनुभवी सेनानायक दीवान मोहकमचन्द, जो कि अभी-अभी काश्मीर की चढ़ाई से लौटा था, के नेतृत्व में एक भारी सेना लाहौर से अटक की ओर भेज दी। २६ जून सन् १८१३ ई० को 'हजरो', के स्थान पर दोनों सेनाओं में एक भीषण युद्ध हुआ। अधिक गर्मी के कारण पठान जियादा देर तक रणभूमि में न ठहर सके और वजीर फतहखां ने काबुल लौट जाने में ही अपनी भलाई समझी।

काबुल राज्य में गडबड़ सन्, १८१८ ई०

इस घटना के पांच वर्ष बाद काबुल राज्य में एक नया उपद्रव उत्पन्न हो गया। काबुल नरेश शाह महमूद के पुत्र शहजादाकामरान ने फतहखां को धोखे से मरवा दिया। फतहखां के भाईयों को जब इसकी सूचना मिली तो उन्होंने ने काबुल की ओर प्रस्थान किया।

काश्मीर से सरदार अजीमखाँ और पेशावर से सरदार मुलतान मुहम्मदखाँ काबुल जा पहुँचे। उन्होंने शीघ्र ही परिस्थितियों पर नियंत्रण पाकर शाह महमूद और शाहजादा कामरान को बन्दी बना लिया। शाह महमूद के चचेरे भाई शाह अयूब को काबुल के सिंहासन पर बैठा दिया। मन्त्रित्व का कार्यभार अजीमखाँ ने स्वयं सम्भाल लिया। इस का परिणाम यह हुआ कि काबुल राज्य में कई धड़े बन गये और राज्य-प्रबन्ध ढीला होना शुरू हो गया।

रणजीतसिंह का पेशावर पर आक्रमण, नवम्बर सन् १८१८

जब महाराजा रणजीत सिंह ने देखा कि अफगान सरदारों का ध्यान केवल काबुल की ओर ही है तो उसने अटक नदी को पार करके पेशावर पर आक्रमण कर दिया। खालसा सेना के पहुँचते ही यार मुहम्मद खाँ और दोस्त मुहम्मद बारकजई ने नगर से भाग कर युसुफजई की पहाड़ियों में शरण ली। इस प्रकार १६ नवम्बर सन् १८१८ ई० में पेशावर नगर पर महाराजा रणजीतसिंह का अधिकार हो गया। परन्तु महाराजा भली भाँति जानते थे कि उस समय पेशावर पर अधिकार स्थिर रखना कठिन है। इस कारण वे वहाँ का राज्य-प्रबन्ध यार मुहम्मद खाँ के सिपुर्द करके और एक भारी धन-राशि कर के रूप में लेकर वापस लाहौर चले आये।

रणजीत सिंह का काश्मीर, वन्नु, टांक तथा डेरा इस्माईलखाँ

पर अधिकार सन् १८१९-१८२१

इस घटना के एक वर्ष बाद सन् १८१९ ई० में रणजीतसिंह ने फिर से काश्मीर पर आक्रमण किया और जम्बार खाँ बारकजई को वहाँ से निकाल कर सारे प्रदेश पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया। इस के पश्चात् सन् १८२१ में मनकेरा के नवाब हाफिज़ अहमदखाँ को उसकी रियासत से बे-दखल करके सिन्धु नदी के दोनों

ओर का इलाका, अर्थात् मियांबाली, लय्या, भक्कर, बन्नू, टांक और डेरा इस्माईलखां के जिलों को महाराजा ने अपने राज्य में मिला लिया ।

अज्जीमखां की नीति

इस प्रकार अटक पार के इलाकों में रणजीत सिंह की दैनन्दिन बढ़ती हुई सत्ता को देख कर, बजीर अज्जीम खां बारकजई के मन में भय उत्पन्न होना स्वाभाविक था । उस को इस बात से और भी अधिक दुःख हुआ कि उसके सगे भाइयों सरदार यार मुहम्मद खां और सुलतानमुहम्मद खां ने पेशावर में महाराजा रणजीत सिंह के कारदार (प्रशासक) बनना स्वीकार करके अफगानों की प्रतिष्ठा को बढ़ा लगाया था । इसी लिये उस ने निश्चय कर लिया था कि जैसे भी हो वह रणजीत सिंह का राज्य अटक से पार नहीं बढ़ने देगा । अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिये उसे बहाना भी शीघ्र मिल गया ।

पेशावर युद्ध का आरम्भ

वह इस प्रकार, कि सन् १८२३ ई० में दशहरा के समीप जागीरदारों और सरदारों को महाराजा की ओर से आज्ञा-पत्र भेजे गए कि वे अपनी अपनी सेनाएं लेकर तुरन्त ही जेहलम पहुँच जायें । महाराजा स्वयं भी वहाँ पहुँच गए । यहाँ तक कि इस वर्ष दशहरा भी उन्होंने वहीं जाकर मनाया । एकत्र हो कर उन्होंने जेहलम से रावलपिण्डी की ओर कूच कर दिया । रावलपिण्डी पहुँच कर फकीर अजीजुद्दीन को पेशावर में राजस्व कर लेने के लिए भेज दिया गया । सरदार यारमुहम्मद खां ने बिना किसी विलम्ब के सुन्दर घोड़े, पशुमैने, मेवे और नगदी भेंट करके फकीर अजीजुद्दीन को सम्मान-पूर्वक विदा किया । महाराजा स्वयं लौट कर लाहौर आ पहुँचे ।

परन्तु सेनाओं का अधिकांश भाग जेहलम से लेकर अटक तक नियुक्त कर दिया गया ।

अजीम खां को यह बात बिल्कुल ही असह्य थी कि उस के भाई इस प्रकार महाराजा रणजीत सिंह को भेंट पेश करते रहें । इस लिए वह एक भारी सेना लेकर सिक्खों के साथ दो दो हाथ करने के लिए काबुल से चल पड़ा । उस ने पेशावर और अटक के बीच बाले भागों में रहने वाले पठान मुखियों को धर्मयुद्ध के लिये भड़काया । अफगानी कबीलों के सरदारों को अनगिनत पत्र और परवाने भेजे गये जिन के पहुँचते ही मजहबी दीवानों ने स्थान स्थान पर सिक्खों के विरुद्ध लड़ने के लिए इकट्ठा होना प्रारम्भ कर दिया । रणजीत सिंह भी अफगानों की इन सामरिक तैयारियों से बे-खबर नहीं थे । इस लिये उन्होंने भी युद्ध-की तैयारी आरम्भ कर दी ।

लाहौर से सेनाओं का प्रस्थान

खालसा सेना का एक दल राजकुमार शेरसिंह के नेतृत्व में शीघ्र ही अटक पहुँच गया । उसकी सहायता के लिए दूसरा दस्ता भी शीघ्र ही भेज दिया गया । इन में से सरदार हरीसिंह नलुआ, स० अत्तर सिंह सिन्ध्यावालिया, स० धन्ना सिंह मलवई तथा दीवान मोहकमचन्द के सुपुत्र दीवान कृपाराम के नाम उल्लेखनीय हैं । इस दल में सेना की वे पैदल पलटने तथा घुड़सवार रजमैटे भी थीं जो अभी अभी इलार्ड तथा वन्तूरा नामक फ्रांसीसी जनैलों के निरीक्षण में पश्चिमी युद्ध-प्रणाली से परिचित हो चुकी थीं ।

इन सब के चले जाने के पीछे महाराजा स्वयं भी अपने कार्य-कुशल सेनानी मिश्र दीवानचन्द तोपखाने वाले को साथ ले कर लाहौर से चल पड़े और रात दिन कूच करते हुए अटक जा पहुँचे ।

जहांगीरा दुर्ग पर खालसा सेना का अधिकार

स० बुधसिंह सिन्धावालिया के दल ने आंधी की भान्ति आगे बढ़ते हुए अटक पार कर जहांगीरा पर अधिकार कर लिया। जहांगीरा दुर्ग के अफगान सिपाही थोड़ी देर तक तो लड़े, परन्तु धावे की तब न ला कर अन्त में उन्होंने हथियार डाल दिये। दुर्ग पर खालसा सेना का अधिकार हो गया। इस प्रकार अकोड़े वाले पठान सरदार फीरोज खां की शक्ति घट गई। फीरोज खां तो युद्ध आरम्भ होने से पहले ही हैजे से मर चुका था। अब उसके इलाके का एक बड़ा भाग भी सिन्हा के हाथ में आ गया।

शत्रुओं का टिब्बा टीहरी पर जमाव

जहांगीरे की हार के पश्चात् अफगानों की सेना पीछे नौशहरे की ओर भागने और टीहरी की पहाड़ियों में, जो अटक से लगभग पच्चीस मील की दूरी पर हैं, अपनी बिखरी हुई शक्ति को संचित करने लगी। मुख्ती सेना भी इस की सहायता के लिये एकत्र होने लगी। इन को बागडोर सरदार अजीम खा के छोटे भाई सरदार दोस्त मुहम्मद खा के हाथ में थी, दूसरी ओर पेशावर की ओर से अजीम खा अपनी भारी सेना ले कर स्वयं बड़े वेग से बढ़ता चला आ रहा था। सम्भव था कि अजीम खा की सेना मुख्तियों के साथ मिल कर खालसा दलों पर दृढ़ पड़ती। किन्तु महाराजा और उन के सैनिक अधिकारियों की बुद्धिमत्ता ने उनको आपस में मिलने का अवसर न दिया।

महाराजा रत्नजीतसिंह, जो उस समय अकोड़े में डेरा लगाये बैठे थे, सूचना मिलने पर एक दम टीहरी की ओर चल पड़े। वहां जाकर पड़ताल की गई। दिन केवल एक पहर शेष था। इस लिए उसने अकपट अपने सैनिक अधिकारियों को परामर्श के लिए बुला भेजा।

वहां विचारणीय विषय यह था कि टिब्बाटीहरी पर टिड्डी दल की तरह एकत्र हो रहे पठानों पर तुरन्त ही धावा बोल दिया जाय या यह काम दूसरे दिन सबेरे के लिए स्थगित रखा जाय। उस समय पर पुराने अनुभवी फ्रांसीसी जनरल वन्तूरा ने यह सम्मति दी कि आक्रमण अभी कर दिया जाय, ताकि अजीम खां और जमान खां की सेनाओं को इकट्ठा होने का अवसर ही न मिले। इस अवसर पर सलाह देते हुये वन्तूरा ने महाराजा से कहा कि 'महाराज ! इस समय हम दस के बराबर हैं और शत्रु एक के बराबर, परन्तु प्रभात तक शत्रुओं की संख्या दस हो जायगी और हम एक रह जायेंगे, क्योंकि शत्रु चारों ओर से आकर एकत्र हो रहा है। तथा पेशावर की ओर से अजीम खां अपनी प्रशिक्षित सेना लेकर बड़े वेग से बढ़ता चला आ रहा है।' यह बात महाराजा को पसंद आई और तुरन्त ही धावा बोलने की आज्ञा दे दी गई।*

युद्ध के दो मोरचे

युद्ध के दो मोरचे बनाये गये। एक मोरचा लुण्डा नदी के दहिने किनारे पर और दूसरा बाएं पर। दायीं ओर के युद्ध-क्षेत्र पर राजकुमार शेर सिंह, राजा गुलाबसिंह, सरदार बुधसिंह सिन्धां-वालिया आदि की भारी सेनाओं के मोरचे लगाये गये थे। इनके लिये खाद्यपदार्थ जहागीरे के दुर्ग में जमा कर रखा था। पठानों की ओर इस नाके पर अजीम खां के दो भाइयों और जन्वार खां ने अफगानी सेना की कमान सम्भाल रखी थी। इन के पीछे अजीम खां स्वयं एक भारी सैनिक दल के साथ चमकनी के स्थान पर डेरा डाले पड़ा था।

नदी के बायें किनारे पर महाराजा रणजीतसिंह ने स्वयं खालसा

सेना की बागडोर सम्भाल रखी थी। इस सेना को व्यवस्थित कर के महाराजा ने उसे तीन विभागों में बाँटा। एक दस्ते को, जिस में आठ सौ सवार और सात सौ सैनिकों की एक प्यादा पलटन और अकाली निहंगों के चुने हुए डेरे बाबा फूलासिंह के नेतृत्व में सम्मिलित थे, टिब्बा पर आक्रमण करने की आज्ञा मिली। दूसरा दस्ता जिस में एक हजार सवार, तीन गोरखा और दो नजीब (मुसलमान) पलटने सम्मिलित थीं, सरदार देसासिंह मजीठिया और सरदार फतहसिंह आहलूवालिया के नेतृत्व में टिब्बा की दूसरी ओर से आक्रमण करने के लिए तैयार किया गया। तीसरा दस्ता जिस में दो हजार सवार, आठ प्यादा पलटने और कुछ हलकी तोपें थीं, जनरल वंतूरा व जनरल अलार्ड तथा सरदार हरिसिंह नलुवा की कमान में इस काम पर नियत किया गया कि मुहम्मद अजीम खाँ को लुडा नदी लाँघने और टीहरी के स्थान पर इक्ठे हुए गाजियों के साथ सम्मिलित होने से रोके रखे।

जब हर प्रकार से तैयारी पूरी हो गई, तो सेना ने टिब्बा की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में रणजीतसिंह नंगी खडग हाथ में लिए हुए अपनी सेनाओं को प्रोत्साहित कर रहा था, और गर्जती हुई ध्वनि के साथ उनके जय-घोषों का उत्तर भी देता। पहले प्यादा सेना आगे बढ़ी, इसके पश्चात् सवारी सेना के दस्ते भी चल पड़े, अफगान सेना ने, जिसे स्थिति की दृष्टि से इस प्रकार की बढ़ौतरी प्राप्त थी, आक्रमण-कारियों को अधिक हानि पहुँचा कर पीछे धकेल दिया। इसी बीच में गोरखा पलटन और बाद में नजीब पलटन को पहले दस्तों की सहायता के लिए आगे बढ़ने की आज्ञा मिली। यह पलटन बड़ी चतुराई, संलग्नता और वीरता से लड़ी। यद्यपि शत्रु की तुलना में इन की बराबर की हानि हुई, किन्तु इन्होंने एक बार बिगड़ती हुई स्थिति को बचा लिया (न० ६०-६२)।

इधर पठानों ने भी इस युद्ध को निर्णायक युद्ध समझ लिया था। अतः बहुसंख्य सेना के साथ एक बार फिर जोर से आक्रमण किया, और खालसा सेना में ऐसी भगदड़ मची कि रणजीतसिंह विस्मित हो गये। परन्तु अकाली फूलासिंह ने उस समय अपनी साहसी अकाली दस्ते के साथ जवाबी हमला किया और सैकड़ों पठानों को तलवार के घाट उतार दिया। किन्तु दुर्भाग्य से वीर फूलासिंह के मस्तक पर एक गोली लगी और वह युद्धस्थल में ही मृत्यु को प्राप्त हुआ।

इस वीर की मृत्यु पर खालसा सेना को बड़ा जोश आया। गाजियों पर उसने बड़े जोर से आक्रमण किया, परन्तु पठानों ने भी सामना करने में कोई कसर उठा न रखी। सैकड़ों बहादुर सिख नौजवान और अफसर इस जंग में काम आए (नं० ६३-१०४)।

श्री गुरु गोविन्दसिंह जी का प्रकट होना

युद्ध का पासा अपने विरुद्ध पलटता देखकर महाराजा रणजीत सिंह भौंचक्के से रह गए। उस समय उन्होंने गुरुचरणों का ध्यान कर खालसा सेना पर आई आपत्ति को दूर करने के लिए स्थिरचित्त हो अरदास (प्रार्थना) की। यहाँ कवि गणेश दास काव्य कल्पना से काम लेता हुआ कहता है कि निरभिमान हृदय में से निकली हुई यह प्रार्थना श्री गुरु गोविन्दसिंह जी की सेवा में स्वीकृत हुई और वे स्वयं नेजा हाथ में लिए सुंदर घोड़े पर सवार हो, खालसा सेना की सहायता के लिए आ पहुँचे (नं० १०५-६)। कवि के शब्द ये हैं।

“बिरद को लाज पहचान रिदे, सिंह आरत जान कृपाल हो आये।
सोहे तुरंग सु नेजा लै हाथ, जो तुरकां नूँ मार के वेगि भजाये ॥”

लड़ाई का जोर और अफगानी सेना का अन्धेरे में भाग जाना

अरदास के पश्चान् सेना की बाग-डोर महाराजा ने भट अपने हाथ में ले ली। रक्षित सेना के अतिरिक्त फ़ामीसी अफमर तथा उनकी पश्चिमी ढग पर प्रशिक्षित सेना जो अजीम खाँ की गति-विधि के निरीक्षण के लिए तैनात की गई थी, तुरन्त रणभूमि में लाई गई। सब को पहाड़ी पर एक साथ धावा बोलने की आज्ञा दे दी गई। मिश्र दीवानचन्द को आदेश हुआ कि वह ठीक उनके सामने अथवा पहाड़ी की ओर अपना तोपखाना स्थापित कर ले और इस ओर की आक्रमणकारी पलटने जब अपनी बन्दूके चलावे तो वह भी शत्रु की पिछली तरफ की पहाड़ी पर गोले बरसाना आरम्भ कर दे, ताकि शत्रु अधिक देर तक पहाड़ी पर जमा न रह सके। साथ ही देसासिंह मजीठिया को आज्ञा मिली कि वह मुलखिया सेना, जो टिबी के पीछे एकत्र हो रही थी, पर धावा बोल दे। यह सब कार्य निमेष मात्र में हो गया। फिर क्या था, लगी तोपे और बन्दूके चलने।

दैव-कृपा से खालसा सेना ने बल का ऐसा प्रदर्शन किया कि न केवल पठानों की बाढ़ रुक गई, वरन् उसका रुख भी बदल गया। थोड़ी देर की लड़ाई के पश्चात् ही बचे खुचे पठान तितर-बितर होकर अन्धकार के आवरण के पीछे अपने प्राण बचा कर आस-पास की पहाड़ियों में जा छिपे।

अनुमान यह है कि कोई चार सहस्र पठान और दो सहस्र के लगभग सिक्ख इस युद्ध की भेंट हुए। खालसा सेना के कई प्रसिद्ध सरदार और अधिकारी, जैसे कि बाबा फूलासिंह, सरदार गर्भासिंह, गोरखा जरनैल बलभद्र आदि इस युद्ध में काम आये।

अजीम खाँ का बिना दो हाथ किये रणभूमि से खिसक जाना

अजीम खाँ की सेना, जो चमकनी के स्थान पर डेरा डाले पड़ी थी, नौशाहरा के युद्ध में भाग न ले सकी। जब अजीम खाँ को पठानों

के भागने का समाचार मिला, वह सामना करने की रही सही शक्ति भी खो बैठा। अब अपनी बारी देख वह बची खुची सेना तथा अपनी बेगमों के साथ मैमन्द की पहाड़ियों को पार करती हुआ जलालाबाद जा पहुँचा। लुण्डा नदी के पारवाली खालसा सेना ने उसका पीछा किया और उसके कैम्प को जी भर कर जा लूटा। (नं० ११८-१२३)

यार मुहम्मद को फिर से पेशावर का राज्यपाल बनाना

तदुपरान्त महाराजा रणजीतसिंह ने हश्त नगर की ओर कूच कर दिया और दूसरे दिन ६ मार्च सन १८२३ ई० को विजेता के रूप में पेशावर नगर में प्रवेश किया। नगर निवासियों ने आपका बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया। कवि भी लिखता है—

सरकार और सरदार सब, आये सु मिल पिशौर में।

हिन्दू, ब्राह्मण, खत्री, “धन्यभाग्य हम इस ठौर में।”

अजीम खॉ का भाई यारमुहम्मद खॉ, जो दोनों ओर से आ रही सेनाओं को देख कर पेशावर से भाग गया था फिर आ उपस्थित हुआ। उसने आगे के लिए महाराजा साहब की अधीनता में रहना स्वीकार किया। उसने अपना जगन् प्रसिद्ध घोड़ा, ‘कहार’ (गोहरबार) महाराजा को भेंट कर दिया। महाराजा ने दूरदर्शिता और नीति से काम लेते हुए यारमुहम्मद खॉ के यह विश्वास दिलाने पर कि वह प्रति वर्ष १,१०,००० रुपया लाहौर के खजाने में ‘कर’ स्वरूप भेजता रहेगा, उसे फिर से पेशावर का राज्यपाल नियुक्त कर दिया। अप्रैल के अंत में महाराजा इस चढ़ाई से निवृत्त होकर अपनी राजधानी लौट आये।

पेशावर-युद्ध-१

एक ओंकार सत गुर प्रसाद

दोहा

देवी तू वरदाता तुमहीं, सिमरे सब सिद्ध होय ।
श्री गुरु पंथ सुजस कहूँ, देहो सुध वर मोय ॥ १ ॥

सोरठा

श्री गणेश, दिनेश, और सुरेश जलेश को ।
महेश, नरेश, सुदेश, सर्व देव बन्दन करुं ॥ २ ॥

सवैया

आदि करी मरजाद धरी, भव देव सो दैत दोऊ उपजाये ।
आपस माँहि लराय तिनै, पिख कौतक ऐसे बताये बनाये ।
पाप करे सो दुरानी कलू, ताई कारण सिह गुरु प्रगटाये ।
आपन जोत सो पाये समै, मुख वाहगुरु प्रभ नाम जपाये ॥ ३ ॥

कवित्त

गोविन्दसिंह आप, दीनो बड़ो परताप,
रणजीतसिंह थाप', जोत आपनी सो पाय के ।
प्रथम पजाब जीत, नीत मे प्रबीन भये,
कांगड़े का कोट देवी दियो हरषाय के ।

१. ऐसा प्रतीत होता है कि इन शब्दों का सकेत रणजीतसिंह के पजाब का महाराजा बन जाने की ओर है । सन् १८०२ में महाराजा ने लाहौर के किले में एक दरबार लगाया और आगे के लिए अपने नाम के साथ 'सरकार बाला' शब्द के प्रयोग करने की आज्ञा दी । विशेष बर्णन के लिए देखिये ज्ञ. न. पृष्ठ १६-१७ ।

अटक पटक दे सो लीनी देर कीनी नाहीं,
 मार मुलतान कश्मीर लिया धाय के ।
 पाछे करी दौर, सो पिशौर मार लिये है,
 अब चढ़े सभ सिंह मन में खुनसाय के ॥ ४ ॥
 धाय के पिशौर लीन, माया छीन, दीन हुये,
 होय के अधीन भागे, काबुल रहाये^१ है ।
 जीत के पिशौर तो लहौर सिंह आये मिल,
 पाई भली ठौर, मन हरख बढाये है ।
 मुगल पठान भये अखिये सुभहान उत,
 कहत परमान हम जीवन न भाये है ।
 करो सो उपाओ दाओ, घाओ सभ सिहन को,
 एहो चित्त चाओ खाना खाओ हरखाय हैं ॥ ५ ॥
 तुरकन बिचारी, पत्त रही न हमारी,
 जीत लीनी भूम सारी, सो भिखारी भये जानिये ।
 मुलतान, काश्मीर, मनकेरे मौन^२ धारी,
 बड़ी मन पीर, कोई हरो, सुख मानिये ।
 सुन के दुरानी बात लागी मन कानी,
 सभ भये क्रोध बानी, सुन बानी हठ ठानिये ।

१. ऐसा प्रतीत होता है कि इस से कवि का संकेत पेशावर की नवम्बर सन् १८१८ वाली पराजय की ओर है । विशेष वर्णन के लिए देखिए पेशावर युद्ध का वचनारम्भ ।

२. महाराजा रणजीतसिंह ने मनकेरा सन् १८२१ में जीता । नवाब मनकेरा का इलाका सिन्ध नदी के दोनों ओर फैला हुआ था । एक ओर डेरा इस्माईलखा था और दूसरी ओर मनकेरा । पहले मुलतान, काश्मीर, पेशावर और मनकेरा में पठानी राज्य थे । अब इन पर महाराजा ने अधिकार कर लिया था ।

चलो करे जंग, मारे सिंहां नूँ निसंग,
 वने भले तवे ढंग, जीत ले हैं राजधानिये ॥ ६ ॥

आप सरकार, कियो मन में बिचार,
 चढ़े तुरकन की ओर, मार आवे फतेह पाय के ।
 चढ्यो रणजीतसिंह, हिन्दुओं का पातशाह^१,
 आप करतार अवतार धार आय के ।
 साथ उमराओ वीर, चढ़े सब धार वीर,
 करके दुसहरा^२ सो रिदे हरपाय के ।
 उतरे दरियाओं^३ पार, मार भई तुरकन को,
 लिख्यो फीरोज^३ आये मिह बहु धाय के ॥ ७ ॥

दोहा

अज़ीम खान को लिख्यो^४ हैं, फीरोज बात सत भाई ।
 हिन्दुओं का पातशाह अब आयो महा रिमाई ॥ ८ ॥

१. इन दिनों हिन्दू और सिख एक ही समझे जाते थे, आजकल की तरह इन में भाव-भेद नहीं था । समकालीन कवि शाहमुहम्मद ने अंग्रेज़ा के आगमन का वृत्तान्त देते हुए ऐसा ही भाव प्रकट किया है—

राज़ी बहुत रेंहदे मुसल्मान हिन्दू, सिर दुहा दे उते अफात आई ।
 शाह मुहम्मद विच पजाव दे जी, कदे नहीं सी तीसरी जात आई ॥
 (अर्थात् हिन्दू सिख एक समझे जाते थे) ।

२ प. अर्थात् दरया से पार । इस वर्ष दशहरा महाराजा ने जेहलम में मनाया था । सोहनलाल द २ पृष्ठ ३०१ ।

३. अभिप्राय फीरोज़ख़ाँ खटक से है । इस का इलाका अटक के दूसरे किनारे से लेकर नौशहरा तक था ।

४. अज़ीमखा बारकज़ई काबुल का वज़ीर था । पेशावर और काश्मीर के राज्यपाल इस के छोटे भाई थे ।

कवित्त

शाहजादे खड़गसिंह, शेरसिंह, तारासिंह,
 आये और उमराव, कुछ अन्त नहीं पाईये ।
 बुधसिंह, धन्नासिंह, हिम्मतसिंह, हरिसिंह,
 मियां ध्यानसिंह और केतक सुनाईये ।
 सुचेतसिंह, हरदाससिंह, गुलाबसिंह,
 खुशहालसिंह, दयासिंह, अतरसिंह सूरमे बताईये ।
 जगतसिंह, प्रतापसिंह, शामसिंह, ज्वालासिंह,
 कर्मसिंह, गर्भासिंह आये हैं रसाईये' ॥ ६ ॥

छन्द

यारखान^२ पठान लै प्रधान सभ इकट्ठे किये ।
 फीरोजखा लिख्यो हमें सो सुनाये सभनन को दिये ।
 हिन्दुओं का पातशाह आयो, संग फौज अपार है ।
 चाहत कहार तुरंग^३ को, इह लिखी बात सो सार है ॥१०॥

१ इस कवित्त से पता चलता है कि इस युद्ध में महाराजा की आज्ञा के अनुसार सब बड़े बड़े जागीरदार अपनी अपनी सेना लेकर सम्मिलित हुए थे । क्योंकि इस युद्ध द्वारा यह निर्णय होना था कि अटक पार के इलाके पर खालसा का अधिकार स्थायी रूप से रहेगा या नहीं ।

२ अभिप्राय यारमुहम्मद खा से है । यह अजीमखा का छोटा भाई था । सन् १८१८ में जब महाराजा ने पेशावर जीता तब इस ने महाराजा को नकद रुपये और घोड़े 'कर' के रूप में देने स्वीकार किये थे । फीरोजखा खटक ने यार मुहम्मद को भी समय पर सूचना भेज दी ।

३. यह फारसी शब्द 'गोहर बार' का बिगड़ा हुआ रूप है । यह ईरानी नसल का एक बहुत सुन्दर घोड़ा था, जो एकदम सौ कोस की दूरी पर जा सकता था । देखिये ज० न० पृष्ठ १५३ ।

दोहा

करो विचार सो सभे मिल, कौन उचित है बात ।
न दीजे घोड़ा इन्हें, जुव करन कुल भात ॥११॥

सवैया

उत ओर पठान विचार करे, लड़िये किधों ताई तुरग पठावैं ।
इत ओर सु सिंह चढ़े सभ ही, चल जेहलम तीर सो डेरा लगावैं ।
सार भई सो पठानन को, कर घोड़े तैयार कहार बतावैं ।
दस बारह तुरंग, उत्तग^१ सुरग, जो माया दे संग सो बेग भजावैं^२ ॥१२॥

दोहा

नजर तुम्हारी धरी हम, घोड़ा इहि कहार ।
डेरा करो पिछोई अब, रैयत हमे विचार ॥१३॥

कवित्त

टके औ' तुरंग लै लाहौर सरकार आये,
हरिसिंह हूँ कोउ दरबन्द^३ सू पठायो है ।
किन्हूँ आये कह्यो, इह कहार घोड़ा नाहे,
ओहे ऐतो और पठ दियो, सुन सिंह तो रसायो हैं ।

१. स० ऊँचे कदवाला ।

२. इस सम्बन्ध में देखिये सोहनलाल द० २ पृष्ठ ३०० । वहा लिखा है कि जब महाराजा रावलपिण्डी पहुँचे तो यार मुहम्मद खा ने बारह भारू मेवे आदि, पाँच घोड़े और तीन जोड़ी शिकारी बाज़ भेंट किये । ये वस्तुये लेकर महाराजा लौट आए ।

३. वापसी पर हरिसिंह नलुवे को दरबन्द के दुर्ग की रक्षा के लिये भेजने का बर्णन सोहन लाल ने भी अपनी पुस्तक में द. २ पृष्ठ ३०० पर किया है ।

सरकार सो बखान, देखो तुरक बेईमान,
 कहि के करार दगाबाजी सो कमायो है !
 लिख्यो परवाना सो शाहजादा शेरसिंह सुन,
 चढो तुम धाये, जो कहार लै मंगायो है ॥१४॥

चढो शाहजादा शेरसिंह, किरपाराम संग,
 धन्ना सिंह, अतर सिंह ताभिया^१ चलाये हैं ।
 मूलराजी^२ फौज, मनकेरिया,^३ कसूरिया है,
 दीनी दाव ताई^४ मार धूम सो मचाये हैं ।
 लिख परवाना सो फिरोज और भेज दियो,
 दीजिये कहार तो अपार सुख पाये हैं !
 न तो अब खालसा निहग सिंह आये बहुत,
 लूट लैहैं देस, फिर पाछे पछताये हैं ॥१५॥

छन्द

फिरोजखान पठान कह, लिख अरजी एह पठाई है ।
 यार सो ग्वान की ओर लिख, सो 'कहार' बेग मंगाई है ।

१. राजकुमार शेरसिंह की सेना मे ८००० जवान थे, देखिये,
 ज० न० पृष्ठ १५३ ।

२. यह सवारी सेना का भाग था जिस में लगभग ५५० जवान थे ।
 इसका वार्षिक खर्च खड़ग सिंह की जागीर में से होता था । इस डेरे का बड़ा
 अधिकारी मूलराज था । तत्पश्चात् हम का नाम मूलराजी डेरा पड़ गया
 था । देखिये खा० ८० रि० जिल्द न० १ पृष्ठ ११८ ।

३. अभिप्राय नवाब मनकेरा और नवाब कुतुबुद्दीन कसूरिया से है
 जो महाराजा की आज्ञा के अनुसार दूमेरे जागीरदारों की तरह इस युद्ध में
 शामिल हुये थे ।

बिने कही ओह किन दुष्ट ने, एह कूड़^१ बोल अलाई है।
कहार तो आगे दिया, किसे चुगल लूती^२ लाई है ॥१६॥

सवैया

कोप कह्यो तो शहजादे तवै, दगाबाजी करी फल सो अब पावे।
लूट के देस बरान करे, तब जानोगे मन को भल भावे।
नही तो अब दिहो 'कहार' मंगाई, रहे पत्त तो अति ही सुख पावे।
आये सहे^३ सरकारों मे, नहि देवे तो मार सो खाक रुलावे ॥१७॥

दोहा

फिरोज खान तब लिख पठ्यो, यार खान बल^४ जान।
घोड़ा देहु 'कहार' अब, आये सिह बलवान ॥१८॥

सवैया

यार मुहम्मद बुलाये भरात, दीवान मुसाहिब हैं सब आये।
आपो अपनी बुध की बात कइो, जो 'कहार' तुरग चहे फिर आये।
शेर मिह शहजादा मुलक मे आय क्रियो अति जोर, सो धूम मचाये।
कौन सलाह करो मिल के कि देहु 'कहार'^५ कि जंग सुहाये ॥१९॥

कवित्त

दीवान तब कहे, देहो घोड़ा रग रहे,
बड़ो जोर अब आहे, मिह गुरु ने बधाये^६ हैं।

१. प० अर्थात् भूठ।
२. प० अर्थात् बहकाना, शिकायत करना।
३. प० अर्थात् सदेश।
४. प० अर्थात् की ओर।
५. शृंखला जोड़ने के लिये देखिये सवैया न० १२।
६. प० अर्थात् बढावा देना,

यारखान मरजी पाये बोल्यो मुसाहब सों,
 मुनो बात एक, जां ते जस पाये हैं ।
 जैमल सो फतह ताई कह्यो पातशाह एह,
 दीजिये तुरंग दरियाई^१ सत्त भाये हैं ।
 दियो न किकान, सो प्राण देन भले जान,
 राख्यो सो बोल, लोक इज्जत सों गाये है ॥२०॥

दोहा

पाण्डव राज सो जगहित, छोड़्यो भलो तुरंग ।
 तहि समान जानो एहि, जो मन भावे ढंग ॥२१॥
 यारखान सिर फेर कर, जान गरब कहि बात ।
 लिख दीजो सरकार को, करे जंग हरखात ॥२२॥

सवैया

फेर प्रधान बखान इही, हम को कुछ दोस न दीजिये राई ।
 सिंहन संग जो शिहत है, सोई जान रिदै अपनी लघुताई ।
 गुड़ दिये मरे, बिख काहे धरे, सो तुरंग देहु सभ देस बचाई ।
 जंग किये भल ढंग नहीं, कश्मीर गयो कछु नाई बसाई^२ ॥२३॥

१. तुरंग दरियाई उस घोड़े को कहते हैं जो देवताओं के समुद्र-मन्थन से निकला था। जहा तक सम्राट् अकबर के चितौड गढ़ के रक्तक जैमल सिंह और फतेह सिंह के पास से इस घोड़े को मगाने का सम्बन्ध है, इतिहास इस पर कोई प्रकाश नहीं डालता ॥

२. यह काश्मीर छीने जाने की ओर संकेत का तात्पर्य यह है कि महाराजा ने केवल चार ही वर्ष पहले यार मुहम्मद के भाई जम्बार खान से काश्मीर जीता था। इस अवसर यार मुहम्मद का मन्त्री उसे यह घटना याद दिला कर लड़ाई से रोकना चाहता है।

दोहा

श्री गुरु गोविन्द सिंह, सिंहन दियो प्रताप ।
तांते सरनी जाय के, जान बचावहुँ आप ॥२४॥

सवेया

फेर मुहम्मद खान कहे, सो पठानन आन सभी मिट जावे ।
लोगन में चले चर्चा, सो तुरंग दिओ अब जान बचावे ।
भरात मुसाहिब ऐसे कहै, जो बिचारी भली हठ नाही गिरावे ।
लिख के पठिये, नहीं असु देहैं, तुम आय लड़ो हम नाही डरावे ॥२५॥

दोहा

लिख भेज्यो सो फिरोज को, सिंहन जाय सुनाय ।
न हूँ दीन तुरंग भल, करो जुध अब आय ॥२६॥
यार मुहम्मद लिख पळ्यो, सुन शाहजादा सार ।
अजीम खान हम पै चह्ये घोड़ा एहि 'कहार' ॥२७॥

सवेया

अजीमखान को जीत तुरंग लियो इह बात तुम्हैं हम सांच सुनायो^१ ।
पाण्डव राज के अरब समान नहीं दैहे, तुम्ही शमशीर चलायो ।

१ सन् १८१८ से महाराजा रणजीतमिह प्रति वर्ष घोड़े इत्यादि 'कर' के रूप में लिया करता था । काबुल के वजीर अजीम खा को जो कि यारमुहम्मद का भाई था, यह अच्छा नहीं लगता था कि सिकखों का प्रभुत्व पेशावर पर स्थापित हो जाय । इस लिये वह जनवरी सन् १८२३ में अपने भाई यार मुहम्मद के कान खींचने और इलाके का पूर्ण यथोचित प्रबन्ध करने के लिए एक भारी सेना साथ ले पेशावर की ओर आया । कवि ने बड़े सुन्दर ढंग से यार मुहम्मद खान के मुख से कहलवाया है कि खालसा का मुकाबला उस के साथ नहीं, वरन् अजीम खा के साथ था ।

आए लड़ो न डरे तुम ते, मुलखिये सभी गाजी होन को आयो ।
अपने तात को सार लिखो, न ढील करो, आय जंग मचायो ॥२८॥

दोहा

आई सो पाती खान की, भगवानदास सो सुनाय ।
देवे नहीं 'कहार' तोहि लड़िये महा रिसाय ॥२९॥

कवित्त

सुनी तुरकन की पाती शेरसिंह शाहजादे,
जाती ताती बानी बोल, ऐसे सभ को सुनाय कै ।
बुलाय के नकीब कहे, पठ्यो जत्थेदारन को,
अटक के पार अज डेरा करे जाय कै ।
आयस को मान, चढ़े सिंह बलवान,
सुनी धमक पठान तो फिरोज चलयो धाय कै ।
काबुल को जाय, तौ अजीम को चढ़ाय ल्याये,
सिंहन की पाति आ सुनाई सुख पाय कै ॥३०॥

दोहा

तै आयो पिशौर को अजीम खान रिम मान ।
हल्कारे दीनी खबर, फिरोज ल्याओ जान ॥३१॥

सवैया

विसाखासिंह दीवान कहे सभ को, देखो तुरकन जात दगा ही कमावै ।
आप लिख्यो सरकार एहि, सो फिरोज है आपनो रछ करावै ।
इनकी अब बात भई विख्यात, अजीम खान के साथ मत्ता जो पकावै ।
सरकार की ओर लिखी अरजी, जो फिरोज सो जाय अजीम ल्यावै ॥३२॥

-
१. फिरोजखान दोहरी चाल चल रहा था, कभी महाराजा रणजीतसिंह की ओर हो जाता तो कभी पठान भाइयों का हो बैठता । अब भी वही अजीमग्या को भड़का कर पेशावर लाया था । पुष्टि के लिए

दोहा

आय अजीम सो कोप कै, बहुत मुल्खिये संग ।
गाजी होन सो कहत हैं, दादी मुच्छन रंग ॥३३॥

सवैया

आये दुरानी घने मिल कै, कर मूछ सो डाढ़ियां रग रगाये ।
गाजी थिये, लड़ मार मरैं, अब दीन पै सीस दिये हरखाये ।
गज बाज चढ़े, आय बेग लड़े, हथियार जड़े, याही सिंह सुघाये ।
सार सुनी सरकार जबै, जयैदारन सग लै आप सिधाये ॥३४॥

दोहा

अमृतसर अस्नान कौ, सरकार सो भई तैयार ।^२
शालाबाग सो जाय तब, सुनी सो तुरकन सार ॥३५॥

सवैया

यह फिरोज की बात सुनी, दगेबाजी करि मन में खुनसाये ।
लिख के परवाना पठ्यो सरकार, सुनो बुधसिंह चढ़ो अब धाये ।
शेरसिंह की जाय करो हमराह, सुनी तो चढ़े नहिं देर लगाये ।
गुलाबसिंह हरिसिंह आये तबै, फिर लुण्डी^३ के पार हो जंग मचाये ॥३६॥

देखिए सोहनलाल द० २ पृष्ठ ३००, जहा लिखा है,

“फिरोजखा खतक कि बाइसे इश्तअराल नवाइ जहालोकत्ताल शुदह बूद”

१. ५० अर्थात् बने ।

२. सोहनलाल भी यह लिखता है कि महाराजा को यह सूचना उस समय मिली, जब कि वह शालामार के निकट था (द० २ पृष्ठ ३०२) इस से प्रतीत होता है कि कवि सदा महाराजा की सेवा में रहता था ।

३. यह नदी काबुल की ओर से आती है और साधारणतया ‘काबुल’ नाम से प्रसिद्ध है । यह अटक में आकर गिरती है ।

कवित्त

शेरसिंह संग, और चढ़े सरदार जंग,
 अटक के पार होय लड़े खुनसाय क।
 किरपाराम^१ जाई सो खेड़े लूट फूक दिये,
 सुन के फिरोज गमी भई विस्माय कै।
 इत और ते निहंग पिये भंग, फोग मारे^२,
 सब कहत फिरोज आपे मरे दुख पाय कै।
 तैसे भई बात, सो अजीम साथ मत्ता करे,
 भयो तबे हैजा, वफात पाई जाय कै ॥३७॥

दोहा

फिरोज मोयो अचानके,^३ अजीम खान विस्माय।
 यार मुहम्मद को कहत, अब दिन मन्दे आय ॥३८॥

सोरठा

सिंहन सुनी जो सार, फिरोज मोयो हैजा भयो।
 दगा करत चित धार, बदला शीघर ही लियो ॥३९॥

छन्द

इत और ते सरकार चढ़ सभ आये शीघ्र जानिये।
 हरिसिंह उत किरपाराम संग सौ और सिंह पछानिये।

१. इस ने अटक पार फोगज खा खतक के इलाके को खूब लूटा और कई गांव जला दिये।

२. भग छानने के बाद जो तलछुट पदार्थ शेष रह जाता है इस को गोले की तरह बान्ध कर निहंग लोग अपने मानसिक सन्तोष के लिये मुगलों के समय से ही दीवारों इत्यादि को शत्रु की छाती कल्पित करके निशाना लगाया करते थे।

३. फिरोजखा वास्तव में ही हैजे की बीमारी से मरा था। पुष्टि के लिये देखिये सोहनलाल द० २ पृष्ठ ३०५।

धन्नासिंह रज्जबन^१ चढ़े मिल जगीरे^२ लड़न हठ ठानिये ।
तीर तुपक गोलियां दोहूं ओर मारत मानिये ॥४०॥

दोहा

इलाही बख्श को हुक्म तब, आप शाहजादे कीन ।
तोप गुबारे रहकले, मारो तुम परबीन ॥४१॥

सोरठा

लड़े सो हठ बहु धार, मरे कोऊ घायल पड़े ।
गोले चले अपार, तोपन मेरे पड़े बहुत ॥४२॥

सवैया

देवासिंह दुवाबिये खूब लड़े, अतर सिंह ने जग कर तुरक सो घाये ।
किरपा राम के संग दुवाबिये सिंह, लड़े अतिशय मार मार मचाये ।
शामसिंह तारासिंह सामने होय, सो तुरकन मारन हेत बढ़ाये ।
बन्दूक तमाचे दुरानी चलाये, गिरे कई सिंह जो सुरग सिधाये ॥४३॥

कवित्त

हरिसिंह, किरपाराम, अतरसिंह बैठ कर,
मिल के सो मता करी, चढ़े सिंह धाय के ।

१ फ्रांसीसी भाषा के शब्द 'रजमन' और अंग्रेजी भाषा के शब्द 'रैजिमेंट' का विगड़ा हुआ रूप है। सरदार धन्नामिह के इस अवसर पर युद्ध में सम्मिलित होने और वीरता दिखलाने का उल्लेख सर लैपलग्रिफिन ने भी अपनी पुस्तक में किया है ! देखिये पञ्चाव चीफस पृष्ठ १६२ ।

२. अभिप्राय जहागीरा के किले से है जहा पठानों ने जी तोड़ कर मुकाबला किया था परन्तु सरदार हरिसिंह नलुवा और दीवान कृपाराम की कुमक पहुँचने पर पठान गढ़ छोड़ कर भाग गये थे । पृष्ठ के लिए देखिये सोहनलाल द० २ पृष्ठ ३०३ ।

भई भड़ी^१ दिन तीन चार, असव सभे लोड़^२ दार,
 होय के सो पार कनक^३ बढी तुरक घाय के ।
 आये सो मलेच्छ जो, कीनो मिल बड़ो शोर,
 भये घोर वाजे लड़े सब ही रिसाय के ।
 जगीरे फतेह पाई, कई सिह भये घाई,
 तब सिंहन के सीस जीम^४ आगे डारे आय के ॥४४॥
 किन्हू पठान मारयो पैर का सो ठेडा^५,
 जा मुंह ते बखान, मारे शत्रु पछार के ।
 जयसिह अटारी^६ वाले पेख के क्रोध कीनो,
 गुरु का है पंथ करे हानत हंकार के ।

१. प. अर्थात् लगातार वर्षा ।

२. प. अर्थात् जरूरत मन्द (चारे के लिए)

३. प. अर्थात् गेहूँ ।

४. प. अर्थात् काटी ।

५. अजीमखा ।

६. प. अर्थात् पाव की टोकर ।

७. जयसिह अटारी वाले सरदारों में से था । इसे किसी प्रकार सदेह हो गया कि महाराजा रणजीतसिंह इस से अप्रसन्न है । इसी कारण वह महाराजा की नौकरी छोड़कर दोस्त मुहम्मदखा के पास, जिस के पास वह एक बार महाराजा का दूत बनकर हो आया था, चला गया । इस अवसर पर जयसिह अजीमखा की सेना के साथ था । जब पठानों ने खालसा के सिरों पर ठोकरें मारीं तो इसकी जाति-भावना जाग उठी । सिक्खों हतात्माओं का यह निरादर उससे सहन न हो सका । इस लिए उस ने पुनः महाराजा की शरण ली । जयसिह की वापसी और सिंहों के इस निरादर का वर्णन इस कवि और सर लैपलग्रिफन के सिवा किसी दूसरे इतिहासकार ने नहीं किया । देखिये लैपलग्रिफन पृष्ठ ६७ ।

अब इहां रहिन हमारा बने नाही,
छिन आपने ही पंथ (जाय) कीजिये बहार के ।
जलालखां खिल्जी और मुगल अरकान^१ संग,
आयो है शाहजादे पास, प्रीत रीत धार के ॥४५॥

दोहा

बारम्बार अजीम कहे, जयसिंह जान न पाय ।
मूरख दुष्ट पठान ऐह, सिंहन सिर पग लाय ॥४६॥

सोरठा

देव सजोग सो पाय, कागन में कोयल बसै ।
बोलत अपने भाये, त्यों दुष्टन संग त्याग्यौ ॥४७॥

सवैया

आय के सिंहन ताई तिनै, श्री बाहिगुरु की फतह सो बुलायो ।
लै गल लाय मिले सभ^२ ही को, आनन्द साथ रहो अभय आयो ।
आगे ते इह बखान हुई तिन, सिंहन सीस को ठेडा लगायो ।
पेखत बड़ मन क्रोध भयो अब, पन्थ की हानत नाहिं सुखायो ॥४८॥

दोहा

तां ते आपने पंथ चल, करे होय गुजरान ।
मलेच्छन को संग त्याग के, आयो सिंहन जान ॥४९॥

सवैया

आदर मान शाहजादे कीनो, सरकार ते तोहे जगीर दिवावैं ।
सिंहन मांहि प्रसन्न रहो, देखो तुरकन को अब मूल गवावैं ।
आवत है सरकार अबे, मार तुरकन सो अति जंग मचावैं ।
उत ओर अजीम मुलखिये लै संग,^३ चमकनी मांहि सो डेरा लगावैं ॥५०॥

१. फा० अरकान रुकन का बहुवचन अर्थात् सरदार ।

२. प. अर्थात् गले लगा कर मिलना ।

३. 'चमकनी' पेशावर से पाच मील दूर नौशहरा की ओर है । यहा मुसलमानों का एक बहुत बड़ा रौज़ा (समाधि-भवन) और पुस्तकालय था ।

कवित्त

कहें मुलखिये, गाजी होन हम आये सब,
 चलो तुम संग, जग करो हरखाय के ।
 बैठ रहे बने नाहीं, सामने हो लड़ो ताहीं,
 सुन के अजीम चढ आयो खुनसाय के ।
 गाज़िया की कही मन्नी, आई चमकनी तब,
 आवत ही सुनी सरकार आई धाय के ।
 हरकारे दीनी सार, आई आप सरकार,
 अब अटक के पार, डेरे सिहां भल पाय के ॥५१॥

दोहा

सरकार कहं गाहन^२ मिले दीवानचन्द बच मान ।
 डेरा पार लघाय के, गढ़ी चढाई जान ॥५२॥
 गढ़ी मॉहि थे तुरक बहु, लड़े पहर परमान ।
 ओड़क^३ हार मिली तबहै, दीवानचन्द बलवान ॥५३॥
 भीमासिंह मो लङ्ग्यो तिन, मन में क्रोध बसाय ।
 नासिर दीन^४ गहि लड़ि मोयो, सूरन की गत पाय ॥५४॥

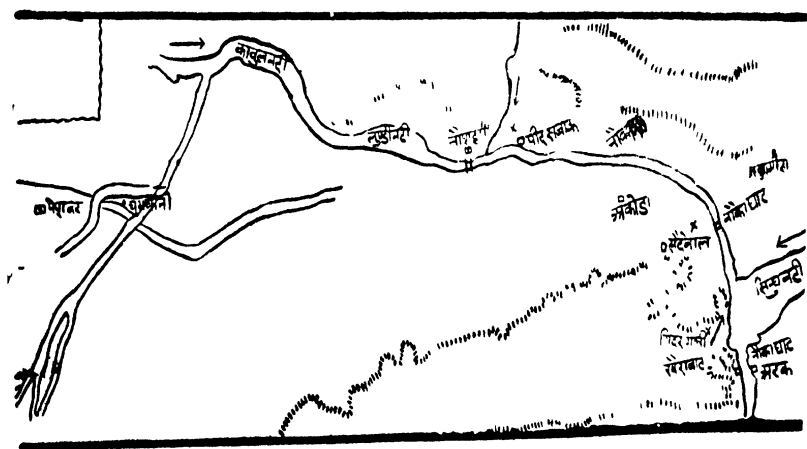
१. अजीमखा के पेशावर की ओर से आने की सूचना पाकर महाराजा
 ॥हौर से पेशावर की ओर चल पड़े । देखिये ज़फरनामा पृष्ठ ११७ ।

२. प. गाहन उम जगह को कहते हैं जहा से नदी सुगमता के साथ पार
 गे जा मके । गाहन दूढ़ने की आवश्यकता इस लिए पड़ी कि शत्रुओं ने अटक
 का पुल तोड़ डाला था । मिश्र दीवानचन्द तोपखाना का करनैल था । गाहन
 मेलने पर उस ने तोपें हाथियों पर लदवा कर नदी के पार भेज दीं । कनिष्क
 ने ऐसे ही लिखता है । देखिये पृष्ठ १६१ ।

३. प. अर्थात् अन्त मे ।

४. इन दोनों योद्धाओं के नाम ख. द. रि. बण्डल न० ११-१२ सम्बत्
 ८७८ ७९ में आते हैं ।

फतहनामा गुरु खालसा जी का



पेशावर-युद्ध

[illegible]

पेशावर-मुद्द

सवैया

चन्द दीवान सवार लजाय, गढ़ी सो लई फतह वेग सो पायो ।
ज्वालासिंह कहे कतल-आम करे, दयावान सभे फिर दीन भजायो ।
सरकार सो पार होय आये तवै, तो जगीरे के सामने डेरा लगायो^१ ।
शेरसिंह शाहजादे को सार कही, हम सामने ही चढ़के तुम आयो॥१५॥
यार मुहम्मद और अजीम, दीवान मुसाहिब हैं सदवाये^२ ।
हिन्दुओं के पातशाह सो आये कहो कहे ढग सों जग मचाये ।
चाली हजार^३ सो गाजी सभे, ठोर जाय चढ़े सो लड़े हैं रिसाये ।
अजीमखान के संग पठान घने, शाहजादे के सामने डेरा लगाये॥१६॥

दोहा

लुण्डी पार उरार^४ तब, डेरे किये विचार ।
आपो अपनी जीत को, चाहत है सरदार॥१७॥

१ इस की पुष्टि के लिए देखिये सोहनलाल द० २ पृष्ठ ३०४ ।

२ प० अर्थात् बुलवा कर ।

३ ये चालीस हजार गाजी वे थे जो अजीमखा की प्रशिक्षित सेना से अतिरिक्त थे । कनिधम ने इन की सख्या बीसहजार बतलाई है । देखिये कनिधम पृष्ठ १६१ ।

४. प० अर्थात् नदी के दोनों किनारों पर । इस युद्ध के दो केन्द्र थे । लुण्डी नदी के दाये किनारे राजकुमार शेरसिंह, हरिसिंह नलुवा और सरदार बुधसिंह मिल कर अजीमखा की राह रोके बैठे थे । अजीमखान ने चमकनी पर डेरा डाल रखा था । नदी के बाये तट पर नौशहरा के निकट महाराजा स्वयं अकाली फूलासिंह और अन्य सरदारों के साथ पहुँच चुके थे । जहागीरा के दुर्ग से भागा हुआ पठानी कटक टीहरी की षहाड़ियों पर मोरचे लगाये बैठा था और लड़ाई छेड़ने के लिए अजीमखा की सहायता की प्रतीक्षा कर रहा था ।

सवैया

कौरसिंह अकाली सो रैन दिने, जाय तुरकन को इह बानी सुनावे ।
 'भज जायो सभे पछताव रहे, सिंह मारेंगे कतल-आम सो पावे ।
 मलेच्छ सुने मन माहीं रिसे, तब तोप के गोले जो बेग चलावे ।
 अतरसिंह के डेरे के सिंह तिहुं, तै पट लग्यो सुरधाम सधावे ॥५८॥

कवित्त

गुलाब सिंह राजा, हरि सिंह, अतर सिंह सभ,
 किरपाराम सो इलाही बख्श तोपां चलाये हैं ।
 करें बहुत जग, तीर गोलियां निशंग मारे,
 भरे अभिमान तुरक मरे अरराये हैं ।
 दूजी ओर आप सरकार, सरदार बहु,
 टीहरी डेरा कर, जुध सो कराये हैं ।
 सिंह हैं बेअन्त, नाहि अन्त ताहि पाइयत,
 लड़ो जोराजोरी किहो सभे समझाये^२ हैं ॥५९॥

दोहा

अटक पार सरकार होई, टीहरी डेरा कीन ।
 फूलासिंह को किह्यो तब, टिब्बी^३ चढ़ो प्रबीन ॥६०॥

१. प० अर्थात् 'भाग जाओ' ।

२. समझाय शब्द से कवि का सकेत उस बातचीत की ओर है जो नदी पार करने के शीघ्र ही उपरान्त पठानों पर आक्रमण करने के लिये महाराजा और सैनिक अधिकारियों के बीच हुई थी । सन्ध्या का समय था और इस बात पर विचार हो रहा था कि आक्रमण अभी किया जाय या प्रातः काल । अन्त में यह निश्चय हुआ कि आक्रमण तुरन्त कर दिया जाय । पुष्टि के लिये देखिये सोहन लाल पृष्ठ ३०४ ।

३. '० अर्थात् पहाड़ी टीला ।

कवित्त

चौहूँ ओर डेरे कीन, नाम वाहगुरु लीन,
 तुरकन को दीन, कर मारे अब धाय के।
 एक ओर पड़तलां सो घोड़-चढ़े डेरे लाय,
 कर्मसिंह ज्वालासिंह शामसिंह आय के।
 मीहांसिंह पड़तल को ऐसे ही बखान कहे,
 लड़ो हठ धार, नाहीं पाछे पग पाय के।
 खुशहालसिंह, दयासिंह, गर्भासिंह रामसिंह^१,
 दुरोनियां के मारने को बढ़ो चित्त चाय के ॥६१॥

दोहा

गर्भासिंह हथियार गहि चढ़यो तुरंग कुदाय।
 तुरकन सो लड़ हैं भले, गाजी होन जो आय ॥६२॥
 और सिंह सो बे अन्त हैं, गिनती कही न जाय।
 वाहगुरु मुख ते जपे, बैठ लवैं दरियाय ॥६३॥

कवित्त

आये तुरक अपार, चढ़े टिब्बी हित धार,
 फूलासिंह पाई सार, सरकार को सुनायो है।
 कीजे आयस निशंग, मारे तुरकां नूँ निहग,
 बने भलो तब ढंग, पली पल में गंवायो है।
 कह पळ्यो सरकार, घड़ी एक धीर धार,
 फेर तलवारन !सों, जंग हूँ मचायो है।

१. इस कवित्त में आये सभी सरदारों तथा कमाण्डरों के नाम महाराजा रणजीत सिंह के फौजी रिकार्ड में दर्ज हैं। देखिये खा० द० रि० बण्डल ११ सम्बत् १६२५। मियासिंह का नाम बण्डल ए० आई० सन १८७५-७७ में है।

फूलासिंह कहे, अब धीर समां नहिं,
तुम आयस जो चेही मार मन में रिसायो है ॥६४॥

दोहा

खुशहोल सिंह लै रजबनां^१, चढ्यो सो मन रिस पाय ।
कंपू^२ को आयस करी, चढ मारो अब धाय ॥६५॥

सवैया

आन पठानन जोर कियो, चल तोप को हिये के साथ ल्यावैं ।
चोफेरे ते घेर लिये सगरे, बहु सिंहन को हथियार चलावैं ।
किन्हूँ तलबार सो बरछा कमान, बन्दूक, संगीन, कटारी सो लावैं ।
मार के खेत करे बहु सिंहन, रहिंदिया^३ को अब बेग भजावे ॥६६॥
तोप पै आन परे जब ही, बहु सिंहन को तिन मार भजायो ।
फूलासिंह कहे ज्वालासिंह सुनो, अब तो लड़ने का समां सुभ आयो ।
हीरासिंह^४ सो टोपी, जो दूर ते देख, तुरंग कुदाय के बेग ही आयो ।
जंग में रंग रंगीन भये, हथियार गहे तो मलेछ भजायो ॥६७॥

१. अङ्गरेजी शब्द रेंजमैन्ट, फ्रामीसी रेंजमैन । ये उम मरकारी सेना के दस्ते थे जो फ्रामीसी अफमरो द्वारा प्रशिक्षित की गई थी । पड़तल शब्द भी अङ्गरेजी पलाटून से बिगड कर बना है ।

२. फ्रा० शब्द है, अङ्गरेजी शब्द “कैम्प” है । महाराजा रणजीतसिंह के रिकार्ड के अनुसार युरोपीय दग से प्रशिक्षित सेनाओं के लिये इस शब्द का प्रयोग किया गया है । इम में तोपखाना, पैदल और सवार सभी प्रकार के सिपाही थे । इन्हें सरकारी खजाने से वेतन दिया जाता था । इस के विपरीत महाराजा की शेष सेना के लिये, जिस के अन्तर्गत जागीरदारों की सेना भी थी, “डेरा” शब्द का प्रयोग किया गया है ।

३. प० अर्थात् शेष ।

४. पं० सोहन लाल के अनुसार हीरासिंह टोपी का नाम महाराजा के प्रसिद्ध सरदारों में आता है ।

बुधसिंह सरदार आयस दे, जमादार सुनो अब तोप चलायो ।
जंबवाली सो लोहट तोप सों, छरटा चलाय के डेरा उड़ायो ।
तुरकन को तब हार हुई, छोड़ तोप गये मन में पछतायो ।
मेवासिंह^१ कुमेदान तोप को संभार^२ देहि सो भारी मचायो^३ ॥६८॥
तीर तड़ाक, पटाक बन्दूक, सटाक कटारी सकीन चलावैं ।
बरछी और सांग^४ सो घोप को घाप^५ भली बिय सो अति जंग मचावैं ।
फूलासिंह को तेज अकाल दियो, हीरामिंह^६ कलू जो मलेछ भजावैं ।
मार भले हथियारन सों, बहु तुरकन को जमधाम पठावे ॥६९॥

कवित्त

परतापसिंह^७ पेख, तोप लै चलै मलेछ,
करो जंग सो वसेख, लड़ो सिहो अब धाय के ।
आये क्रोध ठान, लड़े सूरमे जवान,
मार मार सो बखान, परे सभो ही रसाय के ।
कीनो तुरकन सो जग, मारे तीर सो तुफंग,
कीनो घायल सो अंग, सातो सिंह मुरछाय^८ के ।

१ यह सरदार तोपखाने का अफसर था । इस के अधीन आठ तोपे थी ।

२. तोप की सामग्री ।

३. इस पद के अर्थ स्पष्ट नहीं है ।

४. एक प्रकार की दस फुट लम्बी बरछी ।

५. प० अर्थात् घोपना ।

६. योद्धा ।

७ यह अटारी वाले सरदारों में से था ।

८. एक तोप के लिये सात या आठ तोपची और तीन अधिकारी जमादार, हवालदार और नायक नियुक्त होते थे । देखिये खा० द० रि० जिल्द न० १ पृष्ठ ४ ।

कोप के अटारी वाला परयो सरदार आप,
गये तुरक भाज, हाथ जखम लगाय^१ के । ७०॥

दोहा

हीरासिंह को किहो तिन, अब मारो लल्कार ।
हुए एकत्र परे सिंह जब, तुरक भजे नहि संभार ॥७१॥

कवित्त

एक जो दुरानी आयो, ऊधम मचाय बड़ो,
ज्वालासिंह सिंह ताई खण्डा परहारयो ।
दूजी ओर गिलजन कीं फौज आन परी,
जिन्हें फूलासिंह सैन लै बिडार तुरक मारयो ।
सैकड़े ही मारे, अंग अंग काट डारे,
सो दुरानी तब हारे, भाज चले न संभारयो ।
तोप को छुड़ाये, मार मगरों^२ दबाये,
कहे देख हाय हाय [सिंहां जोर गुर धारयो ॥७२॥

सवैया

आये दुरानी सो सूर बड़ो, राजासिंह तिसै तलवार सो मारयो ।
मार के तुरक वंगार^३ भले, फिर और के सीस सो बेग परहारयो ।
तलवार पै जाय लगी तलवार, सो टूट गई, मन शोक विचारयो ।
फूलासिंह पेखत ही कूद आये परयो, तब तुरकन मार के सिख उबारयो ॥७३॥

१. सरदार प्रताप सिंह के हाथ पर घाव करने का उल्लेख लैपल ग्रिफन ने भी अपनी पुस्तक के पृष्ठ ६८ पर किया है ।

२. प० अर्थात् बाद मे ।

३. प० अर्थात् लल्कार कर, आह्वान कर के ।

दोहा

तोप छुड़ाय लई तबै, मारे तुरक अपार ।
जीवत जो टिब्बी^१ चढ़े, तिन्हीं करत परहार ॥७४॥

कवित्त

कुदाय के किकान परथो मारन पठानन को,
फूलासिंह जग देस देस मशहूर है ।
प्रथम फिरंगी हूँ को पेहा फूँक डारयो^२ जब,
तब ही ते लोगन में भलो जस पूर है ।
मारन दुर्रानियां को चढ़यो है पहाड़ पै,
हाथ लिए खण्डा, मार तुरकन को चूर है ।
कीनो जब वार मार, खण्डा सूत धार,
चली शोणत की धार, सो फवारे की^३ जूर है ॥७५॥

दोहा

गर्भासिंह हथियार गह चढ़यो तुरंग कुदाय ।
तलवारन सो मार के, तुरकन दियो गिराय ॥७६॥

१. प० अर्थात् टीला ।

२. पजाबी मे कच्चे रास्ते के लिए इस शब्द का प्रयोग होता है । 'पेहा फूँक डारयो' सकेत अकाली फूलासिंह की कैप्टन हार्डट (Capt. White) के साथ दिसम्बर सन् १८०६ मे हुई मुठभेड़ की ओर है । हार्डट का अपना प्रतिवेदन पढ़ने से पता चलता है कि उसे तम्बू और दूसरी वस्तुएँ छोड़ कर भागना पड़ा था । उनको तत्पश्चात् फूलासिंह ने या तो लूट लिया या जला दिया था । विशेष वर्णन के लिए देखिए सूची-पत्र तथा लैपल ग्रीफन की "राजाज़ ऑफ दी पजाब" (Rajahs of the Panjab) पृष्ठ १६५ ।

३. अर्थ स्पष्ट नहीं है ।

चौपाई

गर्भासिंह डिगत^१ तजे प्रान । सन्मुख सीस दिये बलवान ॥कर्मसिंह^२ पेखत ही आयो । तुरकन को हथियार चलायो ॥७७॥

सवैया

ताड़ तड़ाक कमान लै बान, जवान पठान को बेग चलायो ।

तिन सिहन जंग कियो भल ढंग, सो मार मलेच्छन को तब घायो ।

पठान के हाथ से गोली लगी, कर्मसिंह तो घायल होय के आयो ।

आन के डेरे प्रान तजे सुरवाम गयो हरनाम ध्यायो^३ ॥७८॥

कवित्त

एक जो दुरानी आये सिंह को तलवार लाये,

लगी है तुरंग जाये और सु चलायो ।

मोढ़े^४ हूँ को मार सिंह कीनो, है बेहाल तिन्ह,

खुशहालसिंह जमादार पेख के रिसायो ।

कोप के पठान को सो मारी तलवार जान,

लागत ही सीस ताई गेद सों गिरायो ।

पेख तुरक और भाज गये तज ठौर,

तब सिख को छुड़ाय मलेच्छन को घायो ॥७९॥

दोहा

ऐसो पौरुख कियो जब, सुजस भयो जमादार ।

सिख उबारयो तुरक हत, कथा चली सुखसार ॥८०॥

१ प० अर्थात् गिर कर ।

२ सरदार कर्मसिंह चहल उच्च पदवी के जगीरदारों में गिना जाता था । इसे १,५०,००० रुपये वार्षिक की जागीर मिली हुई थी और यह जगीर सैनिक सेवा के लिए २५० सवार रखने के बदले में दी गई थी ।

३. इसकी पुष्टि लैपल ग्रीफन पृष्ठ ४३८ से भी होती है ।

४. प० अर्थात् कन्धा ।

सवैया

सरकार सुचेते को ताड़ तबै, फरासीस सो कपू^१ जो संग लिवाये ।
एक ओर सो रजवनसिंह चढे, दूजी ओर दीवान हूँ चन्द सो धाये ।
जंग कियो भल ढंग तबै, पहर इक लौ सार सो सार बजाये ।
फरांसीस फिरगी भी खूब लड़े, बहु तुरकन को जम धाम पठाये ॥८१॥

कवित्त

फरांसीस ने दरैस^२ बाध ठाडे^३ आये टिब्बी ढिग^४,
साहिब सो लोक कहे लड़ो चित्त लाय कै ।
देवासिह मिन्हालिये^५ को हुक्म सो दीनो तब,
पड़तल लड़ाइये तुरक जो रिसाय कै ।
घने तुरक आये, मार मार करै धाये,
तलवारन के साथ कीनो जंग भली भाय कै ।
एक जो दुरानी आये, मारो तलवार भाय,
देवासिह लागी पख, रेहो पछताय कै ॥८२॥

१. यहा कम्पू फ्रासीस(French Brigade) से अभिप्राय वह प्रशिक्षित पैदल सेना से है जो कि फ्रासीसी जनरल वन्तूरा और एलार्ड के अधीन थी । इसमे चार पैदल पल्टने, दो सवारी रजवने (Regiments) और एक तोपखाना शामिल था, सन् १८३८ के वेतन पत्रों के अनुसार इस की कुल संख्या ५४४७ थी । इसमे २६ तोपे भी थी । इसका मासिक व्यय लगभग ८८००० रुपये था । देखिए खा, द. रिकार्ड जिल्द न० १ पृष्ठ ४८ ।

२. अंग्रेजी अर्थ पक्ति में खड़े होना ।

३. प० भली भाँति ।

४. प० पास ।

५. फ्रासीसी कम्पू की एक पलटन का कुमेदान था । देखिए ख. द. रि. जिल्द १, पृष्ठ १६ ।

कवित्त

दलसिंह जो अजीटने,^१ कह्यो ललकार ताहीं,
 मारो तोहे जोर राख आपनी संभार्यो !
 मलेछ सो बखान मारों तोहे रहो दूर जान,
 कोप हठ ठान सो निशानची^२ को मार्यो ।
 पेख सो रिसाय, तब दलसिंह धाय,
 ताई मारी तलवार सीस जुदा कर डार्यो ।
 हौलदार को निशान दे, चढ़ाये सिंह परबत पै,
 लड़ो हठ धार नहीं पाछे को पधार्यो ॥८३॥

सवैया

धाय चढ़े सु रिसाय सभै, मार गोलियां क्रोध कियो अति भारी ।
 मार बिदार सो तुरक घने, बहु सिंह शहीद कियो बलकारी ।
 आय मलेछन जोर के साथ, सो सिंहन को बहु घाय कर डारी ।
 सिंह मुड़े^३ तो अजीटन भाखै, लाहौर है दूर लड़ो हठ धारी ॥८४॥

दोहा

तमक खाय फिर मुड़े सब, लड़े सो हठ मन धार ।
 पाँचों^४ ही पड़तल सबै, मारो मार उचार ॥८५॥

१. ऐडज्यूटेंट (Adjutant)

२. वह अफसर जिस के हाथ में पलटन का झण्डा (निशान) पकड़ा हुआ था ।

३. प्रिंसिप ने भी अपनी पुस्तक में इस अवसर पर सिक्खों के पीछे हटने का उल्लेख किया है ।

४. फौज खास (कम्पू फ्रासीस) में वैसे तो चार पलटनें थी पर कुछ समय के लिए इस में एक अन्य पलटन भी मिला दी गई थी । देखिये लैपल प्रिफन पृष्ठ १२५ । कवि की ऐतिहासिक सूचनार्यें प्रशंसनीय हैं ।

कवित्त

अड़दली भगवान सिंह, हुक्मसिंह हुते पास,
ताहीं मंग लैके गयो तुरकन में धाय के
वीरसिंह^१ साथ केहो सिंहन सो कहो जाय,
भाजे ते कलंक होय, लड़ो सब आय के।
सुन सिंह सो रिसाय, लड़े सभे हरखाय,
एह पलड़ा सो रजबने लड़यो रिसाय के।
तुरकन को मार गाजी दिए हैं विडार,
फरांसीसन की फौज का तुरयो जस छाया^२ के ॥८६॥

सवैया

एक दुर्गनी आय बड़ो, सरधासिंह के ताई तलवार चलायो।
भुज माहीं लगी, नहीं दर्द कियो, फिर तुरक की ओर सों देख रिसायो।
मार तलवार सो तुरक विडार, सो गेद के ज्यों ताई सीस उड़ायो।
कीरत सिंहन माहीं भई, सरधासिंह ने तुरक भली बिद्ध घायो ॥८७॥

कवित्त

मजहर अली^३ तोपां मार जुध सो अपार कियो,
आये तुरक जोर चले तोप को लिवाय के।

१. भगवान सिंह और वीर सिंह के नाम खा० द० रिकार्ड बण्डल न० ११ सम्बत् १८१८ में आते हैं।

२. लड़ाई का परिणाम खालसा सेना के पक्ष में रहना बहुत कुछ जनरैल वन्तूरा के कारण था। इस की पुष्टि शहामतअली की पुस्तक (Sikhs and Afghans) सिख्स ऐण्ड अफगानज' के पृष्ठ १६७ से भी होती है।

३. मजहर अली तोपखाने का अफसर था। इस के तोपखाने में छः तोपें थीं।

बाबेसिंह^१ धाय मारे तुरक सो रिसाय,
 लई तोप मु छुडाय, कियो जंग भली भाय के ।
 जगतसिंह लड़यो, परतापसिंह^२ अड़यो,
 सो दीवानचन्द फौज दिये तुरक सो घाय के,
 गुलाबसिंह घोड़चढ़े^३, लड़े हठ धार बहुत,
 मारत सो गोलियां जो लड़े चित्त चाय के ॥८८॥

शेरोवालिया गुलाबसिंह लड़्यो हठ धार बहुत,
 द्वादश मलेच्छ तिन मारे हैं रिसाय के ।
 दूर से पठान मारी गोली बक्खी^४ लागी आन,
 गयो सुरधाम, गत सूरन की पाय के ।

१. बाबेसिंह से भाव बाबा फूलासिंह के निहग सिंहों से है ।

२. यह अटारी वाले सरदारों में से था ।

३. अमिप्राय बुद्धसवार खास से है । इस डेरे में १३०० सवार थे जिन का वार्षिक व्यय ५,५०,००० रुपये था । इस डेरे की कमान स० गुलाबसिंह कप्ता और दीवान देवीसहाय के हाथ में थी । इस डेरे में दो विशेष गुण थे । प्रथम तो यह कि इस के सब युवक धनी और उच्च कुलों के थे और दूसरे वे निर्भीक तथा अन्य फौजी कार्यों में निपुण थे । इस के कारनामे रोम के बादशाह ज्यूलियस सीजर और नैपोलियन बोनापार्ट की खास सेनाओं की याद दिलाते हैं ।

४. पं. अर्थात् वद्धस्थल ।

मियां 'व्यानसिंह' कहे सिंहन पचार एह,
लड़ो हठ धार पावो मसवी^२ सो आय के ।
राजा है सुचेतसिंह चढ़यो जोरा जोर,
सरकार सुन कहे लड़्यो अति ही सो धाय के ॥८६॥

एक जो पठान आये मार मार करे धाय,
मियां लाभसिंह तांको खण्डा इक मारयो ।
कोप के पठान मार तलवार जान,
लागी भुज पर आन, नाहि दर्द विचारयो ।
ताई तलवार मार कोप के पचार कहे,
मारों तोहे जोर राख आपन सभारयो ।
मार हथियार तुरक दिये हैं विडार,
तिन सुनी सरकार सो दयाल हो उचारयो ॥८७॥

कंगन सो कचन^३ के दिये हैं कृपाल होय,
पेख प्रसन्न कहि बात सत चाय के ।

१. कवि गणेशदास ने इस बात का विशेष ध्यान रखा है कि 'व्यान-सिंह' के नाम के पहले "मियों" और उसके बड़े और छोटे भाईयों 'गुलाबसिंह' और 'सुचेतसिंह' के नामों के आगे "राजा" लिखा जाए। कारण यह कि इन दोनों को स० १८२० में महाराजा रणजीतसिंह ने 'राजा' का और 'व्यानसिंह' को "राजाए राजगान" की उपाधि स० १८२८ में प्रदान की थी। देखिये सोहनलाल द० पृष्ठ २६८ तथा ३४३।

२. फा. मसव अर्थात् पदवी ।

३. महाराजा ने छोटे तोशाखाने सदा अपने साथ रखने का नियम बना रखा था। सरकारी पत्रों में इसे 'बहला तोशाखाना' का नाम दिया गया है। महाराजा जब भी किसी के काम को प्रशसनीय पाते तो 'तुरत दान महा पुण्य' के अनुसार उसे उत्साहित रखने के लिए तत्काल पुरस्कार देते।

“दीरासिंह^१ को बजीर, इन्हें देगे जागीर,
 धारी रिदे अति धीर लह्यो भलो सो रिसाय के ।
 और सो पठान आये सिंहन कोप रिदै धाय,
 फाईर^२ सो लगाय किये जखमी सो धाय के ।
 मारयो कर कोप सो घटाई ताई उपमान,
 कियो है निदान जंग डारयो मुरछाय के ॥६१॥
 हरदाससिंह^३ बानिये बन्दूकन चलाय,
 बहु मारत निशाने तुरक घने हैं बंगार के ।
 बलभद्र^४ सुवीर जमादार तलवार मार,
 सूरमे हकार कीनो जुध सो पचार के ।

१. यह राजा न्यानसिंह का पुत्र था । महाराजा उसे बहुत प्यार करते थे और सदा ‘पुत्र’ या ‘बचडा’ कह कर पुकारते थे । इसी लिए सरकारी पत्रों में इस के नाम के आगे “फरजन्दे खास” लिखा मिलता है । बड़ा होकर बुद्धिमान् और नीतिवान् होने के लक्षण इस में छोटी आयु से ही दिखाई देने लगे थे । यह महाराजा के बाद महाराजा दिलीपसिंह का मंत्री बना । विशेष वर्णन के लिए देखिए सूची न. ५ ।

२. अग्नेज्जी फायर अर्थात् बन्दूक का चलाना ।

३. यह सवार सेना में, जिसका नाम डेरा ‘चार चारी या डेरा नौलखा’ था, एक अफमर था । इसने खलीफा सैयद अहमद वाले पेशावर युद्ध में भी बड़ी वीरता दिखाई थी । देखिये कवित्त न० ३४, ४३ और ५६, पेशावर-युद्ध न० २ ।

४. यह नेपाल का अधिवासी था । पहले-पहल यह महाराजा नेपाल की सेना में सेनानायक रह चुका था । यह बड़ा प्रसिद्ध योद्धा था । नेपाल युद्ध में इसकी कई बार अग्नेजों से टक्कर हुई थी । किसी विशेष कारण से इसे नेपाल सदा के लिए छोड़ देना पड़ा था । वहां से आकर यह महाराजा रणजीतसिंह की गोरखा सेना में कुमेदान के पद पर नियुक्त हुआ ।

गाजी बहुत धाय, मार मार सो मचाये,
तांकी पलटन के धाय, मारयो एकला विचार के ।
और सिंह लड़े, तुरक आगे बहुत अड़े,
गाजी होन को जो खड़े मारे सभे हठ वार के । ६२॥

तुरकन के सग जंग कियो बहुत सिहन,
सो मार के मनेच्छन को किहा 'कहा जाओगे' ।
फूलासिंह जो निहंग सो तुरंग चढ़ कीनो जंग,
मेरे हथियारन की भली मार ग्वाओगे ।
मार तलवारन, सो तुरकन के काट सीस,
आगे ते दुरानी कहे जाने नहि पाओगे ।
आगे ते पठान, मारी गोली ऐसी जान,
सोई लगी पट^१ आन कहे 'भागो' पछताओगे ॥६३॥

लोगन केहो बखान, अज चलो डेरे जान,
लागो घात्रा आन, ताकी कारी कुछ कीजिये,
ताई फिर कहे, अब जावनों न आहै हिये,
सुरधाम पाये सीस सामने जो दीजिये ।
ल्याओ गजराज, लहै हैं तुरकन ते छीन राज,
सोई कीनो काज जो आयस सुनीजिये ।
दन्ती^२ असवार होये, "मारो" ही उचार मुख,
बहुत तुरकन संहार मन अजे नहीं पतीजिये ॥६४॥

सवैया

बेग चढ़यो गज पै तब ही, जाय तुरकन को अति ताई दबायो ।
महावत तो हिये मांहि डरयो, नहि सामने हाथी को पेल चलायो ।

१. पं० अर्थात् रान ।

२ प० अर्थात् हाथी ।

ताही के गरदन तीर दियो, अब आगे चलो नहीं देर लगायो ।
मार मरे के करे प्रभ कारज, नाही डरे मन में हरखायो ॥६५॥

सोरठा

मारे तीर निहंग, तुरक हने अरि जान के ।
फुलामिह कर जग, जस लीनो भल जगत मे ॥६६॥

दोहा

जंजाईल^१ सो पठान, लै मारी गोली आय ।
लागी बक्खी^२ भेद के तनक मूरछा खाय ॥६७॥
तान कमान सो कान लों मारयो तीर निसंग ।
तुरक हने अरि जान के, जस लीनो कर जंग ॥६८॥

सवैया

पाय दुगाड़ा^३ बन्दूक बिखे, तक के सो निशान पठान चलायो ।
फूला सिंह को माथा मा फोड़ गई, तई लगत ही सुरधाम सिंघायो ।
प्राण चले ते बखान एहि रंचक हूँ गज पाछे हिलायो ।
ध्यान धर्यों इत में गुर कां, तब देह को त्याग शहीद हो धायो ॥६९॥

दोहा

फूलासिंह को मार के, भये प्रसन्न पठान ।
अब सिंहन को जीत हैं, मूयो बड़ो बलवान ॥१००॥

कवित्त

फूलासिंह सिंहन में भयो है शहीद एह,
तुरकन को संग जंग कियो जो अपार है ।

१. फा० एक प्रकार की लम्बी बन्दूक ।

२. प० अर्थात् बक्खल ।

३. प० दो गोलीया । उम बड़ी गोली से अभिप्राय है जिस के लग जाने से मनुष्य जीता नहीं बचता ।

और बहुत सिंह जंग गंग अशनान कर,
 पाई मौख पदवी सो भयो जय जयकार है ।
 पंथ पैज राखन को मीस दीनो भली भांति,
 जीत के दुर्गानी जस लीनो सुभ सार है ।
 फरंगी हूँ के जीतन की होती रिम सदा मन,
 आवेगो भुजगी सो शहीद रूप धार है ॥१०१॥

दोहा

फूलासिंह जब मारयो, सुनी सार सरकार ।
 “ऐसो सिंह महाबली, विरला हम दरवार” ॥१०२॥

कवित्त

सुन सरकार कियो क्रोध सो अपार कह्यो,
 सभै सरदार सिहो मारो अब धाय के ।
 निवानसिंह नाम पजहत्था सु बखान तिन,
 मारी किरपान कियो जंग भली भाय के ।
 बहु मुस्ले सो घाये, गाजी होन को जो आये,
 सबै बहिश्त को पठाये मरे सामने जो आय के ।
 पेख सरकार भई किरपाल, ताहुँ सूरमा निहार,
 सो बनावे सरदार भली फौज मगर^२ लाय के ॥१०३॥
 मियां ध्यानसिंह और सिहन लै संग बहु,
 मारे तलवार तीर तुरकन पचार के ।
 राजा जो सुचेतसिंह कीनी कतले आम जाय,
 और सिंह अन्त नाही लड़े हठ धार के ।

१. देखिये सूची ५ । इस ने मुलतान-युद्ध मे भी भाग लिया था ।

२. प० अर्थात् पीछे ।

मियांसिंह^१ पल्टन समेत जाय जंग कर,
मारत मलेच्छन कौ शत्रु निहार के।
कीने बहुत बार, तुरक होर^२ बलकार आये,
मार तलवार गये मूर्छ जिऊ डार के ॥१०४॥

दोहा

तुरकन कीनी हूल तब पल्टन मार भजाई।
हाथ जोड़ सरकार कहे, अब गुरु होय सहाई^३ ॥१०५॥

सवैया

आपन पंथ की रखकर, गुरु गोबिन्दसिंह सुनो सुखदाये।
विरद की लाज पछान रिदै, सिंह आरत जान कृपाल होय आये।
सोहे तुरंग सो नेजा लै हाथ जो, तुरकां नूँ मार के बेग भजाये।
आद अंत जु देवन भीर परे, धार के औतार सदा होय सहाये ॥१०६॥

दोहा

तुरकन कीनो जोर बहु, परतल देई भजाय।
धौंकलसिंह^४ ऊँचे कहे, जाओ नहिं, जग मचाय ॥१०७॥

१. यह पूर्व देश का निवासी और महाराजा की एक पेदल पल्टन का कुमेदान था।

२. प० अर्थात् और।

३. इस दोहे से प्रतीत होता है कि पठानों के आक्रमण के सामने ग्वालसा सेना जमी नहीं रह सकी। इस की पुष्टि प्रिंसिप और सोहनलाल भी करते हैं। इस प्रकार की कठिनार्त का समय इस युद्ध में पहले भी आ चुका है। देखिये छन्द न० ८४। इसी लिये सरकार (महाराजा) के मुख से व्याकुलता में बाहिगुरु से प्रार्थना निकलती है। यह बात उल्लेखनीय है कि हारते हुये भी महाराजा ने अपना जी नहीं छोड़ा और तलवार निकाल कर स्वयं लड़ाई के लिए तैयार हो गये।

४. प. अर्थात् तुरकों को।

५. यह पूर्व देश का अधिवासी था। पहले यह अंग्रेजी सेना में नौकर

सवैया

वीरसिंह^१ लड़यो लै के परतल साथ, सो तुरकन के कई सीस उतारे ।
जब सिंह को बीच में घेर लियो, पटेबाजी करी निकस्यो हठ धारे ।
जोरावर सिंह^२ लड़यो, न डरयो, हने तुरक घने मार मार उचारे ।
जमादार अजीटन होय निसग, तुरंग नेजे लियो मुश्ले जो संहारे ॥१८८॥

दोहा

तोप चलाई बेग सों, गोले चले अपार ।

महताबसिंह कुमेदान जो बहुत मचाई रार ॥१८९॥

सवैया

रछपालसिंह सो मार भले तलवार सो आप दाऊ सरीर बचाये ।
गामने सो मार तलवार ताड़ ताड़ तीन, तुरक सहार फतह तिन्ह पाये ।
.....
लोकन माही भयो जस एहि सूरमा है, मार मार मचाये ।
..... ॥१९०॥

कवित्त

तारासिंह जो सजादा गैडाराम को चढ़ाये,
तब करे बहुत जग, तीर तुपक चलाय के ।
खुशहालसिंह जमादार अड़दली लै संग नाल,
तुरकन को मारे भाल भाले तीर लाय के ।

था, किन्तु यहा से नौकरी छोड़ कर सन् १८११ मे महाराजा रणजीतसिंह की सेना मे भर्ती हो गया और उन्नति करता करता जरनैल के पद पर जा पहुँचा ।

१. महाराजा रणजीतसिंह के पत्र प्रमाणों मे रणवीरसिंह कुमेदान का नाम तो मिलता है परन्तु वीरसिंह का नही ।

२. इसका नाम सन १८११-१२ ई. के कागजों मे राजपूतो की रैजमैट मे मिलता है । उन्नति करता हुआ यह कुमेदान के पद तक पहुँच चुका था ।

३. ये दो पक्तिया छुट्टी हुई है ।

४. प. अर्थात् साथ ।

सुचेतसिंह राजा मिया ध्यानसिंह खड्ग मार,
 सदा राजपूतन की रीत सो रिसाय के ।
 कराय के सो हल्ला^१ भला नेजा तलवार तीर,
 बरछी कटोरी सो बन्दूकन चलाय^२ के ॥१११॥

सवैया

सिंह वेअन्त न अन्त कछु, जो दुरानिया संग सो जंग मचायो ।
 तीर कमान तमाचे जंजाइल, बरछी बन्दूक संगीन चलायो ।
 और उपाय रहौ न जबै, दन्दियां^३, मुक्किया संग काटन धायो ।
 दीन मजहब पै सीख दिये जिसने, सभ बहिश्त गये मनमें हरखायो ॥११२॥

दोहा

सिंहन कीनो जोर अति मारे तुरक अपार ।
 जीवत भाजे तहा जो, बूडे नदी मंभार ॥११३॥
 तोप और घुडनान सां, छर्रे मार उड़ाय ।
 कुछ तोपन मारे घने, कुछ बूडे दरियाय ॥११४॥

१. प. अर्थात् आक्रमण ।

२. यह वह समय है जब लड़ाई परे जोरों पर थी और खालसा सेना के पाँव पठानी बाढ़ के सामने उखड़ गये थे । यह दशा देख कर राजकुमार शेर-सिंह ने नदी के दूसरे किनारे से तोपखाना से पठानों की बढ़ती हुई सेना पर असीम गोलाबारी की । महाराजा ने अत्यन्त भीड़ देख कर अपनी तलवार नगी कर ली और सवार सेना के खास अपने वाले दस्ते और डोगरा सेना के एक दस्ते को आगे बढ़ते हुये पठानों पर आक्रमण करने का आदेश दिया । इस आक्रमण का होना था कि लड़ाई का पासा पलट गया और मैदान सिक्खों के हाथ रहा ।

३. प० अर्थात् दान्त ।

४. प० अर्थात् मुक्के ।

श्री गुरु गोविन्दसिंह जी, भये सो आप दयाल ।
 फतह कियो सो पिशौर को, अपनी कलामो धार ॥११५॥
 सम्बन् अठ दस जानिये और उनासी मान ।
 चैत मास सुभ दिन भयो, पिशौर जीत हठ ठान ॥११६॥
 श्री गुरु पंथ सो जस कद्यो, पढे सुने चित्त लाय ।
 गणेशदास पिगल भने, चार पदारथ पाय ॥११७॥

कवित्त

जीत सरकार सो शहजादे को उचार,
 इहां आवो हम और सभ फतह बड पाई है ।
 लिख पठ्यो शाहजादे शेरसिंह “इहा आये कैसे,
 अजीमखान सामने जो तोपन चलाई है ।
 मारैं प्रातकाल, फतह पाय के सो आवे हम,
 लूट के अजीम आय देगे बन्वाई है ।
 जमादार मोहरसिंह तोपन सो चलावे अब,
 जैमलसिंह अमीरसिंह मारत रिसाई है ॥११८॥

सवैया

कोप के तोप चलाय भली, मार गोले जो बेगे बेग परहारै ।
 तुरकन रात अब घन आये, मूये बहु खेत न नैक संभारै ।
 दूरबीन जो लाय अजीम पैखे, सब गाजी मूए न कोऊ उबारै ।
 तहि ते अब भाज चलो सब ही, जाय काबुल राज करें हित धारै ॥११९॥

१. इतिहास से पता चलता है कि अजीमखा अपनी प्रशिक्षित सेना लेकर आया था, परन्तु यहा आकर उस ने पहले मुलखियों की अप्रशिक्षित सेना को खालसा सेना से लड़ने के लिए आगे भेजा और अपना सेना को पीछे हा रखा । इस से प्रतीत होता है कि अजीमखा को न तो अपने भाईयो पर भरोसा था और न ही मुलखियों पर विश्वास । वह बिना लड़े ही काबुल लौट गया ।

तम्बू कनात लगे ही रहे सभ, भाज गये मन में डर पाये ।
 तोपां इहीं छड़^१ बेग चले, जो शहीदन आन प्रताप दिखाये ।
 कौरसिंह अकाली के सिंह गयो देखन, बेड़ी ल्याय सभी सार पाये ।
 आय शाहजादे सुनाई आही, महाराज सभे वोह भाग पलाये^२ ॥१२०॥

छन्द

आय सार सो दीन जब, नहि साच कोऊ मान है ।
 गयो भाज अजीम पिख, चल देख तबै पछान^३ है ।
 साथ साथी और गये, तंबू तहां खाली पड़े ।
 तब और सिंह अति अन्त जाय सो लूट लिये जो खड़े ॥१२१॥

अजीमखान जो भाज गये, तहि बेगमां मिल्यो कहे ।
 कायर बन्यो जो पलाय आयो, कौन मत लीनी अहे ।
 भेज देता हमन को तुम, थाये लड़ मरती सभै ।
 कलक ते नहि डरयो तू, धृग ज्यूना^४ जग में भये ॥१२२॥
 खाय सोखत^५ बड़ी तब मन मे रिहो मुरझाय के ।
 इत ओर तोप कनात तम्बू, लिये सिंहन जाय के ।
 सरकार और सरदार सभ, आये सो मिल पिशौर में ।
 हिन्दू ब्राह्मण खत्री, धन भाग हम इस ठौर^६ में ॥१२३॥

१. प. अर्थात् छोड़ कर ।

२. प. अर्थात् भाग गये ।

३. प. अर्थात् पहचान ।

४. प. अर्थात् जीना ।

५. फा. अर्थात् जलन ।

६. टीहरी के युद्ध में विजय प्राप्त करने के तीसरे दिन महाराजा रणजीत-सिंह ने विजयी के रूप में पेशावर में प्रवेश किया। वहां जाते ही ढढोरा पिटवा दिया, कि नगर में किसी प्रकार की लूट मार न की जाय। हिन्दू ब्राह्मण,

दोहा

फूलासिंह शहीद होय, आयो तब ही धाय ।
मारयो जाय अजीम को, छिन भर विलम्ब न लाय' ॥१२४॥
अजीम मरन सुन तुरक सभ, रहे सो मन विस्माय ।
मन्दे दिन आये हमें, कैसी करी खुदाय ॥१२५॥
प्रथम शाहजादे को मिल्यो. विनय करी बहु बार ।
रैयत तुमरी हैं सदा, मिलाओ हमें सरकार ॥१२६॥

सवैया

आय मिल्यो सरकार हूँ को, तब यार मुहम्मद सीस निवायो ।
लियो 'कहार' नहिं मार हमें, सभ रैयत हैं इह साँच अलायो ।
और टके तहि दीने घने. पश्मीने सो मेवे रिसाल लिआयो ।
आधीन भयो मुख घास लियो, सरकार दयाल होई भाख सुनायो ॥१२७॥

दोहा

अब निरभय होये रहो, तुम करहौ राज पिशौर ।
आवें हमरे सिंह जो, करो सभन की गौर ॥१२८॥

सोरठा

तब हो सीस निवाय, विनय करी सु बार बहु ।
सरकार दियो सिरोपाव, अब तुम रहो अनन्द सु ॥१२९॥

क्षत्रिय सब ने महाराजा का धन्यवाद किया, कि उन्हो ने उन्हें मुसलमानो की ८०० वर्ष की दासता से छुड़ा दिया ।

१. यह कवि ने बाबा फूलासिंह की आत्मा से अजीमखा को मरवाया है ।
कवि ने यह घटना काव्य रंग में प्रस्तुत की है जैसे पद नं. १०६ और ११५ में ।
बात वास्तव में यह थी कि जब अजीमखा भाग कर काबुल पहुँचा, तो उसे
इतनी लज्जा आई कि वह सहन न कर सका और डेढ़ ही मास बाद मर गया ।

भगवान दास इह सार, आय शहजादे को कही ।
 लै मिल्यो है 'कहार' यार मुहम्मद टके बहु' ॥१३०॥
 विसाखासिह दीवान, और सभै हरखत भये ।
 जीत लिये मुगल पठान, अब चलिये वतन को ॥१३१॥

दोहा

गुरु गोबिन्दसिंह किरपा ते, जीत मलेछन राज ।
 दान दियो अनगिनत ही, कीने सभ सुख काज ॥१३२॥
 आये बेग लाहौर को, मन, तन अति सुख पाय ।
 अमृतसर गये अश्नान को, दियो दान हरखाय ॥१३३॥
 पिशौर जुध पूरन भयो, पढ़े सुने चित्त लाय ।
 गणेशदास पिंगल भने, चार पदारथ पाय ॥१३४॥

इत श्री गुरु खालसे जी का फतहनामा

पिशौरयुद्धसम्पूर्णम् ॥

१. यार मुहम्मदखा जो अपने भाई के आने और महाराजा रणजीतसिंह की पेशावर पर चढ़ाई का समाचार सुनकर भाग गया था । अजीमखों के काबुल जाने पर महाराजा की शरण में पेशावर लौट आया । महाराजा ने निम्नलिखित नियमों पर उसे फिर से पेशावर का राज्यपाल बना दिया—

(क) सुन्दर घोड़ा कहार, जिस का वर्णन कवि ने पहले किया है, महाराजा को भेंट किया जाये ।

(ख) एक लाख दस सहस्र रुपया वार्षिक महाराजा को कर देवे ।

(ग) १००० जागीरदार सेना कभी-कभी महाराजा की सहायतार्थ युद्धों में भाग लेने के लिए रखी जाय । देखिये ज० न० पृष्ठ १५५ ।

पेशावर-युद्ध-२

वचनारम्भ

सैयद अहमद का उपद्रव

टिब्बा टीहरी के युद्ध को अभी चार वर्ष भी पूरे नहीं हुए थे कि इस इलाके में लडाई की आग फिर से सुलगनी आरम्भ हो गई। इस बार सैयद अहमद नामक एक धर्मान्ध पठानों का नेतृत्व कर रहा था। सैयद अहमद का प्रकृत नाम मीर अहमद था और वह बरेली जिले का रहने वाला था। जवानी के दिनों में वह सरदार अमीरखां रुहेला की सेना में सिपाही रह चुका था। अपने साम्प्रदायिक उन्माद के आवेग में वह बाद को देहली आ गया और मौलवी अब्दुलहई तथा मुहम्मद इस्माईल जैसे प्रभावशाली विद्वानों को अपना शिष्य और अपने विचार का बनाने में सफल हो गया। भोली भाली मुसलमान जनता पर भी इस का गहरा प्रभाव पड़ा और वे उसे अपना धार्मिक नेता समझ कर उस की पंक्ति में सम्मिलित हो गये।

सैयद अहमद कुछ समय के पश्चात् शिकारपुर सिंध वाले मार्ग से होता हुआ कन्धार की ओर चल पड़ा। वह जहाँ कहीं भी गया, मुसलमानों को सिक्खों के विरुद्ध जिहाद—धर्म युद्ध—के लिए भड़काता रहा। अत एव कन्धार में जा कर उस ने बारकज़ई सरदारों में अपना प्रभाव उत्पन्न करने का यत्न किया। परन्तु वह अपने अभीष्ट-सिद्धि में असफल रहा। सो वहाँ से लौट कर उसने अब

अनपढ़ तथा धर्म के अन्धे कबायली पठानों की ओर ध्यान दिया । अपने आप को इमाम मैहदी कहने लग गया । परवल्ली, धमतोड़, स्वात, बुनेर तथा यूसुफज़ई इलाकों के पठानों के दल के दल उस के भण्डे तले इकट्ठे होने शुरू हो गये । सैयद अहमद ने उन्हें सिक्खों के विरुद्ध बहुत भड़काया । इस की बढ़ती हुई शक्ति देख कर पेशावर का अधिपति बारक जई सरदार यार मुहम्मदखां भी विवश होकर उसके साथ मिल गया । [नं० २-८]

अफगानी सेना को साथ लेकर सैयद अहमद ने यूसुफज़ई इलाके का दौरा शुरू कर दिया । इस से महाराजा रणजीतसिंह के उन थानों, चौकियों तथा दुर्गों के लिए जो अटक पार के इलाके में थे, डर उत्पन्न होना स्वाभाविक था । अत एव महाराजा ने सरदार हरिसिंह नलुआ के अधीन सेना का एक दल अटक की ओर पहले ही से भेज रखा था, ताकि खैराबाद दुर्ग तथा उसके आस पास के इलाके की रक्षा की जा सके । अब सन्धिवालिये सरदारों की नवीन सहायक जागीरदारी सेना जिस में तीनों भाई अत्तरसिंह, लहनासिंह और बुधसिंह स्वयं भी सम्मिलित थे, अटक की ओर भेजी गई । सरदार बुधसिंह इस दल की कमान कर रहा था । वहां पहुंचते ही उसने नदी को पार कर लिया और खटक कबीला के इलाके अकोड़ा में जाकर डेरे डाल दिये, ताकि शत्रु को खटक तथा खैराबाद के दुर्गों में आने से रोक सके । यहां सरदार बुधसिंह ने अपने नाकों के बचाव का भी कुछ प्रबन्ध कर लिया ।

खटक कबीले का सरदार फीरोजखां तो सन् १८२३ ई० में ही मर चुका था । अब उसके पुत्र अब्बासखां और उस के छोटे भाई के बीच सरदारी के लिए झगड़ा छिड़ पड़ा । पेशावर का शासक यार मुहम्मदखां फीरोजखां के भाई की सहायता पर था और उसने अब्बासखां को अपने पास बन्दी बना रखा था । महाराजा रणजीतसिंह

अब्बासखां को अपने हाथ में रखना चाहते थे। (न १२-१६) सैयद अहमद ने मुलखियों की एक भारी सेना लेकर फीरोज़खां के भाई की सहायता से, जो उस इलाके से भली प्रकार परिचित था, सरदार बुधसिंह के डेरे पर एक रात सहसा धावा बोल दिया। डेढ़ दो घण्टे तक घमासान लड़ाई होती रही। चार सौ से अधिक सिक्ख सिपाही मारे गये। शत्रु की भी पर्याप्त हानि हुई। अन्त में पठानों ने वहाँ से भाग जाना उचित समझा। छन्द १७-२५ में कवि ने इसका विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। वह लिखता है—

आये मता कर रैन पडे, बहु सिहन सग जो जंग मचाये ।
जलियाँ वालियाँ के आय डेरे पर, सभ मार ही मार अवाज सुनाये ॥

आगे चलकर गणेशदास फिर लिखता है—

चार घडी लग जग कियो, तब सिहन मार सो सार बजाये ।
तीर तुपक गोली मारत है, जलियाँवालियाँ के प्रभु आप सहाये ।
भाज चले जब तुर्क, जवे हथियार रहे सुध नाहन पाये ।
तीन घडी रही रैन जबै, तुर्क भाग तवे सो गए पछुताये ॥

चाहे सरदार बुधसिंह की सेना ने पठानों के रात वाले छापे का डट कर सामना किया था और अन्त में अफगानी सेना वहाँ से लौट भी गई थी, तो भी ये लोग सैयद अहमद के भडकाने पर जिहाद का निश्चय किये बैठे थे, अतएव सब ओर से पठान एकत्र हो रहे थे। इस लिए सरदार बुधसिंह ने किसी सुरक्षित स्थान पर चले जाने में ही भलाई समझी, कवि ने इस के लिए त्रास शब्द का प्रयोग किया है (नं० २६)। अगले प्रातःकाल उसने डेरे उठाये और दस मील पीछे हटकर जहांगीरा दुर्ग के निकट अपने मोरचे सुदृढ रूप से स्थापित कर लिये। नं० २६-३२ में हज़रो पर धावा बोलने का जिक्र है। तत्पश्चात् राजा गुलाबसिंह के अधीन राजपूत डोगरा सेना राजा सुचेतसिंह की कमान में खालसा घुड़सवार सेना और

अटारी के सरदार श्यामसिंह, जयसिंह, चतुरसिंह तथा जगतसिंह अपनी-अपनी जागीरदारी सेना लेकर स० बुधसिंह से आ मिले। इन के अतिरिक्त डेरा चारयारी तथा डेरा अरदलियां के सवार भी आ पहुंचे। उस समय कुल सेना की संख्या दस सहस्र के लगभग हो गई। उनके पास दस बारह भारी तोपें भी थीं।

अटक नदी को पार करते समय इस सेना को खैराबाद के समीप एक तंग पहाड़ी रास्ते अर्थात् गीदड़ गल्ले में से होकर जाना पड़ा। तब पठानों ने इस पर आक्रमण करके इसे तंग करना आरम्भ कर दिया। सरदार हरिसिंह नलुआ तथा सरदार श्यामसिंह अटारी वाले की सेना ने बहुत से पठानों को तलवार के घाट उतारा और वे गीदड़गल्ले में से सुरक्षित रूप से होकर सरदार बुधसिंह सिधा-वालिये की सेना से जा मिले। (नं० ३३-४१)

इस बीच सैयद अहमद की सेना की संख्या में भी असीम वृद्धि हो गई। पेशावर-पति सरदार यार मुहम्मदखां भी विवश होकर उनके साथ आ मिला। इस का परिणाम यह हुआ कि खालसा सेना को अपने मोर्चे में बन्द होकर कई दिन तक आत्म-प्रतिरक्षा करनी पड़ी। उन्होंने अपने मोर्चे के आस-पास तोपें तथा जम्बूरक गाड़ दिये और आत्म-प्रतिरक्षा का सुप्रबन्ध कर लिया।

उधर अफगानी सेना के दल अवसर पाकर खालसा के इक्के टुकके डेरे पर छापा मारते और उनकी अर्थ तथा प्राण-हानि कर डालते।

महाराजा को प्रतिदिन युद्ध-भूमि से समाचार प्राप्त हो जाया करते थे। अपनी सेना की इस प्रकार की विवशता देख महाराज ने तुरन्त ही नई कुमक भेजी। उस की कमान राजकुमार शेरसिंह के हाथ में दी गई और सहायता के लिए फ्रांसीसी जरनैल बन्तूरा और उसकी तैयार की हुई पैदल सेना भी साथ भेजी गई। यह सेना रात-दिन

कूच करती हुई अटक के समीप जा पहुंची। जैसे ही शत्रु को नई कुमक के पहुँचने का समाचार मिला, उस ने घेरे में आइ हुई खालसा सेना पर उस सेना के रणभूमि में पहुँचने के पहले ही निर्णायक आक्रमण कर देने का निश्चय कर के आक्रमण कर दिया। (नं० ४४)। इधर कई दिनों की नाका बन्दी के कारण खालसा सेना के पास रसद आदि का अभाव हो रहा था। सरदार बुधसिंह ने दूसरे सरदारों के साथ विचार-विमर्श करने के पश्चात् यह निर्णय किया कि इस प्रकार घेरे में बन्द रहने के स्थान में तो एक दिन अफगानी सेना पर धावा बोल देना चाहिए। इस प्रकार आक्रमण करने का एक कारण यह भी था कि सरदार बुधसिंह की नीति का तीर ठीक निशाने पर बैठा था। तात्पर्य यह कि वह सरदार यार मुहम्मदखां को खलीफा सैयद अहमद के सग से तोड़ने में सफल हो गया था। अन्त में सैदों नामक स्थान पर १४ फाल्गुन को ऐसा भयंकर युद्ध हुआ कि मृतकों और घायलों के ढेर लग गये। (नं० ५०-६८)।

धड़ पै धड़, सीस पै सीस गिरे, सो भयानक जंग कह्यो न जाय।
दास गणेश कहा बरनै, बहु तुर्क हने कछु कीम न पाये॥

सरदार बुधसिंह की नीति सफल हुई। सरदार यार मुहम्मदखां ने खलीफा सैयद अहमद का साथ एकदम छोड़ दिया। मुलखिया अफगानी सेना युद्ध-निपुण खालसा सेना के सम्मुख अधिक देर न ठहर सकी। अबसर पाकर खलीफा और उस के चार चुने हुए सर्वोच्च साथी भाग कर पहाड़ों में जा छिपे। मुलखिया दल, जो सैदों के स्थान पर एकत्र हो रहा था, खालसा सेना ने लगभग सारा ही समाप्त कर दिया। कुछ तो खालसा की असि-धार की भेट हुए

और कुछ भागते समय तीव्र गति से बहने वाले पहाड़ी नाले में डूब कर मर गये। युद्ध की सम्पूर्ण सामग्री खालसा के हाथ लगी।*

महाराजा को जब यह शुभ सूचना लाहौर में पहुँची तो सारे नगर में दीपमाला की गई और हर्षोत्सव मनाये गये। जिन वीर सरदारों तथा सिपाहियों ने इस युद्ध में विशेष शौर्य दिखाया था, उन के लिए पुरस्कार तथा बहुमूल्य वस्त्र तुरन्त ही तोशा खाना से निकलवा कर अटक की ओर भेजे गये।

खलीफा सैयद अहमद अभी भाग ही रहा था कि राजकुमार शेरसिंह और जरनैल बन्तूरा अटक नदी पार करके रण में आ धमके। यार मुहम्मदखां राजकुमार शेरसिंह के सामने पेश हुआ। उसने खलीफा सैयद अहमद का साथ देने का कारण बतलाया और अपने किये पर बहुत पश्चाताप किया। इस पर राजकुमार ने पेशावर प्रदेश का प्रबन्ध उसे फिर से सौंप दिया और स्वयं खालसा सेना के साथ लाहौर लौट आया।

मुलक सभे तुरकान को साध्यो बड़ कर जोर।

आये अपने देश को, सभ ही सिंह बहोर॥

सम्भव है कि पाठकों के मन में यह प्रश्न उत्पन्न हो कि बार बार विजय प्राप्त कर लेने पर भी महाराजा इन पठान सरदारों को उन का देश क्यों वापिस कर दिया करता था। ऐसा प्रतीत होता है कि रणजीतसिंह इस नीति पर चल रहा था, कि जिस समय इन पठान नरेशों की सत्ता जाती रहेगी। तब वह अपना राज्य अटक-पार इलाकों पर स्थापित कर लेगा। १८३१ ई० में जब उसने देखा कि

*देखिये सोहनलाल, दफ्तर दूसरा पृष्ठ ३३८-४०। जफरनामा रणजीतसिंह पृष्ठ १७५, लैपल ग्रिफन पृष्ठ १७ तथा १८६।

अंग्रेजों ने भी इस प्रदेश में सक्रिय रूप से दिलचस्पी लेनी आरम्भ कर दी है, इसने अपनी नीति बदल ली ।

पहले डेरा गाजीखों का इलाका, जो नवाब बहावलपुर को ठेके पर दे रखा था, उस से वापिस ले लिया और जनरल बन्तूरा को वहा का राज्यपाल नियत कर दिया । १८३४ में जब कि काबुल नरेश दोस्त मुहम्मदखां कन्धार में शाहशुजा के साथ युद्ध में लग रहा था तो महाराजा ने अवसर पाकर एक सेना पेशावर को भेज दी और यार मुहम्मदखां को पेशावर खाली कर देने का आदेश दिया । और अपने पौत्र नौनिहालमिह को वहां का राज्यपाल नियुक्त कर दिया ।

पेशावर-युद्ध—२

एक ओंकार सत गुर प्रसाद ।

दोहा

आपे जोत सो धार प्रभु, गुरु खालसा जान ।
गो-गरीब रछपाल को, प्रगट्यो पंथ महान ॥१॥

कवित्त

तीनों लोक पत संतन की रछ कर,
दुष्टन ह विदर हेत रूप नर धार कै ।
अति ही उदार सरकार रणजीतसिंह,
आये कर्तार की रजाय सीस धार कै ।
जीते बहु देस के नरेश वश कीने जब,
लीने मुलतान कशमीर, तुरक मार कै ।
मनकेरा सो पिशौर जीत भये सो अभीत^१
जब बैठ सुधासर^२ सुख पावत अपार कै ॥२॥
संवत बखान सो अटारह सौ तयासी जान,
राजन राजान इह भौत तो उचार्यो ।
बुधसिंह^३ को कहान हल्ला इक विचार,
जाओ अटक के पार, लयाओ घोड़े नहि हार्यो ।

१. 'अभीत' शब्द का प्रयोग कवि ने इस लिए किया है कि सम्बत् १८८३ (सन् १८२६) तक रणजीतसिंह देश के सभी बड़े-बड़े इलाके जीत चुका था और अब कोई नवाब या राजा, जिस स खालसा को भय हो, शेष नहीं रह गया था ।

२. अमृतसर ।

३. सिधावालिया सरदार—देखिये सूची ५ ।

आयस को मान, चढ़यो बेग बलवान,
लियायो जीत के पठान, माया अपर अपार्यो ।
दुआबिये लै सिंह संग चलयो अरविन्दजन,
घोड़े, हथियार संग सैन सो अपार्यो ॥३॥

सवैया

आये जो सैयद दुखन^१ ते कहे मैं अवतार धार्यो जग माहीं ।
नाम मुके मईदी सार सुनो, अर सिंह हमें तेहि मार गवाही^२ ।
काबुल और कन्धार के लोगन, दे उपदेश सो लयाइत वाही^३ ।
होय के गाजी सो बेग चढ़ो, मार सिंहन तोहे फतह सो कराहीं ॥४॥

अडिल

काजी और मुल्लाने सभ मिल्यो कहे ।
सभे हमरी ओर नथावे अब रहे^४ ।
दिन दिन हम को होत सदा नित घाट है ।
होकिसे सुनावे कूक, जो दुख हम बाट है ॥५॥

कुण्डलिया छन्द

फिरका हमारा हुतू, जब भाजत सिंह न लाज^५ ।
अब हमै मारत भूपट सो जिवे बटेरे बाज ।

१ सैयद अहमद वैसे तो जिला बरेली का रहने वाला था, परन्तु वह काबुल जाते समय शिकारपुर के रास्ते से पंजाब के दक्षिण में (सिंध) से हो कर गया था । इस लिए कवि उस का दक्षिण की ओर से आना बतलाता है ।

२. इस पंक्ति का अर्थ स्पष्ट नहीं है । महदी मुसलमानों के ग्यारहवें इमाम का नाम है । इस के आने की भविष्यवाणी हदीसों में मिलती है ।

३. वाही या 'वही' अथवा हुकम जो ईश्वर की ओर से मुसलमान पीर-पैगम्बरों पर उतरती है ।

४. अर्थ स्पष्ट नहीं है ।

५. कवि का संकेत अहमदशाह इब्दाली के आक्रमणों की ओर है । उस

जिवें बटेरेबाज, तिवे हम पै चढ़ आवैं ।
 लूट हमारा देश, छीन पत्त, बेग सो जावैं ।
 खलीफा सब को बचन कहे, वह माते गजराज ।
 परवरदिगार सो मोह को, कर पछ्यो मृगराज ॥६॥

कवित्त

कर दिहो सो तवीत^१, जाते आवौ सभे जीत,
 मन कहो नहिं भीत, चढ़ लड़ो सो रिसाय के ।
 हमें परतीत नाही, कैसे लड़ मारे ताहि,
 सिहन को बाहिगुरु करत सहाय के ।
 कर परतावा दिहो मिटे पछतावा एहो,
 तब ही खलीफा एक हन्तरा बनाय के ।
 काठ की बनाय, बल्टोही^२ को मसाला लाय,
 ता में तिल तेल सो मिठाई कर खवाय के ॥७॥

पेख के हैरान सभ मुगल पठान,
 सो खलीफा कलावान, अब जीते सच जानिये,
 जंतर बनाय कर, डारे सभ के ही गर^३,
 जीत सिंह आवो घर, मुख ते बखानिये ।

समय सिक्खों की सख्या नाम मात्र ही थी । ये मैदान में भली भाँति डट कर लड़ने के ढंग से परिचित नहीं थे और समय पहचान कर इधर-उधर हो जाते थे । मुसलमान इसे सिक्खों का भाग जाना कहते थे ।

१. फा. अर्थात् कवच या तावीज ।

२. प अर्थात् हाण्डी ।

३. इसी प्रकार की एक घटना सन १६७२ ई० में औरंगजेब के समय में हुई थी, जबकि सतनामी साधुओं ने बादशाह की सेना के विरुद्ध विद्रोह करके

सबा लाख गाजी होय देसन से आये सोय,
लाहौर इत बेर पड़े ईद, को सो मानिये ।
आये कर जोड़ कहे पीरन निहोर,
फतह दीजिये हम तोर जीते सिह राजधानिये ॥८॥

दोहा

कुम्भकरण त्रेता विखे, इह वर माग्यो जान ।
खाऊँ मै खट मास को, सोऊँ इक दिन जान ॥९॥

धोरठा

ग्रह सो मत भरमाय, उलट सब्द सोई भयो ।
भोजन इक दिन पाय, सोय रहत खट मास को ॥१०॥

छन्द

तैसे कहत खलीफा मै मृगराज सम ।
सो सिहन को नाम सो उलटा परयो गम^१ ।
ले संग मुगल पठान सो सैयद शेख बहु ।
आये जोर के साथ सो सैन बेअन्त लै ।

उन के दात खट्टे कर दिए थे । शाही सेना में यह बात फैल गई थी कि सतनामियों के पास कोई यन्त्र है जिस के कारण शाही सेना उन का कुछ नहीं बिगाड़ सकती । इस पर औरंगजेब ने अपनी सेना के मन में बैठे हुए सन्देह को दूर भगाने के लिए कुरान शरीफ की आयते लिख कर भण्डे के साथ बाध दी । इस प्रकार औरंगजेब ने अपनी सेना के मन से सतनामियों का भय निकाला ।

१. खालसा राज्य की राजधानी लाहौर को जीत कर इस बार की ईद की निमाज वहा पढ़ी जाएगी । जान पड़ता है कि मुसलमान नेता आरम्भ से ही अपने अनुयायियों की धार्मिक भावनाओं को भड़काते आये हैं ।

२. रावण के भाई कुम्भकर्ण ने घोर तप किया । ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर उसे वरदान दिया । कुम्भकर्ण ने यह वर मागने का सकल्प किया था कि वह

हाथन गहे हथ्यार, सो अली अली कर परे सभ ।
कीन देस महिं द्वन्द्व, सो सुनत सिंह चकवान तब ॥११॥

सवैया

सार सुनी सरकार इहै, इक सैयद आन के शोर मचायो ।
बुधसिंह के साथ सो सिंह घने, जो दुवाविये तो सरदार सुहायो ।
हिम्मतसिंह को तात चढ़यो, किशनसिंह^१ सो फौज बेअन्त ले धायो ।
सिंघ के पार अक्रोड़े के तीर, सो डेरा कियो सुन तुरक सो आयो ॥१२॥

दोहा

फीरोज़ भरात तब आय मिल्यो,^२ बिनय करी हित लाय ।
लै घोड़े देहैं तुम्हैं, डेरा मोड़ हटाय ॥१३॥
सिंह कहत मुड़ना कठिन, अब इहाँ ल्याओ तुरंग ।
फिरोज पूत को मुलक दे, नहि तो कर हैं जंग^३ ॥१४॥

छः मास खाता रहे और काम काज करता रहे और केवल एक दिन मोकर फिर खाना शुरू कर दे । परन्तु वर मागते समय उसके मुख से उलट शब्द निकल गये जिमसे वह बेचारा छः मास तो सोया करता और केवल एक दिन खाने के लिए जाग उठता था । कवि ने यही बात खलीफा सैयद अहमद पर भी चरितार्थ की है । खलीफा ने मौलवियों को बतलाया था कि ईश्वर ने उसे मृगराज बना कर भेजा है और जीत सदा सिंह की ही होती है । मिस्त्रों के गुरु ने पहले ही सिंह अथवा मृगराज का नाम इन्हें दे रखा था । इसलिए खलीफा के साथ भी उलटी बात हुई ।

१. किशनसिंह अपने पिता हिम्मतसिंह की मृत्यु के पश्चात् अपने पिता की तरह एक हजार जागीरदारी सेना का अफसर बनाया गया । देखिए मोहन-लाल द० २ पृष्ठ ३३३ ।

२. फिरोज़ खाँ के पुत्र अब्बास खाँ को पेशावर के राज्यपाल यार मुहम्मद खाँ ने अपने पास बन्दी बना रखा था और खतक के इलाके का प्रबन्ध फिरोज़ खाँ के चचेरे भाई के सुपुर्द था । महाराजा रणजीतसिंह फिरोज़ खाँ के

सोरठा

सुन मानी इह सीस, जाय ल्यायो तुरंग बहु ।
तुम हो हमरो ईस, हम तुमरी रैयत सदा ॥१५॥

कवित्त

दीनो सिरोपाओ सो पिशौर हूँ को जाओ,
बहु अश्व ल्याओ और माया भी अपार है ।
गयो सुन सार सो मुहम्मद जो यार,
भेत आन्यो इतबार, सिंह चार कु इजार है ।
चलो करे जग, मारे सिहा नूँ निसग ।
बने भलो हमे ढग, पीर करे रछपाल है ।
खुदाय की रजाय पाय, लड़ो अब धाय तुम,
लूट लेहै सिहन को, लगेगी न बार है ॥१६॥

सवैया

आये मता कर रैन' परे, बहु सिहन सग सो जंग मचाए ।
जलेवालिया^१ के आये डेरे परे, सब मार ही मार आवाज सुनाए ।
भण्डासिह लड़्यो मुस्ले बहुत हने, तिनहुँ तलवारन साथ गिराए ।
उरनाकसिह गिर्यो, टेकसिह लड़्यो, बुधसिह अड़्यो, तैं मार गिराए ।

छन्द

भागसिह लड़ मुयो, भले हथियार चलाय ।
लड़े कटावहुँ होय, जान को त्रास मिटाय ।

पुत्र की सहायता करना चाहता था । इसलिए वह अन्धास खाँ को छुड़ाने पर जोर देता था ।

१. रात के समय छापा मारने की इस घटना का उल्लेख लैपलग्रिफन ने भी अपनी पुस्तक में किया है । देखिये 'फजाब चीफ्स' पृष्ठ १७ ।

२. जलेवालिया से अभिप्राय सेवासिह जलेवालिया से है ।

३. प० अर्थात् मार-काट ।

छुरी कटारी धार सो बरछे जमधर लाय ।
 अठ सिंहन को मार सो, घायल बीस कराय ।
 पाठ करत पण्डित तहां, विद्याधर तहि नाम सुभ ।
 तलवार मार खडित कियो, सुरधाम गयो गत पाय सुभ ।
 बडी रजबनसिंह जो आये सो पड़े रिसाय ।
 मार मार तुरकान को, कछु घायल भज जाय ॥१८॥

कवित्त

तारासिंह डेरे परे अली अली कर सभे,
 मार आज सिंहन को फतह डंक वाहिये ।
 मार तलवारन कटारन सो लड़े अति,
 वाहिगुरु आप आन करत सहाईये ।
 चार सिंह रहे खेत और सो पड़े अचेत,
 तुरकन को मार काल धार में बहाईये ।
 सिंह हूँ सो कोप कर, मारे तुरक जोरधर,
 सैकड़े ही मुण नहि गिनती सो पाईये ॥१९॥

दोहा

खड़कसिंह^१ मन तमक कर, मारत तुरकन धाय ।
 मलेच्छ अठासी मार के, और सो दिए भजाय ॥२०॥

दोहा

श्री गुरु गोविन्दसिंह जी, सिंहन करत सहाय ।
 तुरक मुये कई भज^२ गए, जय जय सिंह अलाय ॥२१॥

सवैया

चार घड़ी लग जंग कियो, तब सिंहन सार सो सार बजाये ।
 तीर तुपक गोलियां मारत है, जलेवालियां को प्रभु आप सहाये ।

१. तारासिंह के डेरे का एक योद्धा था । इस की वीरता की तुलना के लिए देखिए कवित्त न. ३४ ।

२. प. अर्थात् भाग गए ।

भाज चले जब तुरक सभे, हथियार रहे सुध नाइन पाये ।
तीन घड़ी रही रैन जबै, तुरक भाग तबै सो गए पछताये ॥२२॥

अडिल

मिलखासिह^१ के सिह, लड़े रिसाय के ।
बुधसिह की जो फौज, सो लड़त रिसाय के ।
अतरसिह के सिह, सो मारत धाय के ।
लहनासिह^२ चढ़ धाये, जो क्रोध बढ़ाय के ॥२३॥

तुरक गये पछताय, जो अगला दिन भयो ।
सिहन दूत पठाय, तुरक इकट्ठे भयो ।
दो लाख परमान तुरक मिल आये हैं ।
हो लिखो सार सरकार, जो सिह पठाये हैं ॥२४॥

सवैया

सार पई सरकार इहै, बहु रैन मे तुरक सो जोर के आये ।
पिण्डीवालिया सिहन जग कियो पट सिह हने बहु तुरक सो घाये ।
तारासिह के चार सु सिह मुये, जलेवालिया के अठ सुरग सिधाए ।
वाहिगुरु रछपाल करी, बहु तुरकन मार के वेग भजाये ॥२५॥
उत ओर मलेछ भये इकट्ठे, तो सलाह करी हजरो चढ मारे ।
साथ खलीफा ले तुरक घने, तिबोड़े के पत्तन ताई उतारे ।
आय परे हजरो मध सो, कतलाम करी सब हिन्दू सहारे ।
कंचन मोती सो हीरे जवाहर, लूट करी फिर बेग पधारे ॥२६॥

कवित्त

हरिसिह सुनी सार, हजरो को मार,
चले धायो बलधार रातो रात ही सुहायो है ।

१. देखिये सूची न. १

२. अतरसिह, लहनासिह और बुधसिह सिधावालिया के लिए देखिए सूची न. ५ ।

थोड़े अमवार संग, घोड़े पुने कीनी जंग,
 मार के मलेच्छन को बेग दे भजायो है ।
 कीनी कतल आम, पछु कीनी उपराम,
 वहु पठै जमधाम कोऊ जल मों डुबायो है ।
 सवै परे, सिध पार, कहे मुखों मार मार,
 हरि सिंह सरदार सो मलेच्छन^१ को घायो है ॥२७॥

दोहा

भाजे तुरक 'सुजे' गये, भये इकट्ठे जाय ।
 करत सलाह सो मिल तवै, पुल पर लड़िये धाय ॥२८॥

कवित्त

सिंहन भयो त्रास, डेरा कै जगीरे^२ पास,
 करत गुरु की आस, सदा रखपाल हैं ।
 सिंह रणवाय^३, मानो किले सम भाय,
 बैठ तकड़े सुहाये, कहे तुरकन को मार हैं ।
 मलेच्छन सलाह कर, आये रत पुल पर,
 लड़े अति क्रोध धर, सिंहन विडार हैं ।

१. रात के उपद्रव का जिक्र करते हुए लैपलग्रिफिन ने लिखा है कि बुधसिंह सिधावालिये के लश्कर के ५०० सिपाही मारे गए । पृष्ठ १७ । सैयद अहमद के उपद्रव के विषय में हजरो वाली इस घटना का उल्लेख अन्य किसी इतिहासकार ने नहीं किया ।

२. अकोड़ा युद्ध के पश्चात् म० बुधसिंह भली भांति जानता था कि चाहे मुलखिये भाग गये थे पर वे अवसर पाकर अधिक संख्या में आक्रमण करेंगे । खालसा सेना पहले ही संख्या में थोड़ी थी । इसलिए स० बुधसिंह ने इसी में बुद्धिमत्ता समझी कि पीछे हटकर जहागीरे के पास मोर्चे लगा लिये जाए ।

३. युद्ध में अपने बचाव के लिए व्यूह अथवा लकड़ी और भाड़ियों का गढ़ बनाने से अभिप्राय है ।

तीर तलवार सो बन्दूक कराबीन मार,
जंग कर रग, सिंह हने हत्यार हैं ॥२६॥

दोहा

सिहन मारे तुरक बहु, भाज गये पछताय ।
श्री गुरु गोबिन्दसिंह जी, आप सो भये सहाय ॥३०॥

छन्द

गुलाबसिंह राजान सुनी, बहूत सिंह सो मारे ।
चड़ धायो तब बेग, कहे तुरकान सहारे ।
हरिसिंह ललकार कहे, अब छाडे नाहीं ।
मारे तुरकन जोर, गुरु हम रच्छ कराहीं^१ ॥३१॥

कवित्त

करत सलाह मिल, सहर के बीच लडे,
हरिसिंह कहे, सो मदान भले जंग है ।
खडे चहूँ ओर सो जम्बूरे बीड दीने भल,
तोपां और रहकले सो कीने भल ढंग है ।
गिदड़ गले की ओर, आये हैं मलेच्छ जोर,
मार मार सिहन को करे तेऊ तंग है ।

१. अक्रोड़े के आक्रमण की सूचना जब राजकुमार शेरसिंह को मिली तो उसने गुलाबसिंह और हरिसिंह नलुवा के नेतृत्व में भट नई सेना उस की सहायता के लिए भेजी । इन के पहुँचने से जहागीरे वाली सेना की संख्या दस सहस्र हो गई । इस में बारह तोपें भी थी । पुष्टि के लिए देखिये लैपलप्रिफन पृष्ठ १७ और सोहनलाल द० २ पृष्ठ ३३८-४० ।

२. गिहरगल्ला उस दरें या तग पहाड़ी रास्ते का नाम है जो खैराबाद के निकट से आरम्भ होता है और डेढ़-दो मील तक चला जाता है । जगीरा (जहागीरा) इस से तीन-चार कोस आगे है ॥

आये तुरक लड़े, सिंह सामने जो खड़े,
हथियार जब जड़े लागे सरोनत के रंग है ॥३२॥

कवित्त

गीदड़ सो गले रोक, सिंहन सो लावे भोक,
मारेंगे अखूक^१ बल, आपन संभाल के ।
आये हैं मलेच्छ राज, पंछियन पै परे बाज,
पहले सिंह भाज, फिर लड़े हठ धार के ।
करेगे सु जंग, मारे तीर सु तुफंग,
किरपान चले गंग, लगे जा है सुरग सार के ।
मुचेतसिंह, हरिसिंह और हे गुलाबसिंह,
लड़े होय सामने, सो सूरन पचार के ॥३३॥

दृलासिंह पत सो सपूत हरदाससिंह,
लड़ने को चह्यो, पिख आये तुरक धाय के ।
अस्सी सु मलेच्छ आए, मारे तलवार भाये,
रोकत है ढाल डाहे, जात पछताय के ।
मिरगन के बीच जैसे परै मगराज आय,
डरत न नेक, मारे सभन रिसाय के ।
दाओ आपन बचाय, सुभ खण्डे को चलाय,
तो मलेच्छन को घाय, जस रह्यो तहि छाये के ॥३४॥

दोहा

चटक पटक लट पट लड़्यो, सटकारत तलवार ।
जस लीनो हरदाससिंह, बहुते तुरक संहार ॥३५॥

१. फारसी शब्द खूक अर्थात् अर्थ सूअर ।

२. इस के लिए देखिए टिप्पणी कवित्त ४३ तथा ६२ और उनके नीचे टिप्पणी पेशावर-युद्ध न. १ ।

कवित्त

पटेबाजु करे जंग, ढालन बचाय अंग,
 आप तो निसंग, दाव-पेच कर मार है ।
 तैसे हरदाससिंह चौहुँ ओर ध्यान कर,
 मारे तलवारन सो तुरकन बिडार है ।
 पेख के पठान कहे बड़ो बलवान एहे
 वाहे हथियार ताहे दीने डर डार है ।
 एक ओर खण्डा प्रहारत मलेच्छन को
 बाएँ अग तुरकन को बरछन सों मार^१ है ॥३६॥

दोहा

घाय लगे मूरछित गिरयो, उछ्यो सुचेत सभार ।
 फिर मारत तलवार सो, तुरकन देत बिदार ॥३७॥

सवैया

मार पठान सो बरछा हिये, तब घायल होय सो डेरे में आयो ।
 शामसिंह अटारी सो वाले तबै, चौ भ्रातन हुँ रल हल्ला करायो ।
 एह कह्यो ललकार तिन्हें, अब मारेगे, नहि जान सो पायो ।
 तलवार कटार सो बरछे बन्दूकन, तुरक हने नहि अन्त सो आयो ॥३८॥

१. खालसा वीरों की युद्ध-प्रणाली की प्रशंसा करते हुए मेजर थैकवल, जो स्वयं चिलीयावाले की लड़ाई में भाग ले रहा था, लिखता है “यह लोग बहुत हौसले वाले और शक्तिमान हैं। इन की भुजा में बहुत बल है। जिस समय हमारे (अगरेज़) योद्धा, हाथ में बरछा लिए घोड़ा दौड़ाते हुए अपने पूरे वेग से इन पर आकर वार करते हैं, तो ये लोग विलकुल डरते और घबराते नहीं हैं। ये बर्छे का वार एक हाथ से अपनी ढाल पर रोकते और दक्षता तथा फुरती से दूसरे हाथ से हमारे घुड़सवार पर तलवार का वह प्रहार करते हैं कि या तो उस का बरछा टुकड़े-टुकड़े हो जाता है, या फिर उसका सिर तन से जदा हो कर गिर पड़ता है। (‘सैकण्ड सिख वार’ पृष्ठ २१३)।

दोहा

सिंहन मारे तुरक बहु, डिगे मूरछा खाय।
ज्यों बाढी^१ बन में परत, बिरछन काट गिराय ॥३६॥

कवित्त

गुलाबसिंह राजा, हरिसिंह चढ़ मारत हैं,
बुधसिंह, अतरसिंह लड़त रिसाय के।
अचलसिंह जाय घने, जा मारे तुरकन को,
तारासिंह हल्ला कर दीने सो भजाय के।
शामसिंह, जगतसिंह, चतरसिंह, जयसिंह^२,
लड़े हठ धार सो बन्दूकन चलाय के।
मारे हथियार धार काल में बहाये बहु,
जीत के मलेच्छ जस डंका सो बजाय के ॥४०॥

दोहा

गिदड़ गले ते हार के भाजे तुरक खिसाय।
श्री गुरु गोबिन्दसिंह जी, सिंहन भयो सहाय ॥४१॥

सोरठा

कोऊ दिन पेसो बीत^३, रल तुरकन कीनो मता।
लड़ो सो रिस धर चीत, सिंहन को जीत आवें ॥४२॥

१. पं. तात्पर्य लकड़ी काटने वाले से है।

२. सोहनलाल लिखता है कि अठारी वाले चारो भाईयो ने इस युद्ध मे भाग लिया। विशेष वर्णन के लिए देखिए सूची न० ५।

३. सर लैपलग्रिफन के लेख से भी इस बात की पुष्टि होती है कि खालसा सेना बहुत दिन तक प्रतिरक्षा की लड़ाई लड़ती रही। देखिए 'पञ्जाब चीफ्स' पृष्ठ १७।

कवित्त

सार सरकार में पठाई लिख भली भांति,
 आये तुरक जोर, हम जीते, गये हार वै ।
 चारयारी हरदाससिंह^१ लड़यो रिस धार अति,
 तिन मारे हैं मलेच्छ, गये घायल सो डार वै ।
 और सो अटारी वाले कीनो बहु पौरख है,
 जंग कर हने घने तुरक विडार वै ।
 दोउ लाख परमान, आये तुरक बलवान,
 पछ्यो सिंह सूरु जान, नहीं करत खवार वै ॥४३॥

^२सुन सरकार लिख, पछ्यो उदार होइ,
 देहो सो इनाम हरदाससिंह बानिये ।
 राजन राजान सुचेतसिंह भली मान,
 ताई को चढ़ान जीत बेग तुरक आनिष ।
 खुशहालसिंह जमादार तुरकन बिदार हैत,
 अरदली^३सरकार के जो चढ़े हठ ठानिये ।

१. इस डेरे का नाम 'डेरा चारयारी' इस कारण पड़ा था कि पजाब शब्द यार का प्रयोग मित्र के अर्थ में किया जाता है। हरदाससिंह तथा इसके तीन अन्य मित्र (यार)—रामसिंह, भूपसिंह और चेतसिंह जी बहुत सुन्दर और रूपवान युवक थे—सदा इकट्ठे रहते थे। महाराजा इन्हें बहुत पसन्द करते थे।

इस डेरे की कमान अफसरी राजा सुचेतसिंह को दी गई थी। स० १८२० में इस डेरे के सवारों की संख्या १७०० के लगभग थी।

२. सारी रचना में केवल यही एक कवित्त है जिस के छः चरण हैं।

३. "डेरा अरदली" से तात्पर्य खुले घुड़सवारों की उस सेना से है जो महाराजा ने "डेरा घुड़चढ़ा खास" के साथ साथ तैयार की थी। यह सेना अग्र रत्नक या (बॉडी गार्ड) का पद रखती थी। सन् १८३७ के वेतन-पत्रों में इसके सवारों की संख्या २००० लिखी है।

शेरसिंह और लिख, जाहो सो पिशौर तुम,
 लड़ो हित लाय, नाँह पाछे पग ठानिये ।
 फरांसीस^१ को चढाय, कहि बेग अब जाय,
 तहां लड़ो बल पाय, मारो तुरक राजधानिये ।
 मलेच्छन सो सुनयो कान, आय सिंह बलवान,
 आगे ही सो लड़ो, जान देर न करानिये ॥४४॥

तब सलक कराये^२, तोपां रहकले चलाये,
 सुन सिंह सो रिसाये, कहे तोपन चलाइये ।
 बुधसिंह इत और, करी सलक बहोर,
 यारखान सुन घोर कहे लोगन सुनाइये ।
 देखो साहब रजाय, जट^३ बूट रल आय,
 तोपां सामने चलाय, सुन मरे बिख खाइये ।
 चढ़ो करें जंग, मारे सिहां नू निसंग,
 रिदे भावे एहो ढंग, रातों रात ही सुधाइये ॥४५॥

दोहा

यार मुहम्मद और सब, खलीफा कह समझाय ।
 फज्जर^४ होय चढ़ मार हैं, केतकसिंह रहाय ॥४६॥

१. राजकुमार शेरसिंह और उसके साथ फ्रांसीसी अफसर तथा पैदल सेना के रूप में जाने की पुष्टि सोहनलाल भी करता है। देखिये द० २ पृष्ठ ३३८ से ३४१ ॥

२. फारसी शब्द “शलक” अर्थात् तोप चलाना ।

३. पं० अर्थात् गवार ।

४. यार मुहम्मद का खलीफा के साथ मिल जाने का उल्लेख सोहनलाल (द० २ प्रष्ठ ३४०) और दीवान अमरनाथ (ज० न० पृष्ठ २७५) ने भी किया है। परन्तु बाद को सरदार बुधसिंह नीति से काम ले उसे अपनी ओर मिला

सोरठा

दो लाख परमान, गाज़ी आये हैं सभै ।
केतकसिंह बलवान, मारेगे हम पलक में ॥४७॥

कवित्त

एहो रिदि धार, तब जामनी गुज़ार,
कर मन में विचार, चढो लड़ो हठ धार के ।
डेरे डेरे लियो वंड^१, सभै बरबण्ड^२ चढ़,
खण्ड खण्ड सिंहन को डारे बल धार के ।
ऐसे गण आये बल साहव को पाये,
मारे सिंहन को धाये, एक एक नूँ पचार के ।
अकोड़े हूँ के पास, गढ सिंहन धनायो भल,
ढाय तिन्ह बेग आवं सिंहन को मार के ।

सवैया

आय परे सो मलेच्छ धने नही अन्त, बेअन्त सो फौज लखाये ।
सिंह गये कुछ सार को लेन, तो पाछे लगाये लिये तहिं आये ।
एक ओर तो राजा^३, हरिसिंह है, इक ओर दुआबिये सिंह सुहाये ।
बुधसिंह के संग सो सिंह घने, बीड़ तोपन रहकले बेग चलाये ॥४६॥
शामसिंह अटारी सु वाले सभै, कमरां कस के लड़ना मन भाये ।
चारयारी के जो सरदार, हुते, सो चढ़े सभ ही रिद माई रिसाये ।

लेने में सफल हो गया । इसलिए सम्भव है कि उस ने खलीफा को रात के समय आक्रमण करने की सलाह दी हो, क्योंकि इसके मन में खोट थी । देखिए लैपलप्रिफन पृष्ठ १८६ ।

१. प० अर्थात् बाट लेना ।

२. हि० बलवान् ।

३. अभिप्राय राजा गुलाबसिंह से है ।

पिण्डी वालिये सिंह जो रजवन लौ चढ़ के सभ ही कर जुध सुहाये ।
 लुत्थ पलित्थ^१ करे जुध गन्धन, नैक लड़े किन हूँ किड़राये ॥५०॥

कवित्त

जैसे घट कारी, आवै पौन की हुलारी,
 फौज तुरकन की भारी, पेख सिंह सकुचात हैं ।

कहें कर जोर, गुरु कीजिए बहोर,
 सुख दे हमें तोर, मारे तुरकन की जात हैं ।

तोपन चलावैं, न संकावैं आगे धावैं,
 मूढ़ बान बरखावैं, औ जुझावे निज भात हैं ।

भागे मिल दौड़ ठौर ठौर में गिरत कौर,
 भूली सभ तौर, पीठ और के रिसात हैं ॥५१॥

आवन आकाश उड़ धूर पूर सूर मग,
 हेर के भयान जग देव चकमान हैं ।

जैसे देव दानव मिल, करत सो रार मानो,
 तैसे ही रिसाय आय मुगल पठान हैं ।

सिंह तो रिसाये चढ़े ऐन को बनाय करे,
 गुरु जो सहाय, तब मारे इह खान हैं ।

तोपन चलाय, कई गिरे खाय घाय,
 आवे सामने ही धाय, बड़े सूर हठ ठान हैं ॥५२॥

एक ओर राजे हैं, सुचेतसिंह लड़े उत,
 गुलाबसिंह, हरिसिंह मारें ललकार कै ।

बुधसिंह संग सो दुआबिये लै सिंह बहु,
 शामसिंह अटारी वाले लड़त हंकार कै ।

पिण्डी वाले सिंहन में, सोढ बंस अंस भले,
 फिरमलसिंह^१ नाम लड़यो तुरकन पचार कै ।
 आय के पठान तिन मार्यो हथियार जान,
 लागे घाव मान डिग्यो सोढी उरडार कै ॥१२॥

उठ्यो संभार, कहे मुखों मार मार,
^२फड़ वेग तलवार, सो पठान सीस मार्यो ।
 और सिह आये, सो बन्दूकन चलाये,
 सो तमाचे हूँ बगाहे^३ मार मार सो उचार्यो ।
 दोऊ दल भारे चढ़े दीरघ डरारे,
 कारो दुंदभ नगारे, भेरी बाजत अपार्यो ।
 तुरम तम्बूर ढँफ डफ रयो पूर नूर,
 धूर उड़ सूर छुप होय अन्धकार्यो ॥१४॥

तुपक तबर सो कटार धार मारत हैं,
 तीर तलवार घाओ करे बरछीन को ।
 कर लै तमाचे वज्र गुरज धूप गदा,
 और तरसूल और चलावै कराबीन को ।
 तोपन छलक याकी चलत पलक माहीं,
 भलक तिस आगे भट दलत दलीन को ।
 माच्यो घमसान आन गिरत पठान जवान,
 छुटत परान बहिशत भरे हैं परवीन को ॥१५॥

१. अनुमान है कि फिरमलसिंह हरनपुर के सोढी परिवार मे से एक योद्धा था ।

२. प० अर्थात् पकड़ कर ।

३. प० अर्थात् चलाये ।

चारयारी हरदाससिंह चढ़न सो लग्यो जब,
 मने करे यार तुम बैठो धीर धार कै ।
 राजा है सुचेतसिंह मने कर कहे,
 तहि जखम नवीन खुल जैहैं दुखदार कै ।
 अगों वे सुनाये, होई साहब रजाय,
 लड़ मरे गत पाय, साथ वेदन उचार कै ।
 मानी नाहीं काहू बात, चढ़यो रिसात मन,
 बन्ह^१ के सो फट^२ कस कमर तैयार कै ॥५६॥

दोहा

तुरकन के सन्मुख लरत नैक न मोड़त दीठ ।
 ताकी जननी लाज है, रन में दैत जो पीठ ॥५७॥

छप्पय

बढ़ हठ मन मे धार, चलयो रन सनमुख सोई ।
 दीन मजहब को जंग, करे जस जग मे होई ।
 जीते मुगल पठान, जोर कर तुरक बिदारै ।
 तुरक तेज सो आय, कहैं अब सिंहन मारै ।
 आपन पीर मनाय के, यवन परे सम्बूह रल^३ ।
 तुपक तीर सो बरछिणं तलवार सो मारत हैं प्रबल ॥५८॥

दोहा

यार मुहम्मद और मुगल, संग लै सैन अपार ।
 खलीफा कहत सो कोप कै, अब सिंहन को मार ॥५९॥

१. प० अर्थात् बाध कर ।

२. प० अर्थात् घाव ।

३. प० अर्थात् मिल कर ।

कवित्त

आय तुरक धाय, लड़े सिंहन सो आय,
 अगर्गों^१ तोपन चलाय, घाय खाय आय सामने ।
 कई सिंह मारे, पिख यवन संभारे,
 बड़े दीर्घ डरारे कारे चोटन चलावने ।
 बगछे बन्दूकन कटार धार मारत हैं,
 कटे भट दौहूँ ओर, लड़त रिझावने ।
 रुधर प्रवाह और नदन ज्यों छवि पाय,
 वार ज्यों सियार गिद्ध जोगनी अघावने ॥६०॥

कवित्त

सैदेवाल पिंड^२ तहां अड़तला^३ लैर अकोड़े,
 लड़े तब सिंह मन कोप बल धार के ।
 तीर तुपक चलावे, बहु गोली बरखावे,
 कई सिंह मर जावे, पै मलेच्छन को मार कै ।
 दुंदभ नगारे, मारु बाजत जुझारे,
 कटे रुधर परनाले, सुभर चलत अपार कै ।
 यवन सो कोप कर, मारे तलवार धार,
 सिंह सो विदार, करे घायल सो भार कै ॥६१॥

दोहा

लड़े कटा^४ वढ होय बहु, तुरकन जोर मचाय ।
 बिरद लाज राखी गुरु, आय सो कीन सहाय ॥६२॥

१. पं० अर्थात् आगे से ।

२. पं० अर्थात् गोँव ।

३. पं० अर्थात् आड़ लेकर । ऐतिहासिक घटना यह है कि अन्तिम लड़ाई सैदेवाल नामक गाव मे हुई । पिशावर गेजेटीयर (Gazetteer) सन् १८६७-६८ पृष्ठ ६६ ।

४. पं० अर्थात् मार काट ।

छापय छन्द

आये शहीद सो खरे, मार तुरकान संहारै ।
 पिंडो बाहर काढ^१ कतल कर^२ भोई ते डारै ।
 सुचेत सिंह राजान लड़यो रण सम्मुख होई ।
 मारे मुगल पठान ताई सुध रही न कोई ।
 गुलाब सिंह राजा कोप्यो सैना सहित सो लड़यो अति ।
 हरिसिंह लै फौज लड़, तुरकन डारी विपत्ति ॥६३॥

कवित्त

बुधसिंह अतरसिंह, लहनासिंह लड़े बहु,
 दुआविये जो सिंह संग मारे तुरकान को ।
 शामसिंह जयसिंह कोप कर मारत मलेछन को,
 किशनसिंह^३ अचलसिंह नेजा मार तान को ।
 पिण्डी वाले सिंह और रजबन बाहे फट,
 बड़े ढट गिल्जे आये, मारे हठ ठान को ।
 सटक पटक चट शब्द भकार होत,
 रुधिर की नदी वग^४ चली धुर^५ थान को ॥६४॥

१. प० अर्थात् निकाल कर (गाँव से बाहर निकाल कर) ।

२. प० अर्थात् भूमि ।

३. पं० इस युद्ध में अद्वितीय वीरता दिखलाने वाले जिन सरदारों के लिये महाराजा ने लाहौर से खिलअते भेजीं, उन के नाम दरबारी इतिहासकार सोहनलाल ने भी यही दिये हैं जो इस कवित्त में आये हैं ।

४. प० अर्थात् वह चली ।

५. प० अर्थात् अन्तिम ।

सवैया

पाय रजाय जो साहब की, गुरु आप सहायक सिह्न आये ।
ताई शहीदन तुरक घने हन, मार विदार मलेच्छ गिराये ।
धड़ पै धड़^१ सीस पै सीस गिरे, सो भयानक जंग कह्यो न जाये ।
दास गणेश कहां बरनै, बहु तुरक हनै कुछ कीम न पाये ॥६५॥

दोहा

मारे तुरक अनेक तहिं, जल महिं कुछ डुवाय^२ ।
फतह भई श्री खालसे, मलेच्छन मुये बिललाय ॥६६॥

सोरठा

भजे तुरक दुख पाय, घास गहित गहि दन्तधर ।
फिर नहिं लड़ने आये, कसम पीर, रैयत बसै ॥६७॥

दोहा

श्री गुरु सिह्न जस घनो, है बरनन ताई अपार ।
गनेशदास पिंगल भने, दीने दुष्ट विदार ॥६८॥

छन्द

तम्बू तोप^३ कनातां सभ ही तज गये ।
लूटे सिह्न जाय, तुरक भजत भये ।
यार मुहम्मद कहत सो मैं सरनी परा ।
दाम देहौं सद बसौं सभैं तुम ही धरा ।

१. इस भयानक दृश्य का वर्णन करते हुये सोहनलाल लिखता है
“सरकरदगान मिस्ल बादश्रो बर्क शताफता खिरमने ह्यात हजार रा बा
आतशे फनाह सोखतन्द” द० २ पृष्ठ ३४० ।

२. दीवान अमरनाथ ने भी हजारों मुलखियो का नदी मे डूबना लिखा
है (देखिये ज० न० पृष्ठ १७५) ।

३. सोहनलाल भी लिखता है कि पठानो की छः तोपे महाराजा की
सेना के हाथ लगीं । (पृष्ठ द. २ ३४०) ।

खलीफा दै उपदेश बहु, लै आया था लड़न को ।
काबुल गयो सो भाग, हम गद्दी ओट तुम तरन को ॥६६॥

दोहा

शेरसिंह चढ़ शेरवत् धमक सुनी तुरकान ।
खुशहाल सिंह जमादार है, अड़दली सिंह बलवान ॥७०॥

कबित्त

और फरांसीस सो महेश हैं अनीश बहु,
अटक के पार होइ धूम सो मचाय के^१ ।
शेरसिंह सग फौज चढ़ी है बे अन्त तब,
अस्व सो जोय लूट लिये ताई जाय के ।
गद्दे दन्त घास, तुम छाडो, हम दास,
नहिं जीवन की आस अब हूजिये सहाय के ।
लीने हैं तुरंग पशमीने लूट घोड़े बहु,
माया सो अनन्त लई रिदै हरखाय के ॥७१॥

दोहा

मुख सभै तुरकान को साध्यो बड़ कर जोर ।
आये अपने देश को सब ही सिंह बहोर ॥७२॥

सोरठा

सिंहन को जस सार, बरनन कीनो है सुखद ।
पिंगल शुद्ध सचार, पढ़े सुनें सुभ मत लहे ॥७३॥

इति श्री फतहनामा पिशौर-युद्ध वर्णनम् ।

तृतीयो अध्यायः सम्पूर्णः^२ ॥

१. नई सहायक सेना युद्ध के उपरान्त पहुँची थी। पूर्वापर सबन्ध के लिये देखिए कबित्त ४४ पक्ति ३-५ ।

२. इस रचना में खलीफा सैयाद अहमद का खतक इलाका (अकोड़ा)

मे मचाया हुआ उपद्रव कवि गणेशदास ने कविता में वर्णित किया है। वैसे तो यह कविता मुलतान युद्ध और पेशावर युद्ध की तरह पूर्ण ही प्रतीत होती है परन्तु इसके अन्तिम शब्द प्रकट करते हैं कि जो पांडुलिपि हमारे हाथ लगी है वह पूर्ण नहीं है, प्रत्युत इस काव्य का कुछ अंश अभी ऐसा है जो हमारी दृष्टि में नहीं आया। अन्तिम शब्द ये हैं—इति श्री फतहनामा पेशावर-युद्ध वरनन तृतीयोऽध्यायः सम्पूर्णः—जिस से प्रकट होता है कि काव्य का जो भाग हमारे हाथ में है, वह मध्य का भाग है। दो इसके पहले और कुछ इसके उपरान्त के भाग हैं जो हमारी पांडुलिपि में नहीं हैं। इस बात को हम पूर्णतया अनुभव नहीं कर सके क्योंकि इस काव्य का आरम्भ वैसा ही है जैसा कि दूसरे दो काव्यों का। यह आरम्भ देवी की स्तुति के साथ होता है। इसके अतिरिक्त जो काल (सम्बत् १८८३ वि०) कवि गणेशदास ने छन्द न० ३ में खलीफा सैयद अहमद के विद्रोह का दिया है, वह ऐतिहासिक दृष्टि से ठीक है। और इससे पूर्व किसी भी प्रकार का सैयद अहमद का उपद्रव महाराजा की राजधानी अथवा उसके निकट कभी भी नहीं हुआ। इसलिए खलीफा सैयद अहमद के विषय में जो कुछ इस काव्य में लिखा गया है, इससे पूर्व और कुछ नहीं हो सकता। इसलिए हमें वर्तमान छन्दो (न १ से ७३) से पहले किसी अन्य छन्द या अध्याय होने की आशा नहीं है। प्रारम्भ की ओर से तो इसके अपूर्ण होने की कोई सम्भावना भी देख नहीं पड़ती। परन्तु अन्त में यह अवश्य अपूर्ण प्रतीत होता है क्योंकि सैदेवाल के स्थान पर खलीफा सैयद अहमद जब हार कर भाग जाता है तो इसके विद्रोह का अन्त नहीं हो जाता, वरन् इस घटना के तीन वर्ष बाद वह समय-समय पर सिकखों के विरुद्ध लड़ता और जिहाद (धर्म-युद्ध) करता रहता है। अन्त में सन् १८३० ई० में सिकखों के साथ लड़ता हुआ रणभूमि में मारा जाता है। तभी उसका उपद्रव बन्द होता है। सम्भव है कवि गणेशदास ने इन पिछली घटनाओं का भी वर्णन किया हो या वह करना चाहता था और पिछले अध्याय का सम्बन्ध खलीफा के बाकी बचे तीन वर्षों की कार्यवाहियों से हो, और वे हमारी दृष्टि से नहीं गुज़रे।

अब रहा प्रश्न पहले दो अध्यायो का । हमारे विचार मे इस प्रकार के कोई अलग अध्याय नहीं हो सकते । हों यदि इस कविता को (छन्द १ से ७३ तक) कहीं अध्यायो मे बाँटा जा सकता है तो छन्द न० २७ या २८ पर पहला अध्याय और छन्द न० ४१ पर दूसरा अध्याय तथा ७३ पर तीसरा अध्याय समाप्त हो जाना चाहिये था । परन्तु यह बात भी नहीं जँचती, क्योंकि स्वयं गणेशदास इतनी छोटी-छोटी बातों की ओर ध्यान देने वाला है कि वह इस प्रकार की भूल नहीं कर सकता । सम्भव है यह भूल हमारे लिपिकार की हो ।

परिशिष्ट

सूची पत्र नं०—१

महाराजा रणजीतसिंह के समय में सरकारी आय (भूराजस्व या मालिया) और दूसरे साधनों द्वारा इस प्रकार थी —

१ भूराजस्व (जमीन का मालिया)—

(क) लाहौर प्रान्त	१,१४,६४,२२१ रु०
(ख) मुलतान	२७,२६,३०० रु०
(ग) काशमीर	२१,१५,५६० रु०
(घ) पेशावर	१२,२१,६३० रु०

कुल जोड़ १,७५,२७,७४१ रु०

२. नजराने (भेंट द्वारा)—

(क) नजराने मुशख्खसी (निदानित)	२,८१,५५७ रु०
(ख) नजराने गैर-मुशख्खसी (अनिदानित)	३,२२,१०० ,,
जोड़	६,०३,६५७ ,,

३. सायरात इत्यादि—

(क) सायरात (माहसूल)	६,८०,३०३ रु०
(ख) आबकारी (मदिरा कर)	८,६६६ ,,
(ग) रसूमात (प्रथाएँ)	७८,६६० ,,
(घ) नमक की खान से	४,६३,६७५ ,,

सर्वयोग १५,३१,६३४ रु०

४. (क) खिराज पहाड़ी रियासतों से— १२,५०,००० रु०

(ख) जागीरों के रूप में दी गई जमीनों से (लगभग) ६१६६,००० ,,

कुल जोड़ ३,२१,३६,०३२ रु०*

टिप्पणी :—महाराजा रणजीतसिंह के समय में प्रचलित सरकारी सिक्के

*यह आकड़े प्रोफैसर सीताराम कोहली कृत “महाराजा रणजीतसिंह” हिन्दुस्तानी इकेडमी इलाहाबाद, स० १९५६ में से लिए गए हैं। (देखो पृष्ठ १४४)

(Standard Coin) को जरब “नानक शाही अमृतसरिया” के नाम से पुकारा जाता था। इस में ग्यारह माशे और दो रत्ती चान्दी रहती थी।

सूची पत्र नं०—२

खालसा सरकार के वार्षिक व्यय की तालिका—

(१) खर्च हजूरी	४,००,००० रु०
(२) सरकारी महल खास	४१,००० ,,
(३) आव भगत पर (जियाफत)	१,५०,००० ,,
(४) कारदारों के लिए वेतन	२,५१,००० ,,
(५) धर्मार्थ	१,२०,००० ,,
(६) जागीर अहलकारान	६,६७,००० ,,
(७) रोजीना दारों का वेतन	७,६०,००० ,,
(८) अमला (सेवक गण) का वेतन	१,२५,००० ,,
(९) शाहजादों की पेंशन (काबुल, पिशावर तथा मुलतान के नवाबों के लिए)	१,५५,००० ,,
(१०) इनाम तथा खिलअत पर	३,२०,००० ,,
(११) गुलाबखाना	२,००० ,,
(१२) अस्तबल घास पर	५,००,००० ,,
(१३) अनाज के भण्डारों आदि पर	१,५०,००० ,,
सर्वयोग	३३,७०,३०० *

टिप्पणी :—यदि इस व्यय में सेना का व्यय और आय का वह भाग जो जागीरों के रूप में दिया हुआ था भी जोड़ दिया जाए तो सारा व्यय २,३३,०२,३०० रुपए होता है।

सूचीपत्र नं०—३

महाराजा रणजीतसिंह की मृत्यु के समय
(१८३८-३९) सेना की सूची

निम्नलिखित आंकड़े प्रोफ़ेसर सीताराम कोइली कृत महाराजा
रणजीतसिंह १६५६ पृष्ठ १६६ से दिए गए हैं ।

न०	व्यौरा	संख्या	वार्षिक वेतन
१.	कवायददान—(अ) प्यादा	२६,६१७	२७,३१,६२० रु०
	(आ) रिसाला	४०६०	१०,८४,५०० रु०
	(ई) तोपखाना	४५३५	३,६४,८७२ रु०
		<u>३५,२४२</u>	<u>४२,११,२६२ रु०</u>
२.	सवारी—(अ) डेरा सरदारों	६५६५	२५,३२,५६८ रु०
	(आ) घुड़सवार खास	१२००	६,३६,१४६ रु०
	(ई) डेरा जागीरदारान	३४००	१६,००,००० रु०
		<u>१४,१६५</u>	<u>४७,६८,७१४ रु०</u>
३.	दुर्ग सेना	१०,०००	६,००,००० रु०
४.	यूरोपियन अफसरों के वेतन		२,००,००० रु०
५.	मैगजीन आदि के सामान की खरीदारी		<u>८,००,००० रु०</u>
	सर्वयोग	५६,४३७ नफरी	१,०५,८०,००६ रु०

सूचीपत्र नं०—४

सम्भव है कि इस छोटी सी पुस्तक के पाठकों के मन में इस बात को जानने की उत्सुकता उत्पन्न हो कि महाराजा रणजीत सिंह अपने वीर सैनिकों और अधिकारियों को क्या वेतन देता था। इनकी इस इच्छा-पूर्ति के उद्देश्य से नीचे एक सविस्तर सूची दी जाती है। यह सूची महाराजा-प्रशिक्षित सेना के लेख-पत्रों से तैयार की गई है।

पद	प्रारम्भिक वेतन (प्रति मास)	अन्तिम वेतन (प्रति मास)
१. सिपाही	७ रु०	८½ रु०
२. सारजैन्ट	८ ”	१२ ”
३. नायक	१० ”	१२ ”
४. हवालदार	१३ ”	१५ ”
५. जमादार	१५ ”	२२ ”
६. सूबेदार	२० ”	३० ”
७. मेजर	२१ ”	२५ ”
८. एडजूटैन्ट	३० ”	६० ”
९. कुमेदान	६० ”	१५० ”
१०. करनैल	३०० ”	३५० ”
११. जरनैल	४०० ”	४६० ”

नोट—यहां यह बता देना अनावश्यक न होगा कि उस समय एक फौजी जवान के खाने का मासिक खर्च दो रुपये से अधिक नहीं था। विशेष वर्णन के लिए देखो लेखक का लेख 'इंडियन हिस्टारिकल रिकार्ड्स कमीशन प्रोसीडिंगज़' नं० ३१ जनवरी १९५५।

सूचीपत्र नं०—५

इस सूची में केवल उन दरबारियों तथा फौजी अफसरों के नाम दिये गये हैं, जिन का उल्लेख कवि गणेशदास की इन तीन कविता-संग्रहों (फतहनामों) में है। टिप्पणों के अधिक लम्बा हो जाने के कारण इनका वर्णन वहां पाद-टिप्पणों में नहीं किया जा सका।

१. खुशहालसिंह जमादार—यह मेरठ जिले का निवासी आर जाति से गौड़ ब्राह्मण था। दीन-अवस्था में लाहौर आया और साधारण प्यादा सिपाहियों में भरती हो गया। सुन्दर रूप तथा अच्छी आकृति के कारण महाराजा इसे बहुत पसन्द करते थे। उन्नति करते-करते वह ड्योढ़ी-अफसर के पद तक जा पहुँचा। यह एक बहुत ही उच्च पद था। इस पद पर रह कर उसने अपना प्रभाव बढ़ाया और धन-संचय किया। मिश्र दीवानचन्द को यह जमादार एक आँख नहीं भाता था। मिश्र दीवानचन्द का, एक उच्च सेनाधिकारी होने के कारण, बहुत प्रभाव था। इसलिए उसके कहने से मुलतान युद्ध के पीछे (सं १८१८) खुशहालसिंह को उसे ड्योढ़ी-अफसर के पद से पृथक् कर दिया गया। परन्तु उसकी सेवाओं को सम्मुख रखते हुए उसकी जागीरे उससे वापिस न ली गई। यह सन् १८४४ ई० में मरा।

२. सरदार तेजसिंह—यह उन्नति करते-करते जरनैल के पद पर पहुँचा था और इस पर प्रथम [सिक्ख-अंग्रेज युद्ध में लाहौर दरबार से द्रोह करने का अभियोग लगाया जाता है। यह जमादार खुशहालसिंह का भतीजा था।

३. मिश्र दीवानचन्द—यह पश्चिमी पंजाब के अन्तगत गुजराँवाला जिले के गौदलाँवाला गाँव के एक निर्धन ब्राह्मण घराने

में पैदा हुआ। यद्यपि यह बाल्यावस्था में शिक्षा प्राप्त नहीं कर सका था, तो भी विधाता की प्रदान की हुई सूझ-बूझ तथा बुद्धिमत्ता के कारण यह एक साधारण गोलान्दाज से उन्नति करता-करता तोपखाने का मुख्याधिकारी बन गया। काश्मीर मुलतान तथा मनकैरा की विजयों में इसका विशेष भाग था। इसके परिणाम स्वरूप महाराज ने इसे भारी जागीर प्रदान की तथा “जफ्फरजंग बहादुर” और फतह-व-नुसरत-नसीब” की उपाधि प्रदान की। यह सन् १८२५ में कौलज के रोग से मरा।

४. दीवान मोतीराम—महाराजा के प्रसिद्ध तथा उच्चकोटि के जरनैल मोहकमचन्द का पुत्र था। सन् १८१४ ई० में पिता के स्वर्ग-वास के पश्चात् पैतृक जागीर और सेना का स्वामी बना। यह काश्मीर तथा जालन्धर द्वाबा का प्रशासक रहा। दीवान मोहकमचन्द की सेवाओं की प्रशंसा करते हुए सरलैपलग्रिफन लिखता है—
“जरनैलों में मोहकमचन्द अधिक योग्य था। काफी हद तक यह छसी की वीरता, साहस तथा सैनिक सूझ-बूझ का परिणाम था कि रणजीतसिंह पंजाब में एक विशाल राज्य स्थापित करने में सफल हुआ।”

५. दीवान रामदयाल—यह दीवान मोतीराम का पुत्र था। वीरता और युद्ध-विद्या में अपने दादा मोहकमचन्द की तरह बेजोड़ था। छोटी आयु में ही सेना में एक उच्च पद पर सुशोभित हुआ। अठाईस वर्ष की आयु में ही हजारे की लड़ाई में मारा गया। सर लैपल ग्रिफन वीरता में इसकी तुलना सरदार हरिसिंह नलुवा से करता है।

६. सरदार हरिसिंह नलुवा—महाराजा का प्रसिद्ध जरनैल था। वीरता और निर्भयता में अनुपम था। कुछ समय के लिए

काश्मीर और हजारा का प्रशासक भी रहा। सन् १८३७ ई० में जमरोद के युद्ध में शत्रु की गोली से वीर-गति को प्राप्त हुआ।

७. अकाली फूलासिंह—एक साहसी और निर्भीक योद्धा था। यह और इसका अकाली जत्था जिस युद्ध में भी भाग लेता उसका पाँसा पलट देता। महाराजा रणजीतसिंह की सेना में अकाली फूलासिंह सन् १८१०-१२ ई० के लगभग भरती हुआ। इसका नाम महाराजा के सम्बन्ध १८६६ वि० के सैनिक वेतन-पत्रों में मिलता है। अंग्रेजों के साथ इसे स्वाभाविक वैर था और यह अंग्रेज इलाके पर बहुधा छापे मारा करता था। पहली बार सन् १८०६ ई० में अमृतसर नगर में चार्ल्स मटकाफ के हिन्दुस्तानी सिपाहियों के साथ इसकी टक्कर हुई। उसके उपरान्त शीघ्र ही दिसम्बर १८०६ ई० में मिस्टर वाईट के साथ पत्तोकी के स्थान पर इसकी मुठ-भेड़ हुई। यह टीहरी के युद्ध में सन् १८२३ ई० में वीर-गति को प्राप्त हुआ।

८. सरदार फतहसिंह अहलूवालिया—अहलूवालिया मिस्ल का सरदार था। आरम्भ में ही महाराजा रणजीतसिंह ने इसके साथ मित्रता गाँठ ली और 'पगड़ी-बदल-भाई' बन गया। इसके पास बहुत बड़ी सेना और भूमि थी। वर्तमान रियासत कपूरथला के महाराजा इसी वंश से सम्बन्ध रखते थे।

९. सरदार शामसिंह, स० जगतसिंह, स० जयसिंह, स०

प्रतापसिंह, स० चतुर सिंह—ये सब सरदार अटारीवाले सरदारों के प्रसिद्ध वंश से हैं। इन में से प्रत्येक सेना तथा जागीर का स्वामी था। शौर्य और युद्ध-कौशल में ये एक दूसरे से बढ़-चढ़ कर थे। परन्तु इनमें सब से अधिक प्रसिद्ध और साहसी योद्धा शामसिंह था। वह सुबराओं के युद्ध में (१८४६ ई०) लड़ता हुआ वीर-गति को प्राप्त हुआ। कुँवर नौनिहालसिंह का विवाह इसी की पुत्री से

हुआ था। स० शामसिंह के पास २,५०,००० रुपये वार्षिक की जागीर थी।

१०. सरदार बुधसिंह, स० अतरसिंह, स० लहनासिंह—ये सन्धांवालिया के प्रसिद्ध घराने में से थे। उच्च पदवीधारी और जागीरों के स्वामी थे। महाराजा के निकट संबन्धी होने के कारण इनकी जागीरें सब से बढ़ कर थीं। और दरबार में इनका बहुत आदर-सत्कार था। ६,००,००० रुपये वार्षिक से अधिक इन सरदारों की जागीर थी।

११. सरदार देसासिंह मजीठा, स० लहनासिंह, स० महताबसिंह—ये सरदार मजीठा जिला अमृतसर के प्रसिद्ध घराने से सम्बन्ध रखते थे। सरदार देसासिंह महाराज के समय में काँगड़े का राज्यपाल नियुक्त किया गया था। यह बड़े ठाठ-बाट से रहा करता था। सन् १८३२ ई० में मृत्यु को प्राप्त हुआ। स० लहनासिंह इसी का पुत्र था और पिता के मरने पर काँगड़े का राज्यपाल नियुक्त हुआ। लाहौर दरबार के सभी सिक्ख सरदारों में से केवल यही एक अधिक पढ़ा-लिखा था। यह गणित, ज्योतिष, और विज्ञान में विशेष रुचि रखता था। महाराज ने इसे “कैसरलइक्तदार” की उपाधि दे रखी थी। तोपे बनाने का कारखाना इसी के अधीन था। इसने एक ऐसी घड़ी बनाई थी, जिसमें समय के अतिरिक्त महीने के दिनों और चन्द्र के बढ़ने-घटने का भी पता चल जाता था। महताबसिंह भी एक बड़ा योग्य सरदार था और सेना में उच्च पद पर नियुक्त था। मुलतान की लड़ाई में इसने बड़ी वीरता दिखाई थी।

१२. मिलखासिंह थिपूरिया—यह सरदार “मिलखासिंह रावलपिंडी वाला” के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह अपने समय का

बहुत प्रभावशाली सरदार था। इसकी रियासत की राजधानी रावल-पिण्डी थी। रियासत की वार्षिक आय तीन लाख रुपये के लगभग थी। रावलपिण्डी नगर के राजा बाजार में अब तक इसकी समाधि विद्यमान है। इसके पश्चात् इसका बेटा सरदार जीवनसिंह रियासत का स्वामी बना। परन्तु जब सन् १८१४ ई० में यह मरा तो रणजीतसिंह ने इसके उत्तराधिकारियों को जागीर देकर रियासत को लाहौर के राज्य में और उसकी सेना को ज्यों की त्यों अपनी सेना में मिला लिया। इसी लिए सेना का नाम भी “डैरा रावलपिण्डी” अथवा “डैरा मिलखासिह” ही प्रसिद्ध था।

१३. गुलाबसिंह, ध्यानसिंह, सुचेतसिंह, हीरासिंह—ये जम्मू के राजघराने के थे। पहले-पहल गुलाबसिंह और ध्यानसिंह महाराजा की सवारी सेना में तीन रुपये प्रति-दिन पर नौकर हुए। इनके नाम पहली बार सं० १८७० वि० (१८१२-१३ ई०) के वेतन-पत्रों में आते हैं। अपनी बुद्धिमत्ता और योग्यता के प्रताप से उन्नति करते करते उच्च-पदवियों पर पहुँच गये। राजा ध्यानसिंह राज्य का मन्त्री बना और राजा गुलाबसिंह अन्त में जम्मू तथा काश्मीर का महाराजा बना और सुचेतसिंह अश्वारोही सेना के एक भाग अर्थात् ‘डैरा चारयारी’ का सेनापति नियुक्त हुआ। ध्यानसिंह के पुत्र हीरासिंह पर महाराजा की विशेष कृपा दृष्टि थी। महाराजा शेरसिंह की मृत्यु के पश्चात् हीरासिंह पंजाब सरकार का मन्त्री बना।

१४. दीवान भवानी दास—महाराजा रणजीतसिंह का वित्तमन्त्री था। इस के पूर्वज काबुल के बादशाहों के पास दीवानी के पद पर नियुक्त थे। भवानीदास महाराजा रणजीतसिंह की नौकरी में १८०६ ई० में आया और इसी ने आकर महाराजा के दरबार में दफ्तरी शासन की व्यवस्था की। चाहे यह कुछड़ा और कुछ कुरूप

था तो भी वे अमीरों की तरह ठाठ-बाठ से जीवन व्यतीत करता था। इसका दूसरा भाई दीवान देवीदास भी उच्च पद पर नियुक्त था।

१५. स० ज्वालासिंह—सरदार ज्वालासिंह भिड़ानिया या पधानिया स० मित्तसिंह का पुत्र था। पिता की जागीर के अतिरिक्त एक लाख पच्चीस हजार वार्षिक आय की जागीर इसे मिली हुई थी। मुलतान, काश्मीर तथा मनकेरा की लड़ाइयों में इसने विशेष सेवायें की थीं।

१६. स० दलसिंह नहेरना—महाराजा के प्रसिद्ध सरदार फतह सिंह नहेरना का दत्तक था। पिता की मृत्यु के पश्चात् समस्त सेना और जागीर का स्वामी बना। यह जागीर ३,५०,००० रु० वार्षिक से भी अधिक थी। वृद्ध होते हुए भी जवानों की तरह लड़ा करता था। सन् १८२३ ई० में टीहरी की लड़ाई में लड़ता हुआ मारा गया।

१७. निधानसिंह पंजहत्था—इस का नाम पंजहत्था (पांच हाथवाला) इस लिये पड़ा कि यह बहुत वीर योद्धा था। इस की दो बाहें औरों की पांच बाहों के समान थीं। युद्ध के अवसर पर सबसे आगे और वापसी पर सब से पीछे हुआ करता था। इसके शरीर पर तीर, तलवार गोली, बरछा और भाले के लगे हुए बहुत से चिह्न थे। आरम्भ में अशवारोही सेना में नौकर हुआ और धीरे धीरे उन्नति करते हुए सरदारी के पद पर जा पहुँचा। टिब्बा टीरी की लड़ाई में इस ने बहुत वीरता दिखाई थी।

सूचीपत्र नं०—६

महाराजा रणजीत सिंह के योरूपीय नौकरों की सूची

नोट—सं० १६२३-२४ में लेखक ने यह सूची महाराजा के सेना सम्बन्धी लेखपत्रों में से तैयार की थी।

न०	नाम	नौकर होने का सन	मासिक वेतन (रुपये में)	सन्निहित परिचय
१.	वन्तूरा (Jean Baptiste Ventura)	१८२२ ई	२,५००)	महाराजा रणजीतसिंह के प्रसिद्ध अफसरों में से था। कवायद जाननेवाली प्यादा सेना इसी की देख-रेख में तैयार हुई थी। यह लग-भग बीस वर्ष खालसा दरबार में नौकर रहा।
२.	इलार्ड (Jenn Francois Allard)	१८२२	२,५००)	जनरल इलार्ड और वन्तूरा इकट्ठे ही महाराजा के पास नौकर हुए थे। इसने महाराजा के लिए कवायद जाननेवाली घुड़-सवार सेना तैयार की थी। यह जनवरी सन् १८३६ ई० में मरा और लाहौर में दफनाया गया। यह और वन्तूरा दोनों पहले फ्रांस के सम्राट् नैपोलियन बोनापार्ट की सेना में नौकर थे।

न०	नाम	नौकर होने का सन्	मासिक वेतन (रुपयों में)	सक्षिप्त परिचय
३.	अबुतबेला Paolo De Avitabile)	१८२७	१६६६)	फौजी अफसर होने के अतिरिक्त वजीराबाद और पेशावर का राज्य-पाल भी नियुक्त हुआ था।
४.	मूसा उम्स (Musa Ums)	१८२७	१०००)	यह प्यादा सेनामें कमांडर के पद पर नियुक्त था।
५.	बैरन डी मेवियस (Baron De Mevius)	१८२७	७००)	प्यादा सेना में कमाण्डर के पद पर नियुक्त था।
६.	कोर्ट (Claude Auguste Court)	१८२७	१६६६)	यह भी महाराजा के प्रसिद्ध अफसरों में से था। यह तोपखाने का अफसर था।
७.	जान होम (John Holmes)	१८२६	१५०)	एक पलटन का कमाण्डर भरती हुआ था। यह धीरे धीरे उन्नति करता हुआ करनैल के पद तक जा पहुँचा था। कुछ समय के लिए गुजरात का राज्य-पाल भी रहा।
८.	डाक्टर मार्टन हानगबर्गर (Dr. Martin Honigberger)	१८३५	६००)	यह डाक्टर था। पन्द्रह वर्ष लाहौर दरबार में रहा। इसने एक पुस्तक के रूप में पंजाब का मनो-रंजक परिचय लिखा है।

न०	नाम	नौकर होने का सन् (रूपयो मे)	मासिक वेतन	सक्षिप्त परिचय
६.	गारडोना (Alexander Gardiner)	१८३१ ई.	१५०)	यह तोपखाने में नौकर था। बाद को राजा ध्यान सिंह की सेना में भरती हुआ। इस ने पजाब के विषय में मनोरंजक वृत्तान्त लिखे थे, जो पुस्तक के रूप में प्रकाशित थे। परन्तु इनकी सत्यता के विषय में सन्देह है।
१०.	कोर्टलैण्ड (Henry Charles Van Cortlandt)	१८३२	५००)	प्यादा सेना में नौकर था। इसकी पत्नी को भी महाराजा की ओर से ८००) रु० मासिक वजीफा मिलता था। सन् १८४२ ई० में इनके शिशु के लिए भी वजीफा नियत हुआ।
११.	लैसली (Leslie)	१८३४	१५०)	प्यादा सेना में नौकर था।
१२.	बैंकी (Signor Bianchi)	१८३५	२७०)	इसके धन्धे के विषय में महाराजा के लेखपत्रों में आबादकार लिखा मिलता है। मिस्टर गरे इसे इंजी-नियर लिखता है।

नं०	नाम	नौकर होने का सन् (रूपये में)	मासिक वेतन	सन्निहित परिचय
१३.	डॉटन वैंस (Dotten Weiss)	१८३४	४००)	तोपखाने में नौकर था। बरूद खाने का अफसर था। यह केवल कुछ महीनों के लिये ही लाहौर दरबार में रहा। बाद को हटा दिया गया।
१४.	हारलन Joish Horlan)	१८३४	१,०००)	नूरपुर जसरोटा और तदुपरान्त गुजरात का राज्यपाल नियुक्त हुआ। एक हारलन का ही ऐसा उदाहरण है जब कि महाराजा की नौकरी से किसी अफसर को बड़े अपमान से हटाया गया हो। विशेष वर्णन के लिए देखिये ज़फरनामा रणजीत सिंह, पृष्ठ २४३।
१५.	फोकस (Foulkes)	१८३६	५००)	सवारी सेना में नौकर था। सन् १८४१ में जब वह अपनी रैजमैन्ट के साथ मण्डी पहाड़ के अभियान पर गया था, तब उसके अपने सिपाहियों ने ही उसकी हत्या कर डाली थी।

न०	नाम	नौकर होने का सन्	मासिक वेतन रुपयो मे	सक्षित परिचय
१६.	अन्तागोर (Bendit D' Argoud)	१८३६	४००)	इसका यूरोपीय नाम आरगौण्ड था। यह प्यादा सेना में रंग-रूटों को कवायद सिखाने के काम पर नौकर रखा गया था। सन् १८४३ ई० में नौकरी से अलग किया गया।
१७.	स्टाईन बैक (Stein Bach)	१८३६	७००)	प्यादा सेना में नौकर था। इसने पंजाब के बारे में एक पुस्तक लिखी है।
१८.	फोर्ड (Mathew William Ford)	१८३७	८००)	प्यादा सेना में नौकर कमाण्डर के पद पर नियुक्त था।
१९.	लाफोंट (La Font)	१८३८	२७०)	जनरल अबुतबेला के अधीन पलटन में कमाण्डर था।
२०.	दिला रौस (De La Roche)	१८३८	५००)	प्यादा सेना में कमाण्डर के पद पर नियत था।

नं०	नाम	नौकर होने का सन	मासिक वेतन रुपये में	संक्षिप्त परिचय
२१.	जैकब (Jacob Thomas)	१८३८	३००)	नजीब पलटन में अमीर खाँ के साथ कमाण्डर के पद पर नियुक्त था।
२२.	डा० बैनेट (Dr. Benet)	१८३८	१,०००	यह व्यक्ति महा- राजा के दरबार में डाक्टर के रूप में नौकर था।
२३.	मोटन (Francois Mouton)	१८३८	८००)	यह सवारी सेना में नौकर था।
२४.	लुईडीफियो (Louis De Facieu)	१८४०	८००)	सवारी सेना में नौकर था।
२५.	जोझफडीफियो (Joseph De Facieu)	१८४०	३००)	लुईडीफियो का पुत्र था। पिता और पुत्र इकट्ठे नौकर थे।
२६.	हारवे (Harvey)	१८४०	७००)	यह डाक्टर था।

न०	नाम	नौकर होने का सन्	मासिक वेतन रुपयो मे	सक्षिप्त परिचय
२७.	कनोरा (Kanora)	१८४१	२००)	तोपखाने में नौकर था। सन् १८४८ ई० में सरदार चतुरसिंह गवर्नर हजारा की आज्ञा से गोली से मारा गया।
२८.	हरबन (Hurbons)	१८४२	२००)	यह बेलदारों में नौकर था।
२९.	कैनवत (Kenawitch)	१८४२	२५०)	यह तोपखाने में नौकर था।
३०.	ला फौन्ट द्वितीय (La Font II)	१८४३	८००)	यह पलटन में कमाण्डर था।
३१.	गारन (Garron or Corron or Gordon)	१८२०	१५०)	यह रंगरूटों को कवायद सिखाने पर नौकर रखा गया था।

सूचीपत्र नं०—७

निम्नलिखित सूची-पत्र में केवल उन पुस्तकों के नाम दिए गये हैं जिन का संकेत फुट-नोटों में किया गया है।

१. खालसा दरबार रिकार्ड केटालोग—प्रथम भाग १६२६ ई० और द्वितीय भाग सन् १६२७ ई०। ये दोनों पुस्तकें लेखक ने स्वयं संकलित की थीं और पंजाब गवर्नमेंट ने इन्हें प्रकाशित किया था।

पहली प्रति में महाराजा रणजीतसिंह तथा उसके उत्तराधिकारियों के ३० वर्ष के शासन काल स० १८७५-१८४६ ई० के सेना विभाग के सम्पूर्ण “बराबुर्द” अर्थात् Pay Rolls की टिप्पणी सहित सूची दर्ज है।

दूसरी प्रति में अधिकतर वित्त-विभाग के लेख-पत्रों की टिप्पणी सहित सूची दर्ज है। इसके अतिरिक्त घुड़चढ़ा सेना के वेतन-पत्र भी शामिल हैं। सब मिला कर पत्र-प्रमाणों की संख्या, तीन लाख तीस हजार के लगभग है।

सेना-विभाग के पत्रों में एक साधारण सिपाही से लेकर बड़े अफसर का नाम, निवास स्थान तथा मासिक वेतन लिखा है। इसी प्रकार वित्त-विभाग के लेख-पत्रों में सरकार खालसा की आय और व्यय का पाई-पाई का हिसाब दिया है।

यह सारी सामग्री खालसा राज्य समाप्त होने पर अंग्रेजों के हाथ आ गई थी। देश के बटवारे के समय (१६४७ ई०) लाहौर से लाकर यह रिकार्ड पूर्वी पंजाब के रिकार्ड आफिस सिमले में रख दिया गया है।

२. जफर नामा रणजीतसिंह—(दीवान अमरनाथ कृत)—सन् १८३३ तथा सन् १८३६ के मध्य में यह पुस्तक महाराजा

रणजीतसिंह के आज्ञानुसार फारसी भाषा में लिखी गई थी। अमरनाथ, राजा दीनानाथ वित्त-मन्त्री का पुत्र था। इस लिए यह स्वाभाविक था कि ठीक-ठीक बातों का उसे ज्ञान हो। इस पुस्तक को भी लेखक ने सन् १६२८ ई० में अंग्रेजी-टीका तथा टिप्पणी के साथ प्रकाशित करवाया।

३. उमदतुलतवारीख अर्थात् रोज़नामचा महाराजा रणजीतसिंह—(मुन्शी सोहनलाल प्रणीत)—यह पुस्तक फारसी भाषा में लिखी हुई है और महाराजा के इतिहास के लिए एक बहुमूल्य भण्डार है। मुन्शी सोहनलाल महाराजा के दरबार में वकाये नवीस (घटना-लेखक) के पद पर नियुक्त था। वह नित्य-प्रति दरबार के समाचार लिखा करता था। इसकी एक हस्तलिखित प्रति कप्तान वेड सन् १८३१ ई० में विलायत ले गया था जो अभी तक लन्दन में विद्यमान है। यह पुस्तक सन् १८८५ ई० में पंजाब यूनिवर्सिटी की सहायता से मुन्शी सोहनलाल के पोते लाला हरभगवान ने प्रकाशित की थी और अब बिलकुल ही दुर्लभ है।

४. पंजाब चीफस—(लैपल ग्रिफन प्रणीत)—यह पुस्तक पहले-पहल सन् १८६५ ई० में छपी थी। लैपल ग्रिफन पंजाब सरकार का प्रधान सचिव था। उप-राज्यपाल राबर्ट मिन्टगुमरी की आज्ञा से यह पुस्तक लिखी गई थी। इसमें महाराजा के दरबारियों, अन्य अमीरों और सिक्ख सरदारों के परिचय दिये गये हैं। बहुत से लोग जिन्होंने महाराजा रणजीतसिंह का समय स्वयं देखा था, अभी जीवित थे। लैपल ग्रिफन ने इस पुस्तक में लिखी हुई सभी बातें इन लोगों से खोज करके प्राप्त की थीं। हम ने सन् १८६५ ई० वाले संस्करण का निर्देश किया है।

५. तारीख महाराजा रणजीतसिंह—(प्रिंसिप कृत Ranjeet Singh and Origin and Rise of Sikh Power इ)—य

पुस्तक महाराजा के जीवन काल में लिखी और सन १८३४ ई० में प्रकाशित हुई थी। जहां तक इस पुस्तक में दी गई घटनाओं का सम्बन्ध है। यह विश्वस्त और प्रामाणिक हैं।

६. हिस्टरी आफ दी सिखस—(कैप्टन कनिंघमकृत) यह पुस्तक पहले-पहल सन १८४६ ई० में छपी थी। जहां तक अंगरेजों और लाहौर दरबार का सम्बन्ध है, इस से अधिक प्रामाणिक कोई दूसरी पुस्तक अब तक हमारी दृष्टि में नहीं आई। हमने सन १६१६ ई० के सम्स्करण का, जिसे प्रोफ़ेसर गैरट (Garret) ने छपवाया था, उद्धृत किया है।

७. सिखस ऐण्ड दी अफगानज (Sikhs and the Afghans) (शहामतअलीकृत)—शहामतअली दिसम्बर सन् १८३८ अंग्रेजी शिष्टमण्डल के साथ अफगानिस्तान जाता हुआ महाराजा के पास कुछ समय के लिये लाहौर ठहरा था और दो एक वर्ष उपरान्त उस ने अंग्रेजी भाषा में लिखा हुआ अपना रोजनामचा छपवाया था।

८. तारीख पंजाब (सैयद मुहम्मदलतीफ कृत)—यह पुस्तक सन् १८६१ ई० में छपी गई थी। ग्रंथकर्त्ता ने बहुत सी पुस्तकों के अध्ययन के बाद यह पुस्तक लिखी थी।

९. अहमद शाह बटालवी—यह पुस्तक अभी तक पांडुलिपि के रूप में ही है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह विश्वस्त है। अहमदशाह बटाला का रहने वाला था और उसे इतिहास तथा भूगोल में विशेष रुचि थी। हम ने जो पाण्डुलिपि देखी है, वह दयालसिंह लायब्रेरी लाहौर में थी।

१०. फैमली मैनुसक्रिप्ट—(Family Manuscript)—इस पाण्डुलिपि में नवाब मुजफ्फर खां के वंश का वृत्तान्त फारसी भाषा में है। इसे हो न हो नवाब के पुत्र सरफरोज खा ने स्वयं अथवा उसके परिवार के किसी व्यक्ति या सामन्त ने लिखा था। हमें सरफराज खा के परिवार के एक व्यक्ति अब्दुल्ला जान ने, जो कि गवर्नमेन्ट कालिज लाहौर में पढ़ा करता था, यह पाण्डुलिपि पढ़ने के लिए दी थी।

११. यूरोपियन ऐडवचरर्ज—(European Adventurers) (सी० टी० ग्रेकृत) इस पुस्तक में इधर उधर से इकट्ठा करके उन यूरोपियनों का वृत्तान्त दिया गया है, जो किसी समय महाराजा के पास नौकर थे।

१२. महाराजा रणजीतसिंह (बाबा प्रेमसिंह होतीकृत)—यह पुस्तक पंजाबी भाषा और गुरुमुखी लिपि में है। बाबा प्रेमसिंह ने बड़े परिश्रम से यह पुस्तक लिखी है।

१३. पेशावर गजेटियर—सन् १८६७-६८ ई०

१४. मुलतान गजेटियर—

१५. हरिसिंह नलवा अथवा जंग पेशावर माबैन सिक्ख व पठानां—(मिश्र हरिचन्द उपनाम कादरयार प्रणीत) मिश्र हरिचन्द जालंधर के राज्यपाल मिश्र रूपलाल के वंश से था। रूप लाल का भाई मिश्र बेलीराम था जिस के संरक्षण में महाराजा का कोष था। जिसमें प्रसिद्ध हीरा कोहनूर रखा करता था। यह कविता (किस्सा) सन् १६२४ ई० पंजाबी भाषा में छपी थी। मिश्र हरीचन्द जो मेरे अच्छे मित्र थे। अब यह पुस्तक नहीं मिलती।

१६. आरमी आफ़ दी इण्डियन मुगलज़—(विलियम इरवन प्रणीत)—**Army of the Indian Mughals by William Irwine.**

१७. महाराजा रणजीतसिंह—(प्रो० सीताराम कोइली प्रणीत)
—हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद १९५६।

१८. हिन्दी शब्दार्थ पारिजात—(द्वारिकाप्रसाद कृत)—

१९. गुरु शब्द रत्नाकर महाकोष—(भाई काहनसिंह कृत)—

२०. राजाज़ आफ़ दी पंजाब—(**Rajas of the Panjab**)
सर पैपल प्रिफ़्न कृत।

— — —

by Sita Ram Kohli

- 1 Annotated Catalogue of the Khalsa Darbar Records
 - (a) Vol I—Relating to the Records of the Military Department of Khalsa Government (A D 1819—49)
Published by the Panjab Government, Lahore, 1919
 - (b) Vol II—Relating to the Revenue, Tosha Khana and Jagir Departments of the Khalsa Government (A D 1811—49) Published by the Panjab Government, Lahore 1927.

Since the partition of the Panjab (1947) this valuable Mss record was brought from Lahore and housed in the Record Office, Simla
- 2 Trial of Diwan Mul Raj (Governor of Multan, 1844—49), by a special Tribunal set up under order of Lord Dalhousie Published by the Panjab Government Record Office, Lahore 1932
- 3 Army of Maharaja Ranjit Singh—its Organization and Administration Published in the Journal of Indian History in a series of Papers I—VI, 1922—35.
- 4 Land Revenue Administration under Sikh Government, Journal of Panjab Historical Society, Lahore 1918
- 5 The Indus Valley Civilization—being three University Extension Lectures delivered in 1934
Published by the University of the Panjab, Lahore 1934.

6. History of India from beginning to A.D 1526
Published by Longmans, Green & Co Ltd Bombay

In Persian and Hindi

- 7 Zafar-nama Ranjit Singh by Diwan Amar Nath,
Persian Text with Notes and Introduction in English
Published by the Panjab University, Lahore 1928.
- 8 Maharaja Ranjit Singh in Hindi. Published by
Hindustani Academy, Allahabad 1956
- 9 Bhārat Kā Itihās from Beginning up to A.D. 1526.

In Panjabi

- 10 Fateh Nama Guru Khalsa Ji ka by Kavi Ganesh Das
Edited with Notes and Introduction Published by
the Panjabi Department Pepsu, Patiala, 1952
 11. Maharaja Ranjit Singh—Published by M/s. Atma
Ram and Sons, Delhi, 1953
 - 12 Shah Muhamrad's Ballad on the First Anglo-Sikh
war edited with Notes and Introduction Published
by the Panjabi Sahitya Akadamy, Ludhiana, 1957
-

